CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

रा वाद्धा

Ramesh Shwar Prasad
I.A. 2nd year - 1962

महाकवि श्रीभासविरचितं

स्वप्नवासवदत्तम्

(हिन्दीभाषान्तर—प्रसङ्गसहित-कठिनस्थलविवेचन—
टिप्पणी—भूमिकादिभिः सहः संस्कृतम्)

संस्कर्त्ता

श्रीजगदीशशास्त्री, एम० ए०,
एम० ओ० एल०, पी० ई० एस०

प्रकाशक

मोतीलाल बनारसीदास

प्रकाशक तथा पुस्तक-विक्रेता

बाँकीपुर : : पटना—४

द्वितीय संस्करण] [मूल्य १.७५ नये पैसे

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

annath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Ne

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

श्रीमहाकवि भासविरचितं

स्वप्नवासवदत्तम्

[हिन्दीभाषान्तर—प्रसङ्गसहितकठिनस्थलविवेचन—
टिप्पणी—भूमिकादिभिः सह संस्कृतम् ।]

संस्कर्त्ता
श्रीजगदीशशास्त्री, एम० ए०,
एम० ओ० एल०, पी० ई० एस०
आचार्य
शासकीय कला-विज्ञान-महाविद्यालय, दुर्ग (मध्यप्रदेश)

प्रकाशक
मोतीलाल बनारसीदास
पुस्तक-प्रकाशक तथा विक्रेता
बाँकीपुर, : : पटना—४
[मूल्य—१.७५ नये पैसे

gannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Ne

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

मुद्रक—तरुण भारत प्रेस, पटना—४

annath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Ne

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

अनुक्रमणिका

१. भूमिका—भास का महत्त्व; देशकाल-निर्णय; भास की कृतियाँ और उनका संक्षिप्त चरिचय; प्रमुख पात्रों का चरित्र-चित्रण।
२. स्वप्नवासवदत्त का मूल पाठ तथा उसका हिन्दी-भाषान्तर।
३. परीक्षोपयोगी कुछ अंशों की प्रसङ्ग-सहित व्याख्या।
४. टिप्पणियाँ

पात्र-परिचय

प्रमुख पात्र

उदयन—वत्सदेश का नृपति
यौगन्धरायण—उदयन का प्रधान मन्त्री
विदूषक—उदयन का नर्मसचिव
वासवदत्ता—अवन्तिराज प्रद्योत महासेन की पुत्री तथा वत्सनरेश उदयन की प्रिया
पद्मावती—मगधनरेश दर्शक की बहन तथा उदयन की पत्नी
आवन्तिका—आवन्तिका के वेष में वासवदत्ता।

सामान्य पात्र

चेटी, प्रतीहारी, धात्री, काञ्चुकीय आदि।

वे पात्र, जिनका केवल नाम-निर्देश किया गया है, किन्तु जो रंगमंच पर नहीं आते—

प्रद्योत महासेन—अवन्तिराज, वासवदत्ता के पिता
गोपालक और पालक—प्रद्योत महासेन के पुत्र
अंगारवती—प्रद्योत महासेन की पत्नी, वासवदत्ता की माता
दर्शक—मगधनरेश तथा पद्मावती का भ्राता
महादेवी—पद्मावती और दर्शक की माता
रुमण्वान्—उदयन का अमात्य
पुष्पकभद्र—उदयन का राजज्योतिषी।

gannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Ne

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

annath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Ne

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

भूमिका

महाकवि भास का महत्त्व

महाकवि कालिदास ने अपने नाटक 'मालविकाग्निमित्र' में 'प्रख्यातयश' भास का उल्लेख किया है। इससे स्पष्ट है कि कालिदास के समय में भास के नाटक ख्यात हो चुके थे।

'हर्षचरित' की भूमिका में बाणभट्ट ने भास के नाटक-गुणों का संक्षिप्त परिचय दिया है। बाण ने स्पष्ट लिखा है कि भास को अपने नाटकों से ख्याति मिली।

महाकवि राजशेखर ने 'स्वप्नवासवदत्त' की स्तुति की है। राजशेखर लिखते हैं कि भास के नाटकों की जब अग्नि-परीक्षा हुई तब केवल 'स्वप्नवासवदत्त' बचा, अन्य नाटक जल गये।

जयदेव कवि ने भास को कविता-कामिनी का हास कहा है—'भासोहासः।' हास्य के प्रतीकभूत विदूषक का जैसा अपूर्व अभिनय 'स्वप्नवासवदत्त' में मिलता है, वैसा किसी अन्य नाटक में नहीं मिलता।

भास का समय

भास के समय का निर्धारण सरल नहीं है। श्रीगणपति शास्त्री का विचार है कि भास कौटिल्य और पाणिनि से भी प्राचीन हैं। इनके मतानुसार भास का काल

gannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Ne

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

पाँचवीं शती ई० पू० है। डाक्टर बार्नेट इस विचार से सहमत नहीं हैं। उनका कथन है कि भास-नाटक-चक्र का कल्पित कवि भास वास्तव में सातवीं शती के एक केरलीय कवि से अभिन्न है।

डॉक्टर लेस्नी, प्रिन्ट्ज, बनर्जी, सुकथंकर आदि विद्वानों ने भास के नाटकों की भाषा-संबंधी अंतरंग-परीक्षा के आधार पर माना है कि भास कालिदास से प्राचीन हैं। भास का समय अधिकांश विद्वानों ने ईसा-पूर्व तीसरी शती माना है।

भास की कृतियाँ

भास ने तेरह नाटक लिखे हैं, जिनका विभाग इस प्रकार है—

१. प्रतिमा - (राम-वनवास से रावण-वध तक)
२. अभिषेक (राम का राज्याभिषेक)
३. पञ्चरात्र (महाभारत से सम्बद्ध)
४. मध्यमव्यायोग ,, ,, ,,
५. दूतघटोत्कच ,, ,, ,,
६. कर्णभार ,, ,, ,,
७. दूतवाक्य ,, ,, ,,
८. ऊरुभंग ,, ,, ,,
९. बालचरित (महाभागवत में वर्णित कृष्ण के बालचरित से सम्बद्ध)
१०. दरिद्रचारुदत्त (लोककथा पर आधारित)
११. अविमारक ,, ,, ,,
१२. प्रतिज्ञायौगन्धरायण (राजा उदयन की कथा पर आधारित)
१३. स्वप्नवासवदत्त ,, ,, ,, ,,

भास के नाटकों का संक्षिप्त परिचय

प्रतिमा

प्रतिमा नाटक में भास ने राम के वन-गमन की घटना से लेकर रावण की मृत्यु तक की घटनाओं का वर्णन किया है।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

प्राचीन काल में मृत राजाओं की प्रतिमाएँ मन्दिर में रखी जाती थीं। राजा दशरथ की मूर्त्ति भी इस रीति के अनुसार राज-मन्दिर में रखी गई। भरत मामा के घर से जब लौटे तब मन्त्री उन्हें उस राज-मन्दिर में ले गये। दशरथ की मूर्त्ति को वहाँ देखकर भरत को उनकी मृत्यु का भेद खुला। इसीसे इस नाटक का नाम 'प्रतिमा' हुआ।

अभिषेक

अभिषेक में किष्किन्धा, सुन्दर और लंका-कांडों के कथानक का तथा राम के अभिषेक का वर्णन मिलता है।

पञ्चरात्र

जब द्रोण ने दुर्योधन से पांडवों को आधा राज्य देने के लिए कहा तब दुर्योधन ने प्रतिज्ञा की कि पाँच रातों में यदि पांडव मिल गये तो मैं उन्हें आधा राज्य दे दूँगा। द्रोण के प्रयत्न से पांडव मिल गये और दुर्योधन ने उन्हें आधा राज्य दे दिया।

महाभारत में यह घटना नहीं मिलती। मध्यमव्यायोग, दूतघटोत्कच, कर्णभार, दूतवाक्य और ऊरुभंग—ये नाटक महाभारत की विशिष्ट घटनाओं से संबद्ध हैं।

बालचरित

यह नाटक कृष्ण के बालचरित से संबद्ध है।

दरिद्रचारुदत्त

इस नाटक में दरिद्र, किन्तु चरित्रवान् ब्राह्मण चारुदत्त और रूपवती नगर-वेश्या वसन्तसेना का विशुद्ध प्रेम वर्णित है।

अविमारक

इस नाटक में प्रेमकथा का चित्रण बहुत ही सुन्दर, सरस और सजीव है।

gannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Ne

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

प्रतिज्ञायौगंधरायण

वत्सराज उदयन को उज्जयिनी के नरेश महासेन ने कृत्रिम हाथी के छल से पकड़ लिया था। उदयन के नीति-निपुण मंत्री यौगंधरायण ने उदयन को ही बंधन से मुक्त नहीं किया, बल्कि राजकुमारी वासवदत्ता का भी कपट से अपहरण किया। इस रूपक में यौगंधरायण की छल-नीति का मनोहर ढंग से प्रदर्शन हुआ है।

स्वप्नवासवदत्त

इस नाटक में वत्सराज उदयन का मगध की राजकुमारी पद्मावती से विवाह का वर्णन मिलता है। वासवदत्ता के जीवित रहते उदयन दूसरा विवाह करना नहीं चाहते थे। मन्त्रियों ने वासवदत्ता को अग्निदाह में दग्ध घोषित करके और वासवदत्ता को छिपाकर उदयन का पद्मावती से विवाह योजित किया और पद्मावती के भाई राजा दर्शक की सहायता से आरुणि को परास्त किया। इस नाटक की सभी घटनाएँ स्वाभाविक हैं।

प्रमुख पात्रों के चरित्र

उदयन :

वत्सराज उदयन नायक है। वह संगीत-कला में अद्वितीय है। मृदुप्रकृति, दर्शनीय, कलासक्त आदि गुणों के कारण हम उसे 'धीरललित' नायक कह सकते हैं।

नाटक के पहले तीन अंकों में हम उसे मंच पर नहीं देखते। चौथे अंक में ही वह मंच पर आता है; किन्तु पहले, दूसरे और तीसरे अंकों में हम अन्य पात्रों के मुँह से उसका पर्याप्त परिचय प्राप्त कर लेते हैं।

पहले अंक में ब्रह्मचारी के मुँह से उसके चरित्र का कुछ ज्ञान हमें होता है। ब्रह्मचारी कहता है कि जब राजा ने सुना कि वासवदत्ता आग में जल गई, तब वह आग में कूदकर अपने प्राण देने को तैयार हो गया। उसके दर्द को ब्रह्मचारी ने उसी के शब्दों में व्यक्त किया है। "इह तया सह हसितम्, इह तया सह

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

कथितम्, इह तया सह पर्युषितम्, इह तया सह कुपितम्, इह तया सह शयितम्" आदि उदयन के परिदेवन हृदय पर एक तीव्र आघात पहुँचाते हैं।

वासवदत्ता के प्रति उदयन की इस मार्मिक संवेदना का तापसी पर भी गहरा प्रभाव पड़ा है। वासवदत्ता उदयन की प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकती। वह कहती है—

"स खलु गुणवान् नाम राजा य आगन्तुकेनाप्येवं प्रशस्यते।"

उसके रूप के बारे में तो चेटी ने उसे धनुष-बाण-रहित साक्षात् कामदेव माना है—"ननु रशचापहीनः कामदेवः।"

इन्हीं गुणों के कारण राजा दर्शक की बहिन पद्मावती उसपर मुग्ध है। वासवदत्ता ने पद्मावती के इस आकर्षण का समर्थन किया है—'अयमपि जन एवमुन्मादितः।'

वासवदत्ता की मृत्यु से दुःखित उदयन का पद्मावती के साथ शीघ्र विवाह कैसे हुआ? इसके उत्तर में दूसरे अंक में धाय कहती है—

"आगम प्रधानानि सुलभपर्यवस्थानानि महापुरुषहृदयानि भवन्ति।"

क्या उदयन ने स्वयं पद्मावती से विवाह करने का प्रस्ताव रखा? उत्तर में धाय का कहना है कि वे किसी अन्य प्रयोजन से वहाँ आये थे। उनकी कुलीनता, विज्ञान, आयु और रूप को देखकर महाराज दर्शक ने स्वयं उनसे अनुरोध किया। पद्मावती से विवाह हो जाने के बाद भी वे वासवदत्ता को भूले नहीं। इस संबंध में पद्मावती कहती है कि "वे अनुकूल नायक हैं। वासवदत्ता के गुणों का स्मरण करते हुए भी वे मेरे समक्ष आँसू नहीं बहाते।"

चौथे अंक में जब हम उदयन को प्रथम बार मंच पर देखते हैं तब हम उन्हें पद्मावती के प्रेम में मग्न पाते हैं। वे शेफालिका के पुष्पों से सुवासित प्रमदवन में भ्रमर-भ्रमरियों के परस्पर प्रेम की रीति में अपना मनोविनोद करते हैं। उन्हें मधुकर-मधुकरियों का वियोग सह्य नहीं है।

पद्मावती के प्रति उन्हें अगाध प्रेम है, किन्तु वह प्रेम वासवदत्ता की स्मृति को नहीं भुला सकता। दृढ़ प्रेम को भुलाना सरल नहीं है—

gannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Ne

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

'दुःखं त्यक्तं बद्धमूलोऽनुरागः'

वे गुणी हैं। गुणज्ञ भी हैं। वासवदत्ता के गुणों की पहचान रखते हैं।

विलासमय जीवन व्यतीत करने के फलस्वरूप आरुणि ने उनके राज्य का अधिकांश छीन लिया है। दर्शक की सहायता से जब वे आरुणि पर अभिमान करने को प्रस्तुत हैं तब उनकी उक्ति में ओजस्विता है। वहाँ भी उन्होंने अपनी उदारता का परिचय दिया है, शत्रु की वीरता को सराहा है–'तमारुणिं दारुणकर्मदक्षम्।'

महासेन प्रद्योत के सन्देश में उनकी वीरता की प्रशंसा है, किन्तु उदयन युद्ध में सफलता का श्रेय प्रद्योत, दर्शक, यौगन्धरायण और रुमण्वान् को देते हैं। इससे उनकी गुणज्ञता प्रकट होती है।

यौगन्धरायण :

यौगन्धरायण धैर्यशील, नीति-निपुण, दक्ष आयोजक, प्रत्युत्पन्नमति, गुणज्ञ, सतर्क और स्वामिभक्त मंत्री था। जब उसने देखा कि राज्य का अधिकांश भूभाग आरुणि ने छीन लिया है तब उसने मगधराज दर्शक से सहायता लेकर आरुणि को परास्त करने की योजना बनाई। वासवदत्ता के जीवित रहते उदयन दूसरा विवाह नहीं करना चाहते थे। इधर यौगन्धरायण की इच्छा थी कि मगधराज दर्शक की बहिन पद्मावती के साथ उदयन का विवाह हो जाय, जिससे दर्शक से सहायता मिल सके।

वह आशावादी था। उसे अपनी बुद्धि पर पूरा विश्वास था। उसमें धैर्य पराकाष्ठा को पहुँच गया था। योजना-निर्माण के साथ-साथ योजना को सफल बनाने की उसमें पूरी शक्ति थी।

'प्रतिज्ञायौगन्धरायण' से हमें ज्ञात होता है कि वह किस प्रकार उदयन को प्रद्योत के बंधन से छुड़ा लाया और साथ में वासवदत्ता का भी अपहरण किया। 'स्वप्नवासवदत्त' में उसका एकमात्र ध्येय शत्रु को हराकर राज्य का उद्धार करना है।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

प्रथम अंक से ही उसकी योजना का पूरा परिचय मिल जाता है। वासवदत्ता को पद्मावती के आश्रय में रखना अतीव बुद्धिमत्ता का कार्य था। उसकी आत्मा निर्भीक और निश्शंक थी।

प्रथम अंक के बाद हम उसे छठे अंक में देखते हैं। उसकी योजना सफल हो गई। वासवदत्ता की त्याग-वृत्ति ने उसकी योजना को सफल बनाया। उसने दर्शक की सहायता से रुमण्वान् के नेतृत्व में आरुणि पर विजय पाई। तो भी उदयन के समक्ष प्रकट होने के समय वह कुछ शंकित है। वह मन में कहता है—

प्रच्छाद्य राजमहिषीं नृपतेर्हितार्थं
कामं मया कृतमिदं हितमित्यवेक्ष्य।
सिद्धेऽपि नाम मम कर्मणि पार्थिवोऽसौ
किं वक्ष्यतीति हृदयं परिशङ्कितं मे॥

उदयन उसके गुणों से भलीभाँति परिचित हैं। यद्यपि वह वासवदत्ता के छिपाने और उसे पद्मावती के आश्रय में रखने के बारे में पूछता है तो भी उसे उस-पर पूरा भरोसा है। यौगन्धरायण के चरित्र का यथार्थ चित्रण तो उदयन के ही निम्नांकित पद्य से हो जाता है—

मिथ्योन्मादैश्च युद्धैश्च शास्त्रदृष्टैश्च मन्त्रितैः।
भवद्यत्नैः खलु वयं मज्जमानाः समुद्धृताः॥

विदूषक :

विदूषक का नाम वसंतक है। वह प्रायः राजा का मनोविनोद करता है। विकृत अंग, वाक्य और वेष से वह दर्शकों को हँसाता है। उसे भोजनभट्ट भी कहते हैं। मोदक उसे सदा ही प्रिय है।

नाटक में वह पहली बार चौथे अंक में आता है। पद्मावती के विवाह पर बहुत खा लेने के कारण उसे अजीर्ण हो गया है। वैसे तो वह महलों में रहता है, अंतःपुर की बावलियों में नहाता है, किन्तु अब पाचन-शक्ति के दुर्बल हो जाने से

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

उसे नींद नहीं आती। वह हँसाने में निपुण है। उदर-विकार के कारण उसे भोजन अभीष्ट नहीं। तभी तो वह दासी से कहता है—"सर्वमानयतु भवती वर्जयित्वा भोजनम्। अधन्यस्य मम कोकिलानामक्षिपरिवर्त्त इव कुक्षिपरिवर्त्तः संवृत्तः।"

उसकी कल्पनाएँ भी विचित्र हैं; सुनकर प्रत्येक श्रोता को हँसी आयेगी। चौथे अंक के प्रमदवन-दृश्य में देखिए—"उताहो असनकुसुमसञ्चित व्याघ्रचर्मावगुण्ठितमिव पर्वततिलकं नाम शिलापट्टकं गता भवेत्।"

इसी दृश्य में वह उड़ते हुए सारस पक्षियों की कतार को आकाश में फैली हुई बलदाऊ की भुजाओं से तुलना करता है। इसी प्रकार की कल्पनाएँ श्रोतागण को अवश्य ही मुग्ध करेंगी।

जब वह हँसाता है तब उसके हँसाने के कई प्रकार होते हैं। उनमें भ्रांति भी एक प्रकार है। पाँचवें अंक में पद्मावती सिर-दर्द से पीड़ित है। उदयन और वह—दोनों उसे देखने को जाते हैं। एक पुष्पमाला तोरण से गिरकर मार्ग में हवा के झकोरों से हिल रही है। वह उसे सर्प समझता है। अपने अनूठे अभिनय से दर्शकों को हँसाता है।

समुद्रगृह में जब वह उदयन को कहानी सुनाने लगता है तब वह भूल करता है—'नगर ब्रह्मदत्त, राजा काँपिल्य।' उदयन उसकी भूल को सुधारते हैं। वह उस सुधार को बार-बार रटता है—'राजा ब्रह्मदत्त, नगर काँपिल्य।' उसकी भूल दर्शकों को हँसाती है।

शीत से बचने के लिए वह अपनी चादर लाने जाता है। जब लौटकर आता है तब उदयन उससे कहते हैं कि वासवदत्ता जीवित है। जब वे शय्या पर सो रहे थे, शय्या से लटकते हुए उनके हाथ को वह शय्या पर रखकर कहीं चली गई। विदूषक इस बात को नहीं मानता और कहता है कि मित्र, तुमने अवन्ति-सुन्दरी नाम की यक्षिणी को देखा होगा, जो इस नगर में रहती है।

विदूषक को प्रायः भोजनभट्ट कहते हैं। पद्मावती के विवाह पर उसने बहुत खा लिया था; अतः उसके उदर में विकार हो गया। प्रमदवन में भी जब उदयन

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

उससे पूछते हैं कि तुझे कौन अधिक प्रिय है—अब पद्मावती अथवा तब वासवदत्ता ? वह उत्तर में कहता है कि उसे पद्मावती अधिक प्रिय है; क्योंकि वह उसे अच्छा भोजन खिलाती है—"स्निग्धेन भोजनेन मां प्रत्युद्गच्छति ।"

नाटकों में प्रायः विदूषक की दुर्दशा को दिखाकर दर्शकों का मनोरंजन किया जाता है । इस नाटक में भी उसकी दुर्दशा के कई उदाहरण मिलते हैं। प्रमदवन में धूप से बचने के लिए जब उदयन और विदूषक माधवीलता के मंडप में जाना चाहते हैं, तब पद्मावती की दासी मंडप की लता को हिला देती है, जिससे लता पर बैठे हुए भ्रमर विदूषक का पीछा करते हैं। वह चिल्लाता है—"दास्याः पुत्रैर्मधुकरैः पीडितोऽस्मि ।"

वसंतक एक प्रतिभाशाली व्यक्ति है । प्रमदवन में शेफालिका के गुच्छों में फूल न देखकर वह अनुमान लगाता है कि पद्मावती अवश्य वहाँ आई होगी और उसने शेफालिका के फूल चुने होंगे ।

इसी दृश्य में जब उदयन वासवदत्ता की याद में आँसू बहा रहा है, वह उसके लिए मुँह धोने का जल लाने जाता है । मार्ग में पद्मावती से भेंट हो जाने पर वह कहता है कि कास-फूलों की धूलि हवा से प्रेरित होकर उदयन की आँखों में आ गिरी । उनकी आँखों से आँसू बहने लगे हैं । उनके लिए मैं मुँह धोने का जल ला रहा हूँ ।

वह उदयन को उचित मंत्रणा भी देता है । दर्शक ने एक राजसभा बुलाई है—आरुणि पर आक्रमण करने के संबंध में विदूषक उदयन से कहता है कि हमें स्वयं ही दर्शक के साथ सभा में पहुँचना चाहिए । आमंत्रण की प्रतीक्षा करना ठीक नहीं । सभा का आयोजन करके दर्शक ने हमारा सम्मान किया है । अच्छा होगा कि हम स्वयं वहाँ पहुँचकर उसका सम्मान करें—"सत्कारो हि सत्कारेण प्रतीष्टः प्रीतिमुत्पादयति ।"

प्रतिभाशाली, प्रत्युत्पन्नमति और योग्य परामर्शदाता होने के साथ-साथ वह गंभीर भी है । वासवदत्ता की याद में जब उदयन अत्यंत दुःखित हैं, वह उन्हें धैर्य बँधाता है—'धारयतु धारयतु भवान् ।' स्वप्न-दृश्य में जब उदयन नहीं मानते

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

कि वासवदत्ता मर चुकी है तब वह कहता है—'मेदानीमनर्थं चिन्तयित्वा।' जब घोषवती वीणा को देखकर उदयन फिर व्यथित होते हैं तब वह कहता है—'अब आप अधिक संताप न करें।"

इस नाटक में विदूषक को बहुत कम स्थान मिला है। चौथे और पाँचवें अंक में हम उसे उदयन के साथ देखते हैं। छठे अंक के आरम्भ में हम फिर उसे मंच पर देखते हैं। वीणा-दर्शन से संतप्त उदयन को वह धैर्य बँधा रहा है। उदयन उसे कह रहे हैं कि तुम वीणा को कारीगरों से ठीक करा लाओ। विदूषक चला जाता है। उसके संबंध में हम फिर कुछ नहीं सुनते।

वासवदत्ता :

वासवदत्ता वत्सराज उदयन की पत्नी थी और मालव-देश के नरेश प्रद्योत महासेन की पुत्री थी। भास के 'प्रतिज्ञायौगन्धरायण' से हमें ज्ञात होता है कि उदयन कभी प्रद्योत के बंदी थे। वहाँ उन्होंने वासवदत्ता को संगीत की शिक्षा दी थी। उन दोनों का आपस में प्रेम इतना बढ़ गया कि जब मंत्री यौगन्धरायण ने उदयन को बन्धन से छुड़ाया तब वासवदत्ता उदयन के साथ चली आई।

स्वप्नवासवदत्त में उदयन को उस समय की याद आती है जब वासवदत्ता उदयन के सामने वीणा बजाती हुई अपनी सुध भूल जाती थी और उसका हाथ वीणा के तारों पर न पड़कर शून्य में ही चलता था।

उदयन के साथ आते समय उसे अपने बन्धुजनों की याद आई। उसकी आँखों में आँसू भर आये, पर उसने आँसुओं को उदयन की छाती पर ही गिराया।

वासवदत्ता के प्रेम में त्याग की भावना थी। उसने पतिहित को ही अपना हित समझा। जब देश का अधिकांश छिन गया, केवल कौशाम्बी बची, तब उसने पति के सम्मान और प्रजा के हित की रक्षा के लिए मन्त्री की योजना को सफल बनाने का भार अपने ऊपर लिया। उसकी दक्षता और त्याग हमारे हृदय में उसके प्रति अतुल श्रद्धा उत्पन्न करते हैं।

गुप्तवास का समय उसकी परीक्षा का काल था। ऐसी दशा में महान् पुरुषों का भी हृदय काँप उठता है। किन्तु नारी होकर भी उसने वह कार्य कर दिखाया,

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

जिसे कुशल पुरुष भी सरलता से नहीं कर सकता। उसने इस लोकोक्ति को पुष्ट किया कि प्रेम स्वयं मार्ग दिखलाता है और त्याग स्वयं सीख देता है।

उसने आत्माभिमान को कभी नहीं त्यागा, किन्तु बड़ों का सदा आदर किया। तपोवन के आश्रम में जब भट मार्ग से लोगों को हटाने लगे तब उससे नहीं रहा गया। वह बोल उठी—'परिश्रम से वैसा कष्ट नहीं होता जैसा अपमान से होता है।' तो भी पद्मावती के प्रति उसे घृणा नहीं हुई। पद्मावती राजकुमारी थी, उसके प्रति वासवदत्ता के मन में बहिन का-सा स्नेह उमड़ आया। वह उसकी कुलीनता, रूप और मधुर वाणी पर मुग्ध हो गई। जब उसे मालूम हुआ कि उसके पिता प्रद्योत अपने पुत्र गोपालक के लिए उसकी माँग कर रहे हैं तब उसने उसे अपना ही समझा। किन्तु जब दासी से उसे पता चला कि वह उदयन से विवाह करना चाहती है तब उसे आश्चर्य नहीं हुआ। वह पद्मावती की गुणज्ञता पर प्रसन्न हुई।

वासवदत्ता का नारी-हृदय अति कोमल था। उसने कई बार उदयन के दुःख में आँसू बहाये। पहले अंक में जब ब्रह्मचारी के मुँह से उसने उदयन की व्यथा सुनी, तब उसकी आँखें आँसुओं से भर गईं। चौथे अंक में भी उदयन को देखकर उसकी वैसी ही दशा हुई। किंतु ऐसे अवसर इस नाटक में नहीं आये जबकि पद्मावती को उसका व्यवहार बुरा लगा हो। दूसरे अंक में उसने पद्मावती से हँसी-मजाक भी किया है। पद्मावती गेंद खेल रही है। वासवदत्ता उससे कहती है—'बहिन! गेंद खेलते-खेलते ललाई के बढ़ जाने से तुम्हारे हाथ मानों पराये हो रहे हैं।' यहाँ 'रोग' से 'प्रेम' का अर्थ भी निकलता है और 'परकीय' शब्द से उदयन का भी संकेत होता है। इसी प्रकार 'अभित इव तेऽद्य वरमुख पश्यामि'—इस वाक्य में वर मुख का अर्थ 'सुन्दर मुख' अथवा 'वर का मुख' दोनों हो सकता है।

अज्ञातवास में रहस्य खुल जाने के कई अवसर आये हैं, किंतु वासवदत्ता ने अपने अज्ञातवास का रहस्य नहीं खुलने दिया। एक बार तो उसे झूठ भी बोलना पड़ा है। जब लता-मंडप के भीतर से वह उदयन को देखती है और उसकी आँखें आँसुओं से भर जाती हैं तब दासी को आश्चर्य होने लगता है। तब वासवदत्ता उत्तर में कहती है कि भ्रमरों ने कास के फूलों को हिला दिया है। मेरी आँखों में फूलों

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

की धूलि पड़ जाने से पानी भर आया है। इसी प्रकार जब धाय पद्मावती से कहती है कि तुम्हारा उदयन के साथ वाग्दान-सम्बन्ध हो गया तब वासवदत्ता कहती है—बहुत बुरा हुआ। जब धाय उससे पूछती है—क्यों? तब वह कहती है कि बुरा इसलिए हुआ कि उदयन, जो वासवदत्ता के लिए अति सन्तप्त थे, अब पद्मावती से विवाह करने को शीघ्र ही तैयार हो गये। उसी दृश्य में जब वह कहती है कि उदयन दर्शनीय हैं तब पद्मावती उससे पूछती है कि तुम कैसे जानती हो? वह घबराकर कहती है कि ऐसा उज्जयिनी के लोग कहते हैं। उसके प्रत्युत्पन्नमति होने के कई उदाहरण इस नाटक में मिलते हैं।

अज्ञातवास में उसे कुछ ऐसे भी अवसर मिले हैं, जब वह अकेले में अपना दुःख प्रकट कर सकी है। कैसे मार्मिक हैं उसके ये शब्द—"अहमपि शय्यायां दुःखं विनोदयामि यदि निद्रां न लभे।"

दैव की निष्ठुरता पर भी उसने दो आँसू बहाये हैं—'अहो अकरुणाः खल्वीश्वराः।' किन्तु अज्ञातवास में उसे उदयन का वास्तविक परिचय मिला है जब उदयन स्पष्ट शब्दों में कह देते हैं कि मुझे पद्मावती की अपेक्षा वासवदत्ता अधिक प्रिय है। अज्ञातवास भी इस प्रकार लाभदायक सिद्ध हुआ है। वह कहती है—'अज्ञातवासोऽप्यत्र बहुगुणः सम्पद्यते।'

स्वप्न-दृश्य में उदयन अर्धनिद्रा में उससे पूछ रहे हैं—"क्या तुम रुष्ट हो? यदि रुष्ट नहीं तो गहने क्यों नहीं पहनी?"

पद्मावती से व्याह होने के बाद भी वासवदत्ता के प्रति उदयन के ऐसे उद्गार उसके हृदय की दशा के परिचायक तो हैं ही, किन्तु इस बात के भी साक्षी हैं कि वासवदत्ता में कुछ अलौकिक, असाधारण आकर्षक गुण रहे होंगे, जिन्हें भुलाना उदयन के लिए अति दुष्कर था।

अन्त में वासवदत्ता के प्रकट होने पर पद्मावती लज्जित सी होकर वासवदत्ता से क्षमा चाहती है—"मैंने तुम्हारे साथ सखी के समान व्यवहार किया जबकि मुझे गुरुजन के सदृश व्यवहार करना था।" किन्तु वासवदत्ता जानती है कि इसमें पद्मावती का दोष नहीं। उसके प्रति वासवदत्ता का भगिनिका-स्नेह स्थिर रहता है।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

पद्मावती :

पद्मावती उदयन की पत्नी थी। वह इस नाटक की नायिका है। जब मंत्रियों की योजना के अनुसार वासवदत्ता अज्ञात होकर रहने लगी तब उदयन ने मंत्रियों के कथन पर विश्वास कर वासवदत्ता को ग्रामदाह में दग्ध हुआ समझा। फिर उसने राजा दर्शक की बहिन पद्मावती के साथ ब्याह किया। आरुणि पर विजय पाने के लिए दर्शक से संबंध जोड़ना आवश्यक था। प्राचीन साहित्यकारों के अनुसार उदयन-पद्मावती का ब्याह अर्थ-शृंगार कहलाता है।

तो भी पद्मावती में राजकुमारी के सभी आकर्षक गुण मिलते हैं। चौथे अंक में जब उदयन पद्मावती की अपेक्षा वासवदत्ता को अधिक महत्त्व देते हैं तब विदूषक पद्मावती को विशेष महत्त्व देता है। "तत्रभवती पद्मावती तरुणी, दर्शनीया, अकोपना, अनहङ्कारा, मधुरवाक्, सदाक्षिण्या। अयं चापरो महान् गुणः, स्निग्धेन भोजनं मां प्रत्युद्गच्छति कुत्र नु गतं आर्य वसन्तक इति।" विदूषक के इस कथन में सभी गुण आ जाते हैं।

उसके रूपवती होने की पुष्टि वासवदत्ता की उक्ति से भी होती है। पहले अंक में जब वासवदत्ता उसे देखती है तब वह मन में कहती है—"अभिजनानुरूप खल्वस्या रूपम्।" उदयन भी उसके रूप की प्रशंसा करते हैं—"रूपवती प्रिया को पाकर आज मेरा शोक मन्द-सा हो गया है।"

रूपवती तो वह है ही, किन्तु साथ ही वह मधुरभाषिणी भी है। जब वह तपोवन में तापसी को सविनय नमन करती है—'आर्ये वन्दे!' तब वासवदत्ता उसकी मधुर वाणी को सराहती है—'नहि रूपमेव वागपि खल्वस्या मधुरा।'

रूपवती और मधुरवाक् होने के साथ-साथ वह उदार भी है। कंचुकी उसे धर्मप्रिया कहता है। वह तपस्वियों को मनचाही वस्तुएँ देकर उन्हें सन्तुष्ट करने में ही अपना कल्याण समझती है। तपोवन में प्रायः प्रार्थी नहीं मिलते, किन्तु जब उसे प्रार्थी मिल जाता है, तब वह अपना तपोवन-आगमन सफल समझती है और जब कंचुकी प्रार्थी यौगन्धरायण की प्रार्थना को नहीं मानता, तब वह उससे कहती है—'आर्य! प्रथममुद्घोष्य कः किमिच्छतीत्युक्तमिदानीं विचारयितुम्।'

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

सहानुभूति और संवेदना उसकी नस-नस में भरी हैं। ब्रह्मचारी जब उदयन की वेदना का वर्णन करते-करते उसकी मूर्च्छा का वर्णन करता है तब वह घबरा जाती है।

मन्त्री यौगन्धरायण वासवदत्ता को आवन्तिका के वेष में धरोहर रखते हैं। वह धरोहर का पालन-पोषण बड़ी सावधानी से करती है। उसका व्यवहार सभी से अच्छा है। जब वासवदत्ता उससे मजाक करती है तब उसे बुरा नहीं लगता।

पद्मावती को मालूम है कि उदयन को वासवदत्ता अधिक प्रिय है। यद्यपि उदयन वासवदत्ता की याद में पद्मावती के सामने नहीं रोये, तो भी उसने उन्हें वासवदत्ता की याद में छिपकर रोते हुए देखा है, वासवदत्ता को अधिक गौरव देते हुए छिपकर सुना है। वह रुष्ट नहीं हुई। वह इसमें भी उदयन का बड़प्पन देखती है।

वासवदत्ता की स्मृति में उदयन रो रहे हैं। विदूषक मुँह धोने के लिए जल ला रहा है। पद्मावती को यह सब मालूम है तो भी जब विदूषक उससे कहता है कि कास के फूलों की धूलि उदयन की आँखों में पड़ गई है, मैं उनके लिए मुखोदक ला रहा हूँ, तब पद्मावती को बुरा नहीं लगता। वह कहती है—'अहो सदाक्षिण्यस्य जनस्य परिजनोऽपि सदाक्षिण्य एव भवति।'

उसका स्वभाव अति सरल है। वह जिसे अपना समझती है, उसपर पूरा विश्वास करती है, चाहे वह व्यक्ति उससे कपट ही क्यों न कर रहा हो। उदयन को देखकर वासवदत्ता की आँखें आँसुओं से भर जाती हैं। वासवदत्ता उसका यथार्थ कारण पद्मावती से छिपाना चाहती है और कहती है कि कास-पुष्प की धूलि के आँखों में पड़ने से मेरी आँखें आँसू से भर गई हैं। पद्मावती को उसके असत्य भाषण पर कुछ भी सन्देह नहीं होता।

पद्मावती शिरोवेदना से पीड़ित है। इससे न केवल उदयन, बल्कि वासवदत्ता भी चिन्तित है। उसके सरल स्वभाव पर उसका संपूर्ण परिवार मुग्ध है। जब महासेन प्रद्योत कंचुकी को धाय के साथ उदयन के पास भेजते हैं और उदयन पद्मावती से कहता है—'क्या तुमने सुना कि महासेन ने कंचुकी और धाय को

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

भेजा है', तब पद्मावती कहती है कि 'मुझे अपने बंधुओं का कुशल-वृत्तान्त सुनना अच्छा लगता है।' तो भी वह सन्देश सुनने के समय उदयन के पास ठहरना नहीं चाहती। किन्तु उदयन उसे अपने पास ही बिठाते हैं।

महासेन का संदेश क्या होगा ?—इसके बारे में वह उदयन से कम उद्विग्न नहीं है।

वासवदत्ता के चित्र को देखकर उसे एक साथ हर्ष और उद्वेग होते हैं। सम्भवतः उद्वेग इसलिए कि यदि आवन्तिका ही वासवदत्ता है तब उसने उसके साथ साधारण सखी-जैसा व्यवहार किया, जो उचित नहीं था। वासवदत्ता के प्रकट होने पर वह सिर झुकाकर क्षमा माँगती है। उसकी सरलता से प्रभावित होकर उदयन वासवदत्ता के पुनर्मिलन पर भी उसे नहीं भूलते। महासेन से मिलने को जब वे जाते हैं तब पद्मावती को भी साथ ले जाते हैं।

—०—

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

॥ श्रीः ॥

श्रीभासविरचितं

स्वप्नवासवदत्तम्

अथ प्रथमोऽङ्कः ।

(नान्द्यन्ते ततः प्रविशति सूत्रधारः)

सूत्रधारः —

उदयनवेन्दुसवर्णावासवदत्ताबलौ बलस्य त्वाम् ।
पद्मावतीर्णपूर्णौ वसन्तकम्रौ भुजौ पाताम् ॥१॥

(नान्दी के अनन्तर सूत्रधार का प्रवेश)

सूत्रधार—

नवोदित चन्द्रमा के समान उज्ज्वल (उदयनवेन्दुसवर्णौ), मदिरा-पान से सबल (आसवदत्ताबलौ), कमल के सदृश कोमल (पद्मावतीर्ण-पूर्णौ), वसन्त-ऋतु के तुल्य सुन्दर (वसन्तकम्रौ) बलराम की भुजाएँ (बलस्य भुजौ) आपकी रक्षा करें (त्वां पाताम्) ॥१॥*

---

*द्रष्टव्य—यहाँ पर 'आसवदत्ताबलौ' का विग्रह इस प्रकार होगा—आसवेन दत्तम् आसमन्ताद् बलं याभ्यां तौ । 'आसवदत्ताबलौ' का अन्य अर्थ भी हो सकता है—'मदिरा-पान से दुर्बल' । इस पक्ष में 'आसवदत्ताबलौ' का विग्रह इस प्रकार होगा—आसवेन दत्तम् अबलं याभ्यां तौ ।

'पद्मावतीर्णपूर्णौ' के भी दो अर्थ सम्भव हैं—(१) पद्मस्य अवतीर्णेन पूर्णौ—कमल की अवतीर्ण शोभा अथवा कोमलता से पूर्ण, अर्थात् कमल-तुल्य कोमल अथवा (२) पद्मायाः अवतीर्णेन पूर्णौ—लक्ष्मी की शोभा से युक्त ।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

एवमार्यमिश्रान् विज्ञापयामि । अये ! किन्नु खलु मयि विज्ञापनव्यग्रे शब्द इव श्रूयते ? अङ्ग ! पश्यामि ।

(नेपथ्ये)

उस्सरह उस्सरह अय्या ! उस्सरह ! [उत्सरतोत्सरतार्याः ! उत्सरत !]

सूत्रधारः—भवतु, विज्ञातम् ।

भृत्यैर्मगधराजस्य स्निग्धैः कन्यानुगामिभिः ।
धृष्टमुत्सार्यते सर्वस्तपोवनगतो जनः ॥२॥

(निष्क्रान्तः)

स्थापना

आप लोगों से मेरा यह निवेदन है—अये ! ज्योंही मैं आपलोगों से कुछ कहने लगा, यह कैसी आवाज कान में आ पड़ी ? अच्छा, देखता हूँ ।

(नेपथ्य में)

हटो, हटो; लोगो, हटो ।

सूत्रधार —अच्छा, समझ में आ गया ।

मगधराज के (मगधराजस्य) स्नेही (स्निग्धैः) सेवक (भृत्यैः), जो कि राजपुत्री के साथ आये हैं (कन्यानुगामिभिः), तपोवन के सभी लोगों को (सर्वः तपोवनगतः जनः) उद्दंडता से (धृष्टम्) हटा रहे हैं (उत्सार्यते) ॥२॥

(सूत्रधार चला जाता है)

(प्रस्तावना समाप्त)

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

(प्रविश्य)

भटौ—उस्सरह उस्सरह अय्या ! उस्सरह । [उत्सरतोत्सरतार्याः ! उत्सरत]

(ततः प्रविशति परिव्राजकवेषो यौगन्धरायण आवन्तिकावेषधारिणी वासवदत्ता च)

यौगन्धरायणः—(कर्णं दत्वा) कथमिहाप्युत्सार्यते ? कुतः—

धीरस्याश्रमसंश्रितस्य वसतस्तुष्टस्य वन्यैः फलै-
र्मानार्हस्य जनस्य वल्कलवतस्त्रासः समुत्पाद्यते ।
उत्सिक्तो विनयादपेतपुरुषो भाग्यैश्चलैर्विस्मितः
कोऽयं भो निभृतं तपोवनमिदं ग्रामीकरोत्याज्ञया ॥३॥

(प्रवेश करके)

दोनों सिपाही—हटो, हटो; लोगो, हटो ।

(संन्यासी के वेष में यौगन्धरायण और अवन्ति देश की नारी के वेष में वासवदत्ता का प्रवेश)

यौगन्धरायण—(कान लगाकर) क्या यहाँ भी लोगों को हटाया जा रहा है ?

तपोवन में रहनेवाले (वसतः), वानप्रस्थ अथवा संन्यासी (आश्रमसंश्रितस्य), वन के फूलों से सन्तुष्ट (वन्यैः फलैः तुष्टस्य), सम्मान योग्य (मानार्हस्य), वल्कलधारी (वल्कलवतः) धीर मनुष्य को (धीरस्य जनस्य) क्योंकर (कुतः) डराया जा रहा है (त्रासः समुत्पाद्यते) ? अहो ! कौन है यह (भोः कोऽयम्) घमंडी पुरुष (उत्सिक्तः), जिसके सेवक उद्दंड हैं (विनयात् अपेतपुरुषः), जो चंचला लक्ष्मी से गर्वित होकर (चलैः भाग्यैः विस्मितः) इस शान्त तपोवन को (इदं निभृत तपोवनम्) (अपने) आदेशों से (आज्ञया) गाँव बना रहा है (ग्रामीकरोति) ? ॥३॥

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

वासवदत्ता—अय्य ! को एसो उस्सारेदि ? [आर्य ! क एष उत्सारयति ?]

यौगन्धरायणः—भवति ! यो धर्मादात्मानमुत्सारयति ।

वासवदत्ता—अय्य ! णहि एव्वं वत्तुकामा, अहंवि णाम उस्सारइदव्वा होमित्ति । [आर्य ! नह्येवं वक्तुकामा, अहमपि नामोत्सारयितव्या भवामीति ।]

यौगन्धरायणः—भवति ! एवमनिर्ज्ञातानि दैवतान्यवधूयन्ते ।

वासवदत्ता—अय्य ! तह परिस्समो परिखेदं ण उप्पादेदि जह अअं परिभवो । [आर्य ! तथा परिश्रमः परिखेदं नोत्पादयति यथायं परिभवः]

यौगन्धरायणः—भुक्तोज्झित एष विषयोऽत्रभवत्या, नात्र चिन्ता कार्या । कुतः—

वासवदत्ता—आर्य ! यह कौन हटा रहा है ?

यौगन्धरायण—आर्ये ! जो अपनेको धर्म से हटा रहा है ।

वासवदत्ता—आर्य ! मेरे कहने का यह तात्पर्य नहीं । मैं पूछती हूँ—क्या मैं भी हटाई जाऊँगी ?

यौगन्धरायण—अज्ञात देवताओं का भी अपमान हो जाता है ।

वासवदत्ता—आर्य ! परिश्रम मुझे वैसा कष्ट नहीं देता जैसा कि यह अपमान ।

यौग०—आपने भी इस प्रकार को पहले अपनाया था, अब त्याग दिया । इसकी चिन्ता करना व्यर्थ है । क्योंकि—

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

पूर्वं त्वयाप्यभिमतं गतमेवमासी-
च्छ्लाघ्यं गमिष्यसि पुनर्विजयेन भर्त्तुः ।
कालक्रमेण जगतः परिवर्त्तमाना
चक्रारपङ्क्तिरिव गच्छति भाग्यपङ्क्तिः ॥४॥

भटौ—उस्सरह अय्या ! उस्सरह ! [उत्सरतार्याः ! उत्सरत ।]

(ततः प्रविशति काञ्चुकीयः)

काञ्चुकीयः—सम्भषक ! न खलु न खलूत्सारण कार्या । पश्य—

परिहरतु भवान् नृपापवादं
न परुषमाश्रमवासिषु प्रयोज्यम् ।
नगरपरिभवान् विमोक्तुमेते
वनमभिगम्य मनस्विनो वसन्ति ॥५॥

आपको भी (त्वया अपि) पहले (पूर्वम्) इस प्रकार चलना (एव गतम्) अभीष्ट था (अभिमतम् आसीत्)। पति की विजय होने पर (भर्त्तुः विजयेन) आप फिर (पुनः) (उसी प्रकार) गौरव से चलोगी (श्लाघ्यं गमिष्यसि)। समय के बदलने से (कालक्रमेण) बदलनेवाली (परिवर्त्तमाना) संसार की भाग्यदशा (जगतः भाग्यपङ्क्तिः) चक्र के अरों की भाँति (चक्रारपङ्क्तिः इव) चलती है (गच्छति) ॥४॥

दोनों सिपाही—हटो, लोगो, हटो ।

(कंचुकी का प्रवेश)

कंचुकी—संभषक ! हटाओ नहीं, हटाओ नहीं, देखो—

आप (भवान्) राजा की निंदा (नृपापवाद) न होने दें (परिहरतु) । आश्रमवासियों के प्रति (आश्रमवासिषु) कठोर व्यवहार (परुषम्) नहीं करना चाहिए (न प्रयोज्यम्)। ये सदाचारी लोग (एते मनस्विनः) नगर के अपमानों से बचने के हेतु (नगरपरिभवान् विमोक्तुम्) वन में आकर (वनम् अभिगम्य) रहते हैं (वसन्ति) ॥५॥

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

उभौ—अय्य ! तह । [आर्य ! तथा]

(निष्क्रान्तौ)

यौगन्धरायणः- हन्त ! सविज्ञानमस्य दर्शनम् । वत्से ! उपसर्पावस्तावदेनम् ।

वासवदत्ता - अय्य ! तह । [आर्य ! तथा ।]

यौगन्धरायणः—(उपसृत्य) भोः ! किङ्कृतेयमुत्सारणा ?

काञ्चुकीयः - भोस्तपस्विन् !

यौगन्धरायणः—(आत्मगतम्) तपस्विन्निति गुणवान् खल्वयमालापः । अपरिचयात्तु न श्लिष्यते मे मनसि ।

काञ्चुकीयः - भोः ! श्रूयताम् । एषा खलु गुरुभिरभिहितनामधेयस्यास्माकं महाराजदर्शकस्य भगिनी पद्मावती नाम । सैषा नो

दोनों सिपाही—आर्य ! अच्छा । (दोनों चले जाते हैं)

यौग०—अहा ! (कैसे) अच्छे हैं इसके विचार ! बेटी ! चलो, इसके पास चलें ।

वासव०—आर्य ! अच्छा ।

यौग०—(पास जाकर) लोगों को क्यों हटाया जा रहा है ?

कंचुकी—तापस !

यौग०—(मन में) 'तापस' शब्द से आमंत्रण प्रशंसा प्रकट करता है, किन्तु ऐसा आमंत्रण कभी पहले किसी ने नहीं किया, अतः मुझे अच्छा नहीं लगता ।

कंचुकी—सुनिए । यह हमारे महाराज दर्शक की, जिनका 'दर्शक' नाम गुरुजनों ने (यथार्थ ही) रखा है, बहिन पद्मावती है । यह

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

महाराजमातरं महादेवीमाश्रमस्थामभिगम्यानुज्ञाता तत्रभवत्या राजगृहमेव यास्यति। तदद्यास्मिन्नाश्रमपदे वासोऽभिप्रेतोऽस्याः। तद् भवन्तः —

तीर्थोदकानि समिधः कुसुमानि दर्भान्
स्वैरं वनादुपनयन्तु तपोधनानि।
धर्मप्रिया नृपसुता नहि धर्मपीडा-
मिच्छेत् तपस्विषु कुलव्रतमेतदस्याः ॥६॥

यौगन्धरायणः—(स्वगतम्) एवम्! एषा सा मगधराजपुत्री पद्मावती नाम, या पुष्पक भद्रादिभिरादेशिकैरादिष्टा स्वामिनो देवी भविष्यतीति। ततः —

प्रद्वेषो बहुमानो वा सङ्कल्पादुपजायते।
भर्तृदाराभिलाषित्वादस्यां मे महती स्वता ॥७॥

हमारे महाराज की वानप्रस्था माता महादेवी से मिलकर और उनकी आज्ञा पाकर राजगृह को ही लौट रही हैं। तो आज यह इसी आश्रम में रहना चाहती हैं। अतः आप—

तीर्थजल (तीर्थोदकानि), लकड़ी (समिधः), फूल (कुसुमानि) और कुश आदि (दर्भान्) तपस्या की सामग्री को (तपोधनानि) यथेष्ट (स्वैरम्) वन से ले आवें (वनाद् उपनयन्तु)। राजकुमारी (नृपसुता) धर्मप्रिया है। यह तपस्वियों के धर्मकार्य में विघ्न (तपस्विषु धर्मपीडाम्) नहीं डालना चाहती (नहि इच्छेत्)। यह (एतत्) इसका (अस्याः) कुल-क्रमागत व्रत है (कुलव्रतम्) ॥६॥

यौग०—(मन में) ऐसा! यह वही मगध की राजकुमारी पद्मावती है, जो पुष्पकभद्र आदि ज्योतिषियों के कथनानुसार महाराज उदयन की रानी होगी। क्योंकि—

वैर (प्रद्वेषः) अथवा सम्मान (बहुमानो वा) मन के संकल्प से होता है (संकल्पादुपजायते)। क्योंकि मैं चाहता हूँ कि यह हमारे स्वामी की पत्नी बने। अतः (भर्तृदाराभिलाषित्वाद्) इसमें (अस्यां) मुझे महान् अपनापन हो रहा है (मे महती स्वता) ॥७॥

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

वासवदत्ता—(स्वगतम्) राअदारिअत्ति सुणिअ भइणिआसिणेहो वि मे एत्थ संपज्जइ। [राजदारिकेति श्रुत्वा भगिनिकास्नेहोऽपि मेऽत्र सम्पद्यते]

(ततः प्रविशति पद्मावती सपरिवारा चेटी च)

चेटी—एदु एदु भट्टिदारिआ, इदं अस्समपदं पविसदु। [एत्वेतु भर्तृदारिका, इदमाश्रमपदं प्रविशतु]

(ततः प्रविशत्युपविष्टा तापसी)

तापसी—साअदं राअदारिआए। [स्वागतं राजदारिकायै]

वासवदत्ता—(स्वगतम्) इअं सा राअदारिआ। अभिजणाणुरूवं खु से रूवं। [इयं सा राजदारिका। अभिजनानुरूपं खल्वस्या रूपम्।]

पद्मावती—अय्ये ! वदामि। [आर्ये, वन्दे !]

तापसी—चिरंजीव। पविश जादे। तवोवणाणि णाम अदिहिजणस्स सअगेहं। [चिरं जीव। प्रविश। तपोवनानि नामातिथिजनस्य स्वकंगेहम्।

वासवदत्ता—(मन में) 'पद्मावती राजकुमारी है'—यह सुनकर मेरा इसमें बहिन का-सा स्नेह हो रहा है।

(सखियों-सहित पद्मावती का तथा उसकी दासी का प्रवेश)

दासी—आइए, राजकुमारी जी, आइए। इस आश्रम में प्रवेश कीजिए।

(बैठी हुई तापसी का प्रवेश)

तापसी—राजकुमारी ! आपका स्वागत है।

वासवदत्ता—(मन में) यह वही राजकुमारी है। ठीक इसका रूप उच्च कुल के अनुरूप है।

पद्मावती—आर्ये ! मैं आपको प्रणाम करती हूँ।

तापसी—चिरकाल तक जीओ, वत्से ! आओ, तपोवन तो अभ्यागतों का अपना घर है।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

पद्मावती—भोदु भोदु। अय्ये! विस्सत्थम्हि। इमिणा बहुमाणव-अणेण अणुग्गहिदम्हि। [भवतु भवतु। आर्ये! विस्वस्तास्मि। अनेन बहुमानवचनेनानुगृहीतास्मि।]

वासवदत्ता—(स्वगतम्) णहि रूवं एव्व, वाआ वि खु से महुरा। [नहि रूपमेव वागपि खल्वस्या मधुरा।]

तापसी—भद्दे! इमं दाव भद्दमुहस्स भइणिअं कोच्चि राआ ण वरेदि? [भद्रे! इमां तावद् भद्रमुखस्य भगिनिकां कश्चिद् राजा न वरयति?]

चेटी—अत्थि राआ पज्जोदो णाम उज्जणीए। सो दारअस्स कारणादो दूदसम्पादं करेदि। [अस्ति राजा प्रद्योतो नामोज्जयिन्याः। स दारकस्य कारणाद् दूतसम्पातं करोति।]

वासवदत्ता—(आत्मगतम्) भोदु भोदु। एसा अ अत्तणीआ दाणिं सवुत्ता। [भवतु भवतु। एषा चात्मीयेदानीं संवृत्ता।]

तापसी—अर्हा खु इअं आइदी इमस्स बहुमाणस्स। उभआणि राअउलाणि महत्तराणि त्ति सुणीअदि। [अर्हा खल्वियमाकृतिरस्य बहुमानस्य। उभे राजकुले महत्तरे इति श्रूयते।]

पद्मावती—अच्छा, आर्ये! मैं निश्चिन्त हो गई। आपके इस आदरसूचक वचन से मैं कृतकृत्य हो गई।

वास०—(मन में) केवल रूप ही नहीं, इसकी वाणी भी मधुर है।

तापसी—भद्रे! क्या कोई राजा हमारे भद्रमुख राजा की बहिन की माँग नहीं करता?

दासी—उज्जयिनी का राजा प्रद्योत है। उसने अपने पुत्र के लिए दूत भेजा है।

वास०—(मन में) यह तो अब मेरी अपनी हो गई।

तापसी—सचमुच यह आकृति इस सम्मान के योग्य ही है। सुना जाता है कि दोनों राजकुल बड़े ऊँचे हैं।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

पद्मावती—अय्य ! किं दिट्ठो मुणिजणो अत्ताणं अणुग्गहीदुं। अभिप्पेदप्पदाणेण तवस्सिजणो उवणिमंतीअदु दाव को किं एत्थ इच्छदित्ति। [आर्य ! किं दृष्टो मुनिजन आत्मानमनुग्रहीतुम् ? अभिप्रेतप्रदानेन तपस्विजन उपनिमन्त्र्यतां तावत् कः किमत्रेच्छतीति।]

कञ्चुकीयः—यदभिप्रेतं भवत्या। भोः भोः आश्रमवासिनस्तपस्विनः ! शृण्वन्तु शृण्वन्तु भवन्तः, इहात्रभवती मगधराजपुत्री अनेन विस्रम्भेणोत्पादितविस्रम्भा धर्मार्थमर्थेनोपनिमन्त्रयते।

कस्यार्थः कलशेन को मृगयते वासो यथानिश्चितं
दीक्षां पारितवान् किमिच्छति पुनर्देयं गुरोर्यद् भवेत्।
आत्मानुग्रहमिच्छतीह नृपजा धर्माभिरामप्रिया
यद्यस्यास्ति समीप्सितं वदतु तत् कस्याद्य किं दीयताम् ॥८॥

पद्मावती—आर्य ! क्या कोई ऐसा मुनि मिला है, जो (कुछ वस्तु लेकर) हमें अनुगृहीत करे। जो वस्तु उन्हें चाहिए, वह मिलेगी; ऐसा कहकर मुनियों से पूछो कि कौन-सी वस्तु किसे चाहिए।

कञ्चुकी—जैसा आप चाहती हैं, वैसा ही होगा। आश्रमवासी मुनियो ! आप सुन लें कि यह मगधराजकुमारी आपके द्वारा किये गये अभिनन्दन से अभिनन्दित होकर धर्मलाभ के लिए दान देने को आमंत्रित करती है—

किसे (कस्य) कलश चाहिए (कलशेन अर्थः) ? कौन (कः) वस्त्र चाहता है (वासः मृगयते) ? किसने अपनी निश्चित शिक्षा को (यथानिश्चितं) शिक्षा को समाप्त किया है (दीक्षां पारितवान्)। वह क्या चाहता है (पुनः किम् इच्छति), जो उसे गुरुदेव को देना है (यद् गुरोः देयं भवेत्) ? धार्मिक जनों में श्रद्धालु राजकुमारी (धर्माभिरामप्रिया नृपजा) इस आश्रम में (इह) अपना कल्याण (आत्मानुग्रहम्) चाहती है (इच्छति)। जो वस्तु (यद्) जिसे (यस्य) चाहिए (समीप्सितम् अस्ति।) वह कहे, किसे (कस्य) आज (अद्य) क्या दिया जाय (किं दीयताम्)?॥८॥

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

यौगन्धरायणः—हन्त ! दृष्ट उपायः । (प्रकाशम्) भोः ! अहमर्थी ।

पद्मावती—दिट्ठिया सहलं मे तपोवणाभिगमणं । [दिष्ट्या सफलं मे तपोवनाभिगमनम् ।]

तापसी—संतुट्ठतवस्सिजणं इदं अस्समपदं । आअंतुएण इमिणा होदव्वं । [सन्तुष्टतपस्विजनमिदमाश्रमपदम् । आगन्तुकेनानेन भवितव्यम् ।]

कञ्चुकीयः—भोः किं क्रियताम् ?

यौगन्धरायणः—इयं मे स्वसा । प्रोषितभर्तृकामिमामिच्छाम्यत्रभवत्या कञ्चित् कालं परिपाल्यमानाम् । कुतः—

कार्यं नैवार्थैर्नापि भोगैर्नवस्त्रै-
र्नाहं काषायं वृत्तिहेतोः प्रपन्नः ।

यौग०— (मन में) अहा ! मुझे अच्छा उपाय मिला । (प्रकट) अजी ! मैं प्रार्थी हूँ ।

पद्मा०—मैं कृतार्थ हुई । तपोवन में मेरा आना सफल हुआ ।

तापसी—इस आश्रम के सब तापस सन्तुष्ट हैं । यह कोई बाहर से आया होगा ।

कञ्चुकी—तो तुम्हें क्या चाहिए ?

यौग०—यह मेरी बहिन है । इसका पति परदेश गया है । मैं चाहता हूँ कि कुछ समय के लिए राजकुमारी इसे अपनी देखरेख में रखे । क्योंकि—

मुझे न धन से प्रयोजन है (अर्थैः नैव कार्यम्), न भोग्य वस्तुओं से (नापि भोगैः), न वस्त्रों से (न वस्त्रैः) । जीविका के लिए (वृत्तिहेतोः) मैंने गेरुआ वस्त्र (अहम् काषायम्) नहीं पहना है (न प्रपन्नः) ।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

धीरा कन्येयं दृष्टधर्मप्रचारा
शक्ता चारित्रं रक्षितुं मे भगिन्याः ॥९॥

वासवदत्ता—(आत्मगतम्) हं, इह मं णिक्खिविदुकामो अय्य-यौगंधरायणो ? होदु, अविआरिअ कमं ण करिस्सदि । [हम्, इह मां निक्षेप्तुकाम आर्ययौगन्धरायणः ! भवतु, अविचार्य क्रमं न करिष्यति ।]

काञ्चुकीयः—भवति ! महती खल्वस्य व्यपाश्रयणा । कथं प्रतिजानीमः ? कुतः —

सुखमर्थो भवेद् दातुं सुखं प्राणाः सुखं तपः ।
सुखमन्यद् भवेत्सर्वं दुःखं न्यासस्य रक्षणम् ॥१०॥

पद्मावती—अय्य ! पढमं उग्घोसिअ को किं इच्छदित्ति अजुत्तं दाणिं विआरिदुं । जं एसो भणादि, तं अणुचिट्ठदु अय्यो । [आर्य ! प्रथममुद्घोष्य कः किमिच्छतीत्ययुक्तमिदानीं विचारयितुम् । यदेष भणति तदनुतिष्ठत्वार्यः ।]

यह राजकन्या (इयं कन्या) धीर स्वभाव की है (धीरा) । इसकी धर्म-ख्याति से हम परिचित हैं (दृष्टधर्मप्रचारा) । यह मेरी बहिन के चरित्र की (मे भगिन्याः चारित्रं) रक्षा कर सकती है (रक्षितुं शक्ता) ॥९॥

वासव०—(मन में) आर्य यौगन्धरायण मुझे यहीं सौंपना चाहते हैं । अच्छा, बिना सोचे कोई काम न करेंगे ।

कञ्चुकी—इसकी यह आश्रय-प्रार्थना बड़ी कठिन है; कैसे मान लें ? क्योंकि—

धन (अर्थः), प्राण (प्राणाः) और तप का फल (तपः) देना सरल है (दातु सुखम्) । अन्य सब कुछ देना सरल है (अन्यत् सर्वं सुखं भवेत्), किन्तु धरोहर की रक्षा करना (न्यासस्य रक्षणं) कठिन है (दुःखम्)॥१०॥

पद्मावती—आर्य ! किसे क्या चाहिए—पहले ऐसी घोषणा करके अब उसमें आनाकानी करना उचित नहीं है । जो यह कहे, वह करना होगा ।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

काञ्चुकीयः—अनुरूपमेतद् भवत्याभिहितम् ।

चेटी—चिरं जीवतु भट्टिदारिआ एवं सच्चवादिणी । [चिरं जीवतु भर्तृदारिका एवं सत्यवादिनी ।]

तापसी—चिरं जीवदु भद्दे ! [चिरं जीवतु भद्रे !]

काञ्चुकीयः—भवति ! तथा । (उपगम्य) भोः ! अभ्युपगतमत्र-भवतो भगिन्या परिपालनमत्रभवत्या ।

यौगन्धरायणः—अनुगृहीतोऽस्मि तत्रभवत्या । वत्से ! उपसर्पात्र-भवतीम् ।

वासवदत्ता—(आत्मगतम्) का गई । एसा गच्छामि मंदभाआ । [का गतिः ? एषा गच्छामि मन्दभागा ।]

पद्मावती—भोदु भोदु ! अत्तणीआ दाणिं संवुत्ता । [भवतु भवतु । आत्मीयेदानीं संवृत्ता ।]

तापसी—जा ईदिसी से आइदी, इयं वि राअदारिअत्ति तक्केमि । [या ईदृश्यस्या आकृतिः, इयमपि राजदारिकेति तर्कयामि ।]

कञ्चुकी—आपने यह ठीक कहा ।

दासी—ऐसी सत्यवक्ता राजकुमारी चिरकाल तक जीवित रहे ।

तापसी—भद्रे ! चिरायु होओ ।

कञ्चुकी—राजकुमारी ! अच्छा (यौगन्धरायण के पास जाकर) श्रीमती राजकुमारी ने आपकी बहिन की देख-रेख करना मान लिया है ।

यौग०—श्रीमती ने मुझपर बड़ी कृपा की है । बेटी ! इनके पास जाओ ।

वासव०—(मन में) क्या करूँ ? मैं मन्द भाग्य अब जाता हूँ ।

पद्मा०—अच्छा, अब यह अपनी हो गई ।

तापसी—इसकी जैसी आकृति है, उससे मैं समझती हूँ कि यह भी राजकुमारी है ।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

चेटी—सुट्ठ अय्या भणादि। अहं वि अणुहूदसुहत्ति पेक्खामि [सुष्ठु आर्या भणति। अहमप्यनुभूतसुखेति प्रेक्षे।]

यौगन्धरायणः—(आत्मगतम्) हन्त भोः ! अर्धमवसितं भारस्य। यथा मन्त्रिभिः सह समर्थितं तथा परिणमति। ततः प्रतिष्ठिते स्वामिनि तत्रभवतीमुपनयतो मे इहात्रभवती मगधराजपुत्री विश्वासस्थानं भविष्यति। कुतः—

पद्मावती नरपतेर्महिषी भवित्री
दृष्टा विपत्तिरथ यैः प्रथमं प्रदिष्टा।
तत्प्रत्ययात्कृतमिदं नहि सिद्धवाक्या-
न्युत्क्रम्य गच्छति विधिः सुपरीक्षितानि ॥११॥

दासी—आप ठीक कह रही हैं। मैं भी समझती हूँ कि यह सुख में रही है।

यौग०—(मन में) अहा ! आधा भार तो समाप्त हुआ। मंत्रियों के साथ जैसी मंत्रणा की थी, वैसा ही हो रहा है। जब स्वामी पूर्ववत् राज्य पा लेंगे और मैं वासवदत्ता को उनके पास पहुँचाऊँगा, तब श्रीमती मगध-राजकुमारी वासवदत्ता के चरित्र की साक्षिणी होगी। क्योंकि—

पद्मावती महाराज उदयन की पत्नी होंगी (पद्मावती नरपतेः महिषी भवित्री)—यह उन सिद्धों ने कहा है (प्रदिष्टा), जिन्होंने उदयन पर आनेवाली राज्यनाश-रूपी विपत्ति को पहले ही देख लिया था (यैः विपत्तिः प्रथमं दृष्टा)। उनपर विश्वास कर (तत्प्रत्ययात्) हमने यह किया है (इदं कृतम्)। क्योंकि भाग्य (विधिः) सिद्ध पुरुषों के सुपरीक्षित वचनों का (सुपरीक्षितानि सिद्धवाक्यानि) अतिक्रमण नहीं करता (उत्क्रम्य नहि गच्छति) ॥११॥

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

(ततः प्रविशति ब्रह्मचारी)

ब्रह्मचारी—(ऊर्ध्वमवलोक्य) स्थितो मध्याह्नः। दृढमस्मि परिश्रान्तः। अथ कस्मिन् प्रदेशे विश्रमयिष्ये ? (परिक्रम्य) भवतु, दृष्टम्। अभितस्तपोवनेन भवितव्यम्। तथाहि—

विस्रब्धं हरिणाश्चरन्त्यचकिता देशागतप्रत्यया
वृक्षाः पुष्पफलैः समृद्धविटपाः सर्वे दयारक्षिताः।
भूयिष्ठं कपिलानि गोकुलधनान्यक्षेत्रवत्यो दिशो
निस्सन्दिग्धमिदं तपोवनमयं धूमो हि बह्वाश्रयः ॥१२॥

(ब्रह्मचारी का प्रवेश)

ब्रह्म०—(ऊपर की ओर देखकर) मध्याह्न हो गया। मैं बहुत थक गया हूँ। अब कहाँ विश्राम करूँ ? (घूमकर) अच्छा, देख लिया। यह चारों ओर तपोवन ही होगा। क्योंकि—

हरिण (हरिणाः) निर्भय होकर (अचकिताः) विश्वासपूर्वक (विस्रब्ध) घूम रहे हैं (चरन्ति)। तपोवन में होने से वे निश्चिन्त हो गये हैं (देशागतप्रत्ययाः)। सभी वृक्षों की शाखाएँ फल-फूलों से भर गई हैं (सर्वे वृक्षाः पुष्पफलैः समृद्धविटपाः)। इन सभी वृक्षों को प्रेम से पाला-पोसा गया है (सर्वे दयारक्षिताः)। (मुनियों की) सर्वस्व कपिला गायें (गोकुलधनानि) बहुत-सी (भूयिष्ठम्) चर रही हैं। कहीं भी खेत नहीं है (दिशः अक्षेत्रवत्यः)। निस्सन्देह (निस्सन्दिग्धम्) यह तपोवन है (इदं तपोवनम्)। यह धुआँ भी (अयं धूमः हि) कई स्थानों से निकल रहा है (बह्वाश्रयः) ॥१२॥

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

यावत् प्रविशामि । (प्रविश्य) अये ! आश्रमविरुद्धः खल्वेष जनः । (अन्यतो विलोक्य) अथवा तपस्विजनोऽप्यत्र । निर्दोषमुपसर्पणम् । अये स्त्रीजनः !

काञ्चुकीयः—स्वैरं स्वैरं प्रविशतु भवान् । सर्वजनसाधारणमाश्रमपदं नाम ।

वासवदत्ता—हं ! [इम]

पद्मावती—अम्मो ! परपुरुसदंसनं परिहरदि अय्या । भोदु, सुपरिपालणीओ खु मण्णासो । [अम्मो ! परपुरुषदर्शनं परिहरत्यार्या । भवतु सुपरिपालनीयः खलु मन्न्यासः ।]

काञ्चुकीयः—भोः पूर्वं प्रविष्टाः स्मः । प्रतिगृह्यतामतिथिसत्कारः ।

तो मैं प्रवेश करूँ । (प्रवेश कर) अरे, ये तो आश्रम के लोग नहीं हैं । (दूसरी ओर देखकर) यहाँ तापस लोग भी तो हैं । इनके समीप जाने में कोई दोष नहीं । अरे, यहाँ स्त्रियाँ भी हैं !

कञ्चुकी—आप निश्शंक चले आइए । आश्रम के द्वार सभी के लिए खुले हैं ।

वासव०—हैं !

पद्मावती—ओह ! आर्या किसी अन्य पुरुष को देखना नहीं चाहती । अच्छा, मुझे अपनी धरोहर की रक्षा अच्छी तरह करनी होगी ।

कञ्चुकी—हम पहले ही आ गये हैं । हमारा अतिथि-सत्कार ग्रहण करें ।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

ब्रह्मचारी—(आचम्य) भवतु भवतु। निवृत्त परिश्रमोऽस्मि।

यौगन्धरायणः—भोः कुत आगम्यते, क्व गन्तव्यम्, क्वाधिष्ठानमार्यस्य ?

ब्रह्मचारी—भोः श्रूयताम्। राजगृहतोऽस्मि। श्रुतिविशेषणार्थं वत्सभूमौ लावाणकं नाम ग्रामस्तत्रोषितवानस्मि।

वासवदत्ता—(आत्मगतम्) हा लावाणअं नाम! लावाणअसंकित्तणेण पुणोणवीकिदो विअ मे संदावो। [हा लावाणकं नाम! लावाणकसङ्कीर्त्तनेन पुनर्नवीकृत इव मे सन्तापः।]

यौगन्धरायणः—अथ परिसमाप्ता विद्या ?

ब्रह्मचारी—न खलु तावत्।

यौगन्धरायणः—यद्यनवसिता विद्या, किमागमन प्रयोजनम् ?

ब्रह्म०—(आचमन करके) बहुत अच्छा, अब मेरी थकावट दूर हो गई।

यौग०—आप कहाँ से आ रहे हैं, कहाँ जायेंगे और आपका स्थान कहाँ है ?

ब्रह्म०—सुनिए, मैं राजगृह से आ रहा हूँ। वत्सराज के राज्य के अन्तर्गत लावाणक नाम का गाँव है, वहाँ मैं वेद का विशेष अध्ययन करने के लिए कुछ समय तक रहा।

वासवदत्ता—ओह! लावाणक! लावाणक नाम लेने से मेरा दुःख फिर नया-सा हुआ।

यौग०—क्या अध्ययन समाप्त हुआ ?

ब्रह्म०—नहीं, समाप्त नहीं हुआ।

यौग०—यदि अध्ययन समाप्त नहीं हुआ तो फिर आने का क्या प्रयोजन ?

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

ब्रह्मचारी—तत्र खल्वतिदारुणं व्यसनं संवृत्तम्।

यौगन्धरायणः—कथमिव ?

ब्रह्मचारी—तत्रोदयनो नाम राजा प्रतिवसति।

यौगन्धरायणः—श्रूयते तत्रभवानुदयनः। किं सः ?

ब्रह्मचारी—तस्यावन्तिराजपुत्री वासवदत्ता नाम पत्नी दृढमभिप्रेता किल।

यौगन्धरायणः—भवितव्यम्। ततस्ततः ?

ब्रह्मचारी—ततस्तास्मिन् मृगयानिष्क्रान्ते राजनि ग्रामदाहेन सा दग्धा।

वासवदत्ता—(आत्मगतम्) अलिअं अलिअं खु एदं। जीवामि मंदभाआ। [अलीकमलीकं खल्वेतत्। जीवामि मन्दभागा।]

यौगन्धरायणः—ततस्ततः ?

ब्रह्मचारी—वहाँ एक भीषण घटना घटित हुई।

यौग०—कैसी ?

ब्रह्मचारी—वहाँ राजा उदयन रहते हैं।

यौग०—उदयन का नाम सुनते हैं। उन्हें क्या हुआ ?

ब्रह्मचारी—अवन्तिराजकुमारी वासवदत्ता उनकी अतिप्रिया पत्नी थी।

यौग०—सम्भव। फिर क्या हुआ ?

ब्रह्मचारी—जब राजा शिकार खेलने चले गये तब वासवदत्ता गाँव में आग लगने से जल गई।

वासव०—(मन में) यह सर्वथा झूठ है। मैं अभागिन जीवित हूँ।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

ब्रह्मचारी—ततस्तामभ्यवपत्तु कामो यौगन्धरायणो नाम सचिवस्तस्मिन्नेवाग्नौ पतितः।

यौगन्धरायणः—सत्यं पतित इति। ततस्ततः?

ब्रह्मचारी—ततः प्रतिनिवृत्तो राजा तद्वृत्तान्तं श्रुत्वा तयोर्वियोगजनितसन्तापस्तस्मिन्नेवाग्नौ प्राणान् परित्यक्तुकामोऽमात्यैर्महता यत्नेन वारितः।

वासवदत्ता—(आत्मगतम्) जाणामि जाणामि अय्यउत्तस्स मइ साणुक्कोसत्तणं। [जानामि जानाम्यार्यपुत्रस्य मयि सानुक्रोशत्वम्।]

यौगन्धरायणः— ततस्ततः?

ब्रह्मचारी—ततस्तस्याः शरीरोपभुक्तानि दग्धशेषाण्याभरणानि परिष्वज्य राजा मोहमुपगतः।

ब्रह्मचारी—तब मंत्री यौगन्धरायण उसे बचाने के लिए उसी आग में कूद पड़ा।

यौग०—हाँ ठीक है, कूद पड़ा। फिर क्या हुआ?

ब्रह्मचारी—जब राजा लौटा और उसने यह समाचार सुना तब उन दोनों के विरह से उत्पन्न शोक के कारण वह उसी आग में कूदकर मरने को तैयार हो गया, पर मंत्रियों ने बड़े प्रयत्न से उसे रोका।

वासव०—(मन में) मैं जानती हूँ, आर्यपुत्र का मुझपर कैसा दयाभाव है।

यौग०—तब फिर क्या हुआ?

ब्रह्मचारी—तब वासवदत्ता के पहने हुए, जलकर बचे-खुचे आभूषणों को छाती से लगाकर राजा मूर्च्छित हो गये।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

सर्वे—हा !

वासवदत्ता—(स्वगतम्) सकामो दाणिं अय्यजोअन्धराअणो होदु । [सकाम इदानीमार्ययौगन्धरायणो भवतु ।]

चेटी—भट्टिदारिए ! रोदिदि खु इअं अय्या [भर्तृदारिके रोदिति खल्वियमार्या ।]

पद्मावती—साणुक्कोसाए होदव्वं । [सानुक्रोशया भवितव्यम् ।]

यौगन्धरायणः—अथ किम् अथ किम् ? प्रकृत्या सानुक्रोशा मे भगिनी । ततस्ततः ?

ब्रह्मचारी—ततः शनैः शनैः प्रतिलब्धसंज्ञः संवृत्तः ।

पद्मावती—दिट्ठिआ धरइ । मोहं गदो त्ति सुणिअ सुण्णं विअ मे हिअअं [दिष्ट्या ध्रियते । मोहं गत इति श्रुत्वा शून्यमिव मे हृदयम् ।]

यौगन्धरायणः—ततस्ततः ?

सभी—हाय !

वासव०—(मन में) आर्य यौगन्धरायण का मनोरथ अब पूर्ण हो ।

दासी—राजकुमारी ! यह आर्या तो रो रही हैं ।

पद्मावती—यह बड़ी दयालु होंगी ।

यौग०—हाँ-हाँ ! स्वभाव से ही मेरी बहिन बड़ी दयालु है । फिर क्या हुआ ?

ब्रह्मचारी—फिर धीरे-धीरे वे होश में आये ।

पद्मावती—अच्छा कि वे जीवित हैं । 'मूर्च्छित हो गये'—यह सुनकर मेरा हृदय शून्य-सा हो गया था ।

यौग०—फिर क्या हुआ ?

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

ब्रह्मचारी--ततः स राजा महीतलपरिसर्पणपांसुपाटलशरीरः सहसोत्थाय हा वासवदत्ते ! हा अवन्तिराजपुत्रि ! हा प्रिये ! हा प्रियशिष्ये ! इति किमपि बहुप्रलपितवान् । किं बहुना—

नैवेदानीं तादृशाश्चक्रवाका
नैवाप्यन्ये स्त्रीविशेषैर्वियुक्ताः ।
धन्या सा स्त्री यां तथा वेत्ति भर्त्ता
भर्त्तृस्नेहात् सा हि दग्धाप्यदग्धा ॥१३॥

यौगन्धरायणः—अथ भोः ! तं तु पर्यवस्थापयितुं न कश्चिद् यत्नवानमात्यः ?

ब्रह्मचारी—अस्ति रुमण्वान्नामामात्यो दृढं प्रयत्नवांस्तत्रभवन्तं पर्यवस्थापयितुम् । स हि—

ब्रह्मचारी--अनन्तर वे राजा भूतल पर लोटने लगे, जिससे उनका शरीर धूल से धूसर हो गया । फिर एकाएक उठकर 'हा ! वासवदत्ता', 'हा ! अवन्तिराजकुमारी', 'हा ! प्रिया', 'हा ! प्रियशिष्या' आदि बहुत-कुछ बकते रहे । अधिक क्या ?

चकवे भी (चक्रवाकाः) अब (इदानीं) वैसे दुःखी (तादृशा) नहीं हैं (नैव) और न कोई अन्य (नैव अपि अन्ये) स्त्रीवियोगी (स्त्रीविशेषैर्वियुक्ताः) ऐसा दुःखी होगा । धन्य है (धन्या) वह स्त्री (सा स्त्री), जिसे पति (यां भर्त्ता) वैसा मानता है (तथा वेत्ति); क्योंकि पति का उसके प्रति प्रेम है, अतः (भर्त्तृस्नेहात्) वह जलकर भी नहीं जली (दग्धा अपि अदग्धा) ॥१३॥

यौग०—क्या अब उसे धीरज बँधाने को कोई मंत्री प्रयत्न नहीं करता है ?

ब्रह्मचारी—अमात्य रुमण्वान् उन्हें धीरज बँधाने को निरन्तर प्रयत्न कर रहा है ।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

अनाहारे तुल्यः प्रततरुदितक्षामवदनः
शरीरे संस्कारं नृपतिसमदुःखं परिवहन् ।
दिवा वा रात्रौ वा परिचरति यत्नैर्नरपतिं
नृपः प्राणान् सद्यस्त्यजति यदि तस्याप्युपरमः ॥१४॥

वासवदत्ता—(स्वगतम्) दिट्ठिआ सुणिक्खित्तो दाणिं अय्यउत्तो [दिष्ट्या सुनिक्षिप्त इदानीमार्यपुत्रः ।]

यौगन्धरायणः—(आत्मगतम्) अहो ! महद् भारमुद्वहति रुमण्वान् । कुतः—

यदि राजा नहीं खाता तब वह भी नहीं खाता, अनशन में वह राजा के सदृश है (अनाहारे तुल्यः)। निरन्तर रोने से राजा की तरह उसका मुख म्लान हो गया है (प्रततरुदितक्षामवदनः)। राजा के समान शोक-सूचक (नृपतिसमदुःखम्) शरीर की वेष-भूषा बनाये हुए (शरीरे संस्कारं परिवहन्) है, दिन-रात (दिवा वा रात्रौ वा) परिश्रम से (यत्नैः) राजा की सेवा कर रहा है (नरपतिं परिचरति)। यदि राजा प्राणों का परित्याग करता है (नृपः प्राणान् त्यजति) तो उसका भी (तस्य अपि) तत्काल (सद्यः) मरण सम्भव है (उपरमः) ॥१४॥

वासव०—(मन में) भाग्य से आर्यपुत्र इस समय भले व्यक्ति के हाथ में हैं।

यौग०—(मन में) अहो ! रुमण्वान् बड़ा बोझ सम्भाल रहा है; क्योंकि—

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

सविश्रमो ह्ययं भारः प्रसक्तस्तस्य तु श्रमः ।
तस्मिन् सर्वमधीनं हि यत्राधीनो नराधिपः ॥१५॥

(प्रकाशम्) अथ भोः ! पर्यवस्थापित इदानीं स राजा ?

ब्रह्मचारी—तदिदानीं न जाने । 'इह तया सह हसितम्, इह तया सह कथितम्, इह तया सह पर्युषितम्, इह तया सह कुपितम्, इह तया सह शयितम्, इत्येवं तं विलपन्तं राजानममात्यैर्महता यत्नेन तस्माद् ग्रामाद् गृहीत्वाऽपक्रान्तम् । ततो निष्क्रान्ते राजनि प्रोषितनक्षत्र-चन्द्रमिव नभोऽरमणीयः संवृत्तः स ग्रामः । ततोऽहमपि निर्गतोऽस्मि ।

तापसी—सो खु गुणवन्तो णाम राआ, जो आअंतुएण वि इमिणा एव्वं पसंसीअदि । [स खलु गुणवान् नाम राजा य आगन्तुकेनाप्यनेनैवं प्रशस्यते ।]

मेरा यह भार (अयं हि भारः) कुछ कम हुआ (सविश्रमः), किन्तु उसका भार (तस्य तु श्रमः) वैसा ही बना है (प्रसक्तः) । सब उसी के अधीन हैं (तस्मिन् हि सर्वम् अधीनम्); जिसके अधीन राजा है (यत्र नराधिपः अधीनः) ॥१५॥

(प्रकट)—अब क्या राजा स्वस्थ हुए ?

ब्रह्मचारी—यह मैं नहीं जानता । "यहाँ उसके साथ मैं हँसा था, यहाँ उसके साथ मैं बोला था, यहाँ उसके साथ मैं बैठा था, यहाँ उसके साथ मैं रूठा था, यहाँ उसके साथ मैं सोया था "—इस प्रकार विलाप करते हुए राजा को बड़े प्रयत्न से मंत्री लेकर उस गाँव से चले गये । बाद में राजा के चले जाने पर वह गाँव चाँद और तारों से विहीन आकाश की तरह शोभाहीन हो गया । तब मैं भी वहाँ से चला आया हूँ ।

तापसी—वह राजा बड़ा गुणी होगा, जिसकी यह तटस्थ यात्री भी ऐसी प्रशंसा कर रहा है ।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

चेटी—भट्टिदारिए ! किं णु खु अन्नरा इत्थिआ तस्स हत्थं गमिस्सदि ? [भर्तृदारिके ! किन्नु खल्वपरा स्त्री तस्य हस्तं गमिष्यति ?]

पद्मावती—(आत्मगतम्) मम हिअएण एव्व सह मंतिदं [मम हृदयेनैव सह मन्त्रितम् ।]

ब्रह्मचारी—आ पृच्छामि भवन्तौ । गच्छामस्तावत् ।

उभौ—गम्यतामर्थसिद्धये ।

ब्रह्मचारी – तथास्तु ।

(निष्क्रान्तः)

यौगन्धरायणः—साधु, अहमपि तत्रभवत्याऽभ्यनुज्ञातो गन्तुमिच्छामि ।

काञ्चुकीयः—तत्रभवत्याऽभ्यनुज्ञातो गन्तुमिच्छति किल ।

दासी—क्या दूसरी स्त्री उसके हाथ लगेगी ?

पद्मावती— (मन में) दासी ने मेरे मन की बात पूछी ।

ब्रह्मचारी– मैं आप दोनों से विदा माँगता हूँ । मैं अब जाता हूँ ।

दोनों—जाओ, अपना कार्य सम्पन्न करो ।

ब्रह्मचारी—अच्छा । (चला जाता है ।)

यौग०—अच्छा, मैं भी आपकी अनुमति से जाना चाहता हूँ ।

पद्मावती—आपकी बहन आपके बिना उत्कंठित होगी ।

यौग० – अच्छे लोगों के हाथ में पड़कर यह नहीं घबरायगी। (कंचुकी को देखकर) अब हम चलते हैं ।

कञ्चुकी— आप जाइए, फिर दर्शन होंगे ।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

पद्मावती—अय्यस्स भइणिआ अय्येण विना उक्कंठिस्सदि ।

[आर्यस्य भगिनिकाऽऽर्येण विनोत्कण्ठिष्यते ।]

यौगन्धरायणः—साधुजनहस्तगतैषा नोत्कण्ठिष्यति ।

(काञ्चुकीयमवलोक्य) गच्छामस्तावत् ।

काञ्चुकीयः—गच्छतु भवान् पुनर्दर्शनाय ।

यौगन्धरायणः—तथास्तु ।

(निष्क्रान्तः)

काञ्चुकीयः—समय इदानीमभ्यन्तरं प्रवेष्टुम् ।

पद्मावती—अय्ये ! वंदामि । [आर्ये ! वन्दे !]

तापसी—जादे । तव सदिसं भत्तारं लभेहि । [आर्ये ! तव सदृशं भर्त्तारम् लभस्व]

वासवदत्ता—अय्ये वंदामि दाव अहं । [आर्ये ! वन्दे तावदहम् ।]

तापसी—तुवं पि अइरेण भत्तारं समासादेहि । [त्वमप्यचिरेण भर्त्तारम् समासादय ।]

वासवदत्ता—अणुग्गहीदम्हि । [अनुगृहीतास्मि]

काञ्चुकीयः—तदागम्यताम् । इत इतो भवति ! सम्प्रति हि—

यौग०—अच्छा ! (चला जाता है ।)

कञ्चुकी—अब भीतर जाने का समय है ।

पद्मावती—भगवती, मैं प्रणाम करती हूँ ।

तापसी—तुम भी शीघ्र ही अपने पति को पाओ ।

वासव०—मैं आपके अनुग्रह के लिए आभारी हूँ ।

कञ्चुकी—तो आइए, इधर आइए, इधर आइए ।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

खगा वासोपेताः सलिलमवगाढो मुनिजनः
प्रदीप्तोऽग्निर्भाति प्रविचरति धूमो मुनिवनम् ।
परिभ्रष्टो दूराद् रविरपि च सङ्क्षिप्तकिरणो
रथं व्यावर्त्यासौ प्रविशति शनैरस्तशिखरम् ॥१६॥

(निष्क्रान्ताः सर्वे)

प्रथमोऽङ्कः समाप्तः

अब पक्षी (खगाः) अपने-अपने घोंसलों में गये (वासोपेताः) । मुनि लोग (मुनिजनः) स्नान करने लगे हैं (सलिलम् अवगाढः) । मालूम होता है (भाति) कि अग्नि प्रज्वलित हो गई (अग्निः प्रदीप्तः); क्योंकि धुआँ (धूमः) तपोवन में फैल रहा है (मुनिवनं प्रविचरति) । वह सूर्य भी (असौ रविरपि) ऊँचे से गिरकर (दूरात् परिभ्रष्टः) तथा (अपि च) अपनी किरणों को समेटकर (संक्षिप्तकिरणः), रथ को लौटाकर (रथं व्यावर्त्य) धीरे-धीरे (शनैः) अस्ताचल की ओर जा रहा है (अस्तशिखरं प्रविशति) ॥१६॥

(सभी चले जाते हैं ।)

पहला अंक समाप्त

———

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

अथ द्वितीयोऽङ्कः

(ततः प्रविशति)

चेटी—कुंजरिए ! कुंजरिए ! कहिं कहिं भट्टिदारिआ पदुमावदी ? किं भणसि, एसा भट्टिदारिआ माहवीलदामंडवस्स पस्सदो कंदुएण कीलदित्ति । जाव भट्टिदारिअं उवसप्पामि । (परिक्रम्यावलोक्य) अम्मो ! इअं भट्टिदारिआ उक्करिदकण्णचुलिएण वाआमसंजादसेदबिंदुविइत्तिदेण परिस्संतरमणीअदंसणेण मुहेण कंदुएण कीलंदी इदो एव्व आअच्छदि । जाव उवसप्पिस्सं । [कुञ्जरिके ! कुञ्जरिके ! कुत्र कुत्र भर्त्तृदारिका पद्मावती ? किं भणसि, एषा भर्त्तृदारिका माधवीलतामण्डपस्य पार्श्वतः कन्दुकेन क्रीडतीति । यावद् भर्त्तृदारिकामुपसर्पामि । अम्मो ! इयं भर्त्तृदारिका उत्कृतकर्णचूलिकेन व्यायामसञ्जातस्वेदविन्दुविचित्रितेन परिश्रान्तरमणीयदर्शनेन मुखेनकन्दुकेन क्रीडन्तीतएवागच्छति । यावदुपसर्पामि ।]

दूसरा अंक

(दासी का प्रवेश)

दासी—कुञ्जरिका, कुञ्जरिका, राजकुमारी पद्मावती कहाँ है ? क्या कह रही हो कि यह राजकुमारी वासन्तीलता-कुंज के पास गेंद खेल रही है । अच्छा, राजकुमारी के पास चलूँ । (घूमकर और देखकर) ओह ! यह राजकुमारी तो गेंद से खेलते-खेलते इधर ही आ रही है । कानों के कुण्डल ऊपर उठाकर गेंद खेलने के व्यायाम से इसके मुँह पर पसीने की बूँदें आ गई हैं और यह चित्र-विचित्र दीखती है तथा थकने पर भी सुन्दर लगती है । तो मैं भी इसके पास पहुँचूँ । (चली जाती है ।)

(प्रवेशक समाप्त)

(तब गेंद खेलती हुई पद्मावती का परिवार और वासवदत्ता-सहित प्रवेश)

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

वासवदत्ता—हला ! एसो दे कंदुओ । [हला ! एषते कन्दुकः ।

पद्मावती—अय्ये ! भोदु दाणिं एत्तअं । [आर्ये ! भवत्विदानीं मेतावत् ।]

वासवदत्ता—हला ! अदिचिरं कंदुएण कीलिअ अहिअसंजादराआ परकेरआ विअ दे हत्था संवुत्ता । [हला ! अतिचिरं कन्दुकेन क्रीडित्वाधिकसञ्जातरागौ परकीयाविव ते हस्तौ संवृत्तौ ।]

चेटी—कीलदु कीलदु दाव भट्टिदारिआ । णिव्वत्तीअदु दाव अअं कण्णाभावरमणीओ कालो । [क्रीडतु क्रीडतु तावद् भर्तृदारिका । निर्वर्त्यतां तावद् अयं कन्याभावरमणीयः कालः]

पद्मावती—अय्ये ! किं दाणिं मं ओहसिदुं विअ णिज्झाअसि ? [आर्ये ! किमिदानीं मामपहसितुमिव निध्यायसि ?]

वासवदत्ता—णहि णहि । हला ! अधिअं अज्ज सोहदि । अभिदो

वासवदत्ता—सखी ! यह तेरी गेंद है ।

पद्मावती—आर्ये ! इस समय इतना ही रहने दो ।

वासव०—सखी गेंद से चिरकाल तक खेलते-खेलते ललाई के बढ़ जाने से तेरे हाथ मानों दूसरे के हो रहे हैं ।

दासी—राजकुमारी खूब खेलें । बचपने के इस सुन्दर काल को आनन्द में व्यतीत करें ।

पद्मावती—अब तू क्यों मेरी हँसी उड़ाने की सोच रही हो ?

वासव०—नहीं, नहीं । सखी, आज तेरा मुख अधिक सुन्दर लग रहा है । आज मुझे तेरा मुख सब ओर से रम्य दीख रहा है

gannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

विअ दे अज्ज वरमुहं पेक्खामि । [नहि नहि । हला ! अधिकमद्य शोभते । अभित इव तेऽद्य वरमुखं पश्यामि ।]

पद्मावती—अवेहि । मा दाणिं मं ओहस । [अपेहि । मेदानीं मामपहस ।]

वासवदत्ता—एसम्हि तुण्हीआ भविस्समहासेणवहू ! [एषास्मि तूष्णीका भविष्यन्महासेनवधु !]

पद्मावती—को एसो महासेणो णाम ? [क एष महासेनो नाम ?]

वासवदत्ता—अत्थि उज्जइणीओ राआ पज्जोदो णाम । तस्स वलपरिमाणणिव्वुत्तं णामहेअं महासेणोत्ति । [अस्त्युज्जयिनीयो राजा प्रद्योतो नाम । तस्य बलपरिमाणनिर्वृत्तं नामधेयं महासेन इति ।]

चेटी—भट्टिदारिआ तेण रञ्ञा सह संबंधं णेच्छदि । [भर्त्तृदारिका तेन राज्ञा सह सम्बन्धम् नेच्छति ।]

(अथवा)—तेरे वर का मुख निकट ही देख रही हूँ; तेरा विवाह होना निकट ही है ।

पद्मावती—हट, तू अब मेरी हँसी मत कर ।

वासव०—महासेन की भावी बहू ! अब मैं चुप हुई ।

पद्मावती—यह महासेन कौन है ?

वासव०—उज्जयिनी का राजा प्रद्योत है । महती सेना के कारण उसका नाम महासेन पड़ा ।

दासी—राजकुमारी उस राजा के साथ अपना सम्बन्ध नहीं चाहती ।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

वासवदत्ता—अह केण खु दाणिं अभिलसदि ? [अथ केन खल्विदानीमभिलषति ?]

चेटी—अत्थि वच्छराओ उअअणो णाम । तस्स गुणाणि भट्टिदारिआ अभिलसदि । [अस्ति वत्सराज उदयनो नाम । तस्य गुणान् भर्तृदारिकाऽभिलषति ।]

वासवदत्ता—(आत्मगतम्) अय्यउत्तं भत्तारं अभिलसदि । (प्रकाशम्) केण कारणेण ? [(आत्मगतम्) आर्यपुत्रं भर्त्तारमभिलषति । (प्रकाशम्) । केन कारणेन ?]

चेटी—साणुक्को सो त्ति । [सानुक्रोश इति ।]

वासवदत्ता—(आत्मगतम्) जाणामि जाणामि । अअं वि जणो एव्वं उम्मादिदो । [जानामि जानामि । अयमपि जन एवमुन्मादितः ।]

चेटी—भट्टिदारिए ! जदि सो राआ विरूवो भवे ? [भर्तृदारिके ! यदि स राजा विरूपो भवेत् ?]

वासव०—तो किसके साथ अपना सम्बन्ध चाहती है ?

दासी—वत्सदेश का राजा उदयन है । राजकुमारी उसके गुणों को चाहती है ।

वासव०—(मन में) मेरे पति को पति बनाना चाहती है । (प्रकाश) किस कारण से ?

दासी—इसलिए कि वह दयालु है ।

वासव०—(मन में) हाँ, जानती हूँ । मैं भी इसी प्रकार पगली बनी थी ।

दासी—यदि वह राजा कुरूप हो तब ?

gannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

वासवदत्ता—णहि णहि । दंसणीओ एव्व । [नहिं नहि दर्शनीय एव ।]

पद्मावती—अय्ये ! कहं तुवं जाणासि ? [आर्ये ! कथं त्वं जानासि ?]

वासवदत्ता—(आत्मगतम्) अय्यउत्तपक्खवादेण अदिक्कंदो समुदाआरो । किं दाणिं करिस्सं ? होदु, दिट्ठं । (प्रकाशम्) हला ! एव्वं उज्जइणीओ जणो मंतेदि । [(आत्मगतम्) आर्यपुत्रपक्षपातेनातिक्रान्तः समुदाचारः । किमिदानीं करिष्यामि ? भवतु, दृष्टम् । (प्रकाशम्) हला ! एवमुज्जयिनीयो जनो मन्त्रयते ।]

पद्मावती—जुज्जइ । ण खु एसो उज्जइणीदुल्लहो । सव्वजणमणोभिरामं खु सोभग्गं णाम । [युज्यते । न खल्वेष उज्जयिनीदुर्लभः । सर्वजनमनोऽभिरामं खलु सौभाग्यं नाम ।]

(ततः प्रविशति धात्री)

धात्री—जेदु भट्टिदारिआ । भट्टिदारिए ! दिण्णासि । [जयतु भर्तृदारिका । भर्तृदारिके ! दत्तासि ।]

वासव०—नहीं-नहीं, वह तो सुन्दर ही है ।

पद्मावती—आर्ये ! तू कैसे जानती हो ?

वासव०—(मन में) आर्यपुत्र के प्रति पक्षपात से मैं अपना सदाचार भूल गई । अब क्या करूँ ? अच्छा, समझ में आ गया । (प्रकट) इस प्रकार उज्जयिनी के लोग कहते हैं ।

पद्मावती—सम्भव है । उज्जयिनी के लोगों नें इसे देखा है । सौन्दर्य सबके मन को अपनी ओर आकृष्ट करता है ।

(धाय का प्रवेश)

धाय—राजकुमारी की जय हो ! राजकुमारी ! तुम्हारा वाग्दान हो गया ।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

वासवदत्ता—अय्ये ! कस्स ? [आर्ये ! कस्मै ?]

धात्री—वच्छराअस्स उदअणस्स । [वत्सराजायोदयनाय ।]

वासवदत्ता—अह कुसली सो राआ ? [अथ कुशली स राजा ?]

धात्री—कुसली सो आअदो । तस्स भट्टिदारिआ पडिच्छिदा अ । [कुशली स आगतः । तस्य भर्तृदारिका प्रतीष्टा च ।]

वासवदत्ता—अच्चाहिदं [अत्याहितम् ।]

धात्री—किं एत्थ अच्चाहिदं ? [किमत्रात्याहितम् ।]

वासवदत्ता—ण हु किंचि । तह णाम संतप्पिअ उदासीणो होदि त्ति । [न खलु किञ्चित् । तथा नाम सन्तप्योदासीनो भवतीति ।]

धात्री—अय्ये ! आअमप्पहाणाणि सुलहपय्यवत्थाणाणि महापुरुसहिअआणि होंति । [आर्ये ! आगमप्रधानानि सुलभ पर्यवस्थानानि महापुरुषहृदयानि भवन्ति ।]

वासव०—आर्ये ! किसके प्रति ?

धाय—वत्सराज उदयन के प्रति ।

वासव०—वह राजा स्वस्थ तो है ?

धाय—स्वस्थ है, यहाँ आया भी है । राजकुमारी को उसने स्वीकार भी कर लिया ।

वासव०—बहुत बुरा हुआ ।

धाय—इसमें क्या बुरा हुआ ?

वासव०—और तो कुछ नहीं, किन्तु वासवदत्ता के वियोग में ऐसा दुःखी होकर (अब एकाएक) उसके प्रति उदासीन हो गया ।

धाय—आर्ये, महापुरुषों के हृदय शास्त्रों के उपदेशों को मान्यता देते हुए सहज ही में धैर्य धारण कर लेते हैं ।

gannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

वासवदत्ता—अय्ये ! सअं एव्व तेण वरिदा ? [आर्ये ! स्वयमेव तेन वरिता ?]

धात्री—णहि णहि अण्णप्पओअणेण इह आअदस्स अभिजणविज्ञाणवओरूवं पेक्खिअ सअं एव्व महाराएण दिण्णा। [नहि नहि। अन्यप्रयोजनेनेहागतस्याभिजनविज्ञानवयोरूपं दृष्ट्वा महाराजेन दत्ता।]

वासवदत्ता—(आत्मगतम्) एव्वं ! अणवरद्धो दाणिं एत्थ अय्यउत्तो। [(आत्मगतम्) एवमनपराद्ध इदानीमत्रार्यपुत्रः।]

(प्रविश्यापरा)

चेटी—तुवरदु तुवरदु दाव अय्या। अज्ज एव्वं किल सोभणं णक्खत्तं। अज्ज एव्व कोदुअमंगलं कादव्वं त्ति अम्हाणं भट्टिणी भणादि। [त्वरतां त्वरतां तावदार्या। अद्यैव किल्य शोभनं नक्षत्रम्। अद्यैव [कौतुकमङ्गलं कर्त्तव्यमित्यस्माकं भट्टिनी भणति।]

वासव०—आर्ये ! क्या उसने स्वयं ही पद्मावती की माँग की ?

धाय—नहीं, नहीं; वह किसी अन्य काम से यहाँ आया था। उसके कुल, विद्या, उम्र और रूप को देखकर महाराज ने स्वयं ही पद्मावती को उसे दे दिया।

वासव०—(मन में) यदि ऐसा है तो इसमें आर्यपुत्र का कोई दोष नहीं है।

(दूसरी दासी का प्रवेश)

दासी—राजकुमारी ! शीघ्र चलिए, शीघ्र चलिए। आज ही अच्छा लग्न है। हमारी स्वामिनी कहती हैं कि आज ही विवाह का मंगलकार्य सपन्न हो।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

वासवदत्ता—(आत्मगतम्) जह जह तुवरदि, तह तह अंधीकरेदि मे हिअअं। [(आत्मगतम्) यथा यथा त्वरते, तथा तथान्धीकरोति मे हृदयम्।]

धात्री—एदु एदु भट्टिदारिआ। [एत्वेतु भर्त्तृदारिका।]

(निष्क्रान्ताः सर्वे)

द्वितीयोऽङ्कः समाप्तः

वासव०—(मन में) ज्यों-ज्यों यह जल्दी करती है, त्यों-त्यों मेरा हृदय व्याकुल हो रहा है।

धाय—आइए, राजकुमारी, आइए।

(सब लोगों का प्रस्थान)

दूसरा अंक समाप्त

gannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

अथ तृतीयोऽङ्कः

(ततः प्रविशति विचिन्तयन्ती वासवदत्ता)

वासवदत्ता—विवाहामोदसंकुले अंतेउरचउस्साले परित्तजिअ पदुमावदिं इह आअदम्हि पमदवणं। जाव दाणिं भाअधेअणिव्वुत्तं दुःखं विणोदेमि। (परिक्रम्य) अहो ! अच्चाहिदं। अय्यउत्तो वि णाम परकेरओ संवुत्तो। जा उवविसामि। (उपविश्य) धण्णा खु चक्कवाअवहू, जा अण्णोण्णविरहिदा ण जीवइ। ण खु अहं पाणाणि परित्तजामि। अय्यउत्तं पेक्खामि त्ति एदिणा मणोरहेण जीवामि मंदभाआ। [विवाहामोदसङ्कुले अन्तःपुरचतुश्शाले परित्यज्य पद्मावतीमिहागतास्मि प्रमदवनम्। यावदिदानीं भागधेयनिर्वृत्तं दुःखं विनोदयामि। (परिक्रम्य) अहो ! अत्याहितम्। आर्यपुत्रोऽपि नाम परकीयः संवृत्तः। यावद् उपविशामि। (उपविश्य) धन्या खलु चक्रवाकवधूः, याऽन्योन्य विरहिता न जीवति। न खल्वहं प्राणान् परित्यजामि। आर्यपुत्रं पश्यामीत्यनेन मनोरथेन जीवामि मन्दभागा।]

तीसरा अंक

(कुछ विचार करती हुई वासवदत्ता का प्रवेश)

वासव०—विवाह की खुशी से परिपूर्ण राजमहल की चौखंडी में पद्मावती को छोड़कर मैं यहाँ प्रमदवन में आई हूँ। तो अब दुर्भाग्य से आये हुए दुःख को शान्त करूँ। (घूमकर) हाय ! बुरा हुआ। आर्यपुत्र भी पराये हो गये। अच्छा बैठूँ। (बैठकर) धन्य है वह चकई, जो प्रिय से बिछुड़ते ही नहीं जीती। मैं तो मरती भी नहीं। मैं अभागिन 'पति को फिर देखूँगी'—इस मनोरथ से जी रही हूँ।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

(ततः प्रविशति पुष्पाणि गृहीत्वा चेटी)

चेटी—कहिं णु खु गदा अय्या आवंतिआ ? ((परिक्रम्यावलोक्य) अम्मो ! इअं चिंतासुण्णहिअंआ णीहारपडिहदचंदलेहा विअ अमंडिद-भद्दअं वेसं धारअंदी पिअंगुसिलापट्टअे उवविट्ठा। जाव उवसप्पामि। (उपसृत्य) अय्ये ! आवंतिए ! को कालो तुमं अण्णेसामि। [क्व नु खलु गता आर्यावन्तिका ? अम्मो ! इयं चिन्ताशून्यहृदया नीहारप्रतिहत चन्द्रलेखेवामण्डितभद्रकं वेषं धारयन्ती प्रियङ्गुशिलापट्टके उपविष्टा। यावदुपसर्पामि। (उपसृत्य) आर्ये ! आवन्तिके ! कः कालः, त्वामन्विष्यामि।]

वासव०—किण्णिमित्तं ? [किन्निमित्तम् ?]

चेटी—अम्हाअं भट्टिणी भणदि—महाकुलप्पसूदा सिणिद्धा णिउणात्ति इमं दाव कोदुअमालिअं गुम्हदु अय्या। [अस्माकं भट्टिनी भणति—महाकुलप्रसूता स्निग्धा निपुणेति इमां तावत् कौतुकमालिकां गुम्फत्वार्या।]

(हाथों में फूल लिये चेटी का प्रवेश)

चेटी—आर्या आवन्तिका कहाँ चली गई ? (घूमकर देखकर) अहो ! यह तो चिन्ता के कारण अपने को भी भूल गई है। कुहरे से फीकी बनी चन्द्रकला की भाँति दीख रही है। स्वभाव-सुन्दर वेष धारण किये हुई प्रियंगुलता के नीचे शिला पर बैठी है। अच्छा, इसके निकट चलूँ। (निकट जाकर) आर्या आवन्तिका ! भला मैं तुझे कब से ढूँढ़ रही हूँ।

वासव०—क्यों ?

चेटी—हमारी स्वामिनी कहती हैं—आप अच्छे वंश में उत्पन्न हुई हैं, स्नेह रखती हैं, चतुर हैं; अतः आपही इस सोहागमाला को गूँथें।

gannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

वासव०—अह कस्स किल गुम्हिदव्वं ? [अथ कस्मै किल गुम्फितव्यम् ?]

चेटी—अम्हाअं भट्टिदारिआए । [अस्माकं भर्त्तृदारिकायै ।]

वासव०—(आत्मगतम्) एदं पि मए कत्तव्वं आसी । अहो ! अकरुणा खु इस्सरा । [(आत्मगतम्) एतदपि मया कर्त्तव्यमासीत् । अहो ! अकरुणाः खल्वीश्वराः ।]

चेटी—अय्ये ! मा दाणिं अण्णं चिंतिअ । एसो जामादुओ मणिभूमीए हाअदि । सिग्घं दाव गुम्हेदु अय्या ! [आर्ये ! मेदानीमन्यच्चिन्तयित्वा । एषा जामाता मणिभूम्यां स्नायति । शीघ्रं तावद् गुम्फत्वार्या !]

वासव०—(आत्मगतम्) ण सक्कुणोमि अण्णं चिंतेदुं । (प्रकाशम्) हला ! किं दिट्ठो जामदुओ ? [(आत्मगतम्) न शक्नोम्यन्यच्चिन्तयितुम् । (प्रकाशम्) हला ! किं दृष्टो जामाता ?]

वासव०—किसके लिए गूँथना है ?

चेटी—हमारी राजकुमारी के लिए।

वासव०—(मन में) यह भी मुझे करना था । देवता निश्चय ही निष्ठुर हैं।

चेटी—अब और कुछ मत सोचें । दामाद मणिभूमि में नहा रहे हैं । आप इसे जल्द गूँथ दें ।

वासव०—(मन में) और कुछ नहीं सोच सकती । (प्रकट) क्या तूने दामाद को देखा है ?

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

चेटी—आम, दिट्ठो भट्टिदारिआए सिणेहेण अम्हाअं कोदूहलेण अ। [आम्, दृष्टो भर्तृदारिकायाः स्नेहेनास्माकं कौतूहलेन च।]

वासव०—कीदिसो जामादुओ ? [कीदृशो जामाता ?]

चेटी—अय्ये ! भणामि दाव, ण ईरिसो दिट्ठपुरुवो। [आर्ये ! भणामि तावद्, नेदृशो दृष्टपूर्वः।]

वासव०—हला ! भणाहि भणाहि, किं दंसणीओ ? [हला ! भण भण, किं दर्शनीयः ?]

चेटी—सक्कं भणिदुं सरचावहीणो कामदेवो त्ति। [शक्यं भणितुं शरचापहीनः कामदेव इति।]

वासव०—होदु एत्तअं। [भवत्वेतावत्।]

चेटी—किण्णिमित्तं वारेसि ? [किन्निमित्तं वारयसि ?]

चेटी—हाँ देखा है, राजकुमारी (पद्मावती) के प्रति स्नेह और अपने कौतूहल के कारण।

वासव०—दामाद कैसे हैं ?

चेटी—आर्ये ! मैं तो कहती हूँ, ऐसा दामाद मैंने पहले कभी नहीं देखा।

वासव०—कहो-कहो, क्या वह सुन्दर है ?

चेटी—कहा जा सकता है कि केवल धनुष-बाण से रहित वह कामदेव है।

वासव०—आगे मत कहो

चेटी—क्यों मना करती हो ?

gannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

वासव०—अजुत्तं परपुरुससंकित्तणं सोदुं । [अयुक्तं परपुरुष-सङ्कीर्त्तनं श्रोतुम् ।]

चेटी—तेण हि गुम्हदु अय्या सिग्घं । [तेन हि गुम्फत्वार्या शीघ्रम् ।]

वासव०—इअं गुम्हामि ! आणेहि दाव । [इयं गुम्फामि । आनय तावत् ।]

चेटी—गह्णदु अय्या । [गृह्णात्वार्या ।]

वासव०—(वर्जयित्वा विलोक्य) इमं दाव ओसहं किं णाम ? [इमं तावदौषधं किं नाम ?]

चेटी—अविहवाकरणं णाम । [अविधवाकरणं नाम ।]

वासव०—(आत्मगतम्) इदं बहुसो गुम्हिदव्वं मम अ पद्दुमावदीए अ । (प्रकाशम्) इमं दाव ओसहं किं णाम ? [(आत्मगतम्) इदं बहुशो गुम्फितव्यं मह्यं च पद्मावत्यै च । (प्रकाशम्) इदं तावदौषधं किं नाम ?]

वासव०—परपुरुष की प्रशंसा सुनना उचित नहीं ।

चेटी—अच्छा, तो आप शीघ्र माला गूँथ दें ।

वासव०—अच्छा, गूँथती हूँ; लाओ तो ।

चेटी—यह लीजिए ।

वासव०—(अलग कर और देखकर) इस ओषधि का नाम क्या है ?

चेटी—यह सोहाग रखने की ओषधि है ।

वासव०—(मन में) इसे तो अवश्य गूँथना चाहिए—अपने लिए और पद्मावती के लिए । (प्रकट) इस दूसरी ओषधि का क्या नाम है ?

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

चेटी—सवत्तिमद्दणं णाम । [सपत्नीमर्दनं नाम ।]

वासव०—इदं ण गुम्हिदव्वं । [इदं न गुम्फितव्यम् ।]

चेटी—कीस ? [कस्मात् ?]

वासव०—उवरदा तस्स भय्या, तं णिप्पओअणं त्ति । [उपरता तस्य भार्या, तन्निष्प्रयोजनमिति ।]

(प्रविश्यापरा)

चेटी—तुवरदु, तुवरदु अय्या । एसो जामादुओ अविहवाहि अब्भंतरचउस्सालं पवेसीअदि । [त्वरतां त्वरतामार्या । एष जामाता अविधवाभिरभ्यन्तरचतुश्शालं प्रवेश्यते ।]

वासव०—अइ ! वदामि, गह्ण एदं । [अयि ! वदामि, गृहाणैतत् ।]

चेटी—सोहणं । अय्ये ! गच्छामि दाव अहं । [शोभनम् । आर्ये गच्छामि तावदहम् ।]

(उभे निष्क्रान्ते)

चेटी—'सौत का मान-मर्दन करनेवाली ।'

वासव०—इसे नहीं गूँथना चाहिए ।

चेटी—क्यों ?

वासव०—उनकी पत्नी तो मर चुकी ! अब इसका गूँथना व्यर्थ है ।

(दूसरी चेटी का प्रवेश)

चेटी—शीघ्र करें, शीघ्र करें । सोहागिन दामाद को भीतर चौखंडी में ले जा रही हैं ।

वासव०—सुन, यह तो ।

चेटी—अच्छा ! आर्ये ! अब मैं जाती हूँ ।

(दोनों दासियाँ चली जाती हैं ।)

gannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

वासव०—गदा एसा। अहो! अच्चाहिदं। अय्यउत्तो वि णाम परकेरओ संवुत्तो। अविदा! सय्याए मम दुक्खं विणोदेमि, जदि णिद्दं लभामि। [गतैषा। अहो! अत्याहितम्। आर्यपुत्रोऽपि नाम परकीयः संवृत्तः। अविदा! शय्यायां मम दुःखं विनोदयामि, यदि निद्रां लभे।]

(निष्क्रान्ता)

तृतीयोऽङ्कः समाप्तः

वासव०—यह तो गई। हाय! बहुत बुरा हुआ। आर्यपुत्र भी पराये हो गये। हाय! यदि सो जाती तो मेरा दुःख चला जाता।

(चली जाती है।)

तीसरा अंक समाप्त

❀

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

अथ चतुर्थोऽङ्कः

(ततः प्रविशति विदूषकः)

विदूषकः—(सहर्षम्) भो ! दिट्ठिआ तत्तहोदो वच्छराअस्स अभिषेदविवाहमंगलरमणिज्जो कालो दिट्ठो। भो को णाम एदं जाणादि—तादिसे वयं अणत्थसलिलावत्ते पक्खित्ता उण उम्मज्जिस्सामो त्ति। इदाणिं पासादेसु वसीअदि, अंदेउरद्दिग्घिआसु ह्लाईअदि, पकिदिमउरसुउमाराणि मोदअखज्जआणि खज्जीअंति त्ति अणच्छरसंवासो उत्तरकुरुवासो मए अणुभवी अदि। एक्को खु महंतो दोसो, मम आहारो सुट्ठु ण परिणमदि, सुप्पच्छदणाए सय्याए णिद्दं ण लभामि। जह वादसोणिदं अभिदो विअ वत्तदि त्ति पेक्खामि ! भोः ! सुहं णामअपरिभूदं अकल्लवत्तं च। [भोः ! दिष्ट्या तत्रभवतो वत्सराजस्याभिप्रेतविवाहमङ्गलरमणीयः कालो दृष्टः। भोः ! को नामैतज्जानाति—तादृशे वयमनर्थसलिलावर्ते प्रक्षिप्ताः पुनरुन्मङ्क्ष्याम इति। इदानीं प्रासादेषूष्यते, अन्तःपुरदीर्घिकासु स्नायते, प्रकृतिमधुरसुकुमाराणि मोदक-

---

चौथा अंक

(विदूषक का प्रवेश)

विदूषक—(खुशी से) सौभाग्य से मैंने महाराज वत्सराज उदयन के इष्ट मंगलमय विवाह का शुभ समय देखा। कौन जानता था कि संकट के भँवर में पड़े हुए फिर बाहर निकल आयेंगे। अब हम राजमहलों में रहते हैं। अंतःपुर की बावलियों में नहाते हैं। स्वभाव से मीठी और कोमल मिठाइयाँ खाते हैं। अप्सराओं के बिना हम अन्य सभी स्वर्ग-सुखों को भोग रहे हैं। किन्तु एक बड़ा भारी दोष है कि मुझे

gannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

खाद्यानि खाद्यान्त इत्यनप्सरस्संवास उत्तरकुरुवासो मयाऽनुभूयते। एकः खलु महान् दोषः, ममाहारः सुष्ठु न परिणमति। सुप्रच्छदनायां शय्यायां निद्रां न लभे। यथा वातशोणितमभित इव वर्त्तते इति पश्यामि। भोः! सुखं नामयपरिभूतमकल्यवर्तं च।]

(ततः प्रविशति चेटी)

चेटी—कहिं णु खु गदो अय्यवसंतओ? (परिक्रम्यावलोक्य) अम्हो! एसो अय्यवसंतओ (उपगम्य) अय्य वसंतअ! को कालो तुमं अण्णेसामि। [कुत्र नु खलु गत आर्यवसन्तकः? अहो! एष आर्य-वसन्तकः। आर्य वसन्तक! कः कालः, त्वामन्विष्यामि।]

विदूषकः—(दृष्ट्वा) किंणिमित्तं भद्दे! मं अण्णेससि? [किन्नि-मित्तं भद्रे! मामन्विष्यसि?]

चेटी—अम्हाणं भट्टिणी भणादि—अवि ह्लादो जामादुओ त्ति। [अस्माकं भट्टिनी भणतिअपि स्नातो जामातेति।]

भोजन अच्छी तरह नहीं पचता, सुन्दर गद्दे की शय्या पर नींद भी नहीं आती; मानों वातरक्त के रोग ने चारों ओर से आ दबाया हो। बीमारी में और जहाँ प्रातः भोजन न मिलता हो, कोई भी सुख, सुख नहीं होता।

(चेटी का प्रवेश)

चेटी—आर्य वसंतक कहाँ चला गया? (घूमकर देखकर) अहो! यही तो आर्य वसंतक है! (पास जाकर) आर्य वसंतक! कब से मैं आपको खोज रही हूँ।

विदूषक—(देखकर) किसलिए मुझे ढूँढ़ ही हो?

चेटी—हमारी स्वामिनी पूछती हैं—क्या दामाद नहा लिये?

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

विदूषकः—किंणिमित्तं भोदि ! पुच्छदि ? [किन्निमित्तं भवति ! पृच्छति ?]

चेटी—किमण्णं ? सुमणोवण्णअं आणेमि त्ति । [किमन्यत् ? सुमनोवर्णकमानयामीति ।]

विदूषकः—ह्लादो तत्तभवं । सव्वं आणेदु भोदी वज्जिअ भोअणं । [स्नातस्तत्रभवान् । सर्वमानयतु भवती वर्जयित्वा भोजनम् ।]

चेटी—किंणिमित्तं वारेसि भोअणं ? [किन्निमित्तं वारयसि भोजनम् ?]

विदूषकः—अधण्णस्स मम कोइलाणं अक्खिपरिवट्टो विअ कुक्खिपरिवट्टो संवुत्तो । [अधन्यस्य मम कोकिलानामक्षिपरिवर्त्त इव कुक्षिपरिवर्त्तः संवृत्तः ।]

चेटी—ईदिसो एव्व होहि । [ईदृश एव भव ।]

विदूषक—वह क्यों पूछ रही हैं ?

चेटी—और क्या ? फूलमाला ले आऊँ, इसलिए ।

विदूषक—वह नहा लिये हैं । आप सब कुछ ला सकती हैं, किंतु भोजन नहीं ।

चेटी—तुम भोजन क्यों मना कर रहे हो ?

विदूषक—मुझ भाग्यहीन का पेट ऐसा उलट-पुलट हो रहा है, जैसे कोयल की आँखें ।

चेटी—ऐसा ही बने रहो ।

gannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

विदूषकः—गच्छदु भोदी। जाव अहं वि तत्तहोदो सआसं गच्छामि। [गच्छतु भवती। यावदहमपि तत्रभवतः सकाशं गच्छामि।]

(निष्क्रान्तौ।)

(इति प्रवेशकः)

(ततः प्रविशति सपरिवारा पद्मावती आवन्तिकावेषधारिणी वासवदत्ता च)

चेटी—किण्णिमित्तं भट्टिदारिआ पमदवणं आअदा ? [किन्निमित्तं भर्तृदारिका प्रमदवनमागता ?]

पद्मावती—हला ! ताणि दाव सेहालिआगुम्हआणि पेक्खामि कुसुमिदाणि वा ण वेत्ति ? [हला ! ते तावत् शेफालिकागुल्मकाः पश्यामि कुसुमिता वा नवेति।]

चेटी—भट्टिदारिए ! ताणि कुसुमिदाणि णाम, पवालंतरिदेहिं विअ मौतिआलंबएहिं आइदाणि कुसुमेहिं। [भर्तृदारिके ! ते कुसुमिता नाम, प्रवालान्तरितैरिव मौक्तिकलम्बकैराचिताः कुसुमैः।]

विदूषक—तुम जाओ। मैं भी महाराज के पास जाता हूँ।

(दोनों चले जाते हैं।)

(प्रवेशक समाप्त)

(परिवार-सहित पद्मावती और आवंतिका के वेष में वासवदत्ता का प्रवेश)

चेटी—राजकुमारी प्रमदवन में किसलिए आईं ?

पद्मावती—शेफालिका के गुच्छे खिले हैं या नहीं—यह देखने को।

चेटी—राजकुमारी ! वे खिल गये। मूँगों से भरी मोतियों की माला के समान वे फूलों से भर गये हैं।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

पद्मावती—हला ! जदि एव्वं, किं दाणिं विलंबेसि ? [हला ! यद्येवं किमिदानीं विलम्बसे ?]

चेटी—तेण हि इमस्सिं सिलावट्टए मुहुत्तअं उपविसदु भट्टिदारिआ। जाव अहं वि कुसुमावचअं करेमि। [तेन ह्यस्मिन् शिलापट्टके मुहूर्त्तकमुपविशतु भवती। यावदहमपि कुसुमावचयं करोमि।]

पद्मावती—अय्ये ! किं एत्थ उवविसामो ? [आर्ये ! किमत्रोपविशामः ?]

वासवदत्ता—एव्वं होदु। [एवं भवतु।]

(उभे उपविशतः)

चेटी—(तथा कृत्वा) पेक्खदु पेक्खदु भट्टिदारिआ अद्धमणसिलावट्टएहिं विअ सेहालिआकुसुमेहिं पूरिअं मे अंजलिं। [पश्यतु पश्यतु भर्त्तृदारिका अर्धमनःशिलापट्टकैरिव शेफालिकाकुसुमैः पूरितं मेऽञ्जलिम् ।]

पद्मावती—(दृष्ट्वा) अहो विइत्तदा कुसुमाणं। पेक्खदु पेक्खदु अय्या ! [अहो विचित्रता कुसुमानाम् ! पश्यतु पश्यत्वार्या !]

पद्मावती—सखी, यदि ऐसा है तो अब देर क्यों कर रही हो ?

चेटी—तो इस शिला पर राजकुमारी कुछ देर बैठें तबतक मैं भी कुछ फूल बटोर लूँ।

पद्मावती—आर्ये, क्या हम यहाँ बैठें ?

वासव०—हाँ।

(दोनों बैठ जाती हैं।)

चेटी—(फूल चुनकर) देखिए, राजकुमारी ! देखिए, मनसिल के खंडों के समान शेफालिका के फूलों से मेरी अंजलि भर गई है।

पद्मावती—(देखकर) अहा ! कैसे रंग-विरंगे हैं ये फूल ! आप देखिए तो !

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

वासवदत्ता—अहो ! दस्सणीअदा कुसुमाणं [अहो दर्शनीयता कुसुमानाम् ।]

चेटी—भट्टिदारिए ! किं भूवो अवइणुस्सं ? [भर्तृदारिके ! किं भूयोऽवचेष्यामि ?]

पद्मावती—हला ! मा मा भूयो अवइणिअ । [हला ! मा मा भूयोऽवचित्य ।]

वासव०—हला ! किंणिमित्तं वारेसि ? [हला किन्निमित्तं वारयसि ?]

पद्मावती—अय्यउत्तो इह आअच्छिअ इमं कुसुमसमिद्धिं पेक्खिअ सम्माणिदा भवेअं । [आर्यपुत्र इहागत्येमां कुसुमसमृद्धिं दृष्ट्वा सम्मानिता भवेयम् ।]

वासव०—हला ! पिओ दे भत्ता ! [हला ! प्रियस्ते भर्त्ता !]

पद्मावती—अय्ये ! ण जाणामि, अय्यउत्तेण विरहिदा उक्कंठिदा होमि । [आर्ये ! न जानामि, आर्यपुत्रेण विरहितोत्कण्ठिता भवामि ।]

वासव०—अहो, ये फूल तो बहुत सुन्दर हैं !

चेटी—क्या और फूल चुनूँ ?

पद्मावती—नहीं-नहीं, अब मत चुनो ।

वासव०—सखी ! क्यों रोकती हो ?

पद्मावती—आर्यपुत्र यहाँ आकर इन फूलों को देखकर मुझे आदर देंगे ।

वासव०—सखी ! क्या पति तुझे प्रिय हैं ?

पद्मावती—मैं नहीं जानती, पर उनके बिना मन नहीं लगता ।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

वासव०—(आत्मगतम्) दुक्खरं खु अहं करेमि । इअं वि णाम एव्वं मंतेदि । [दुष्करं खल्वहं करोमि । इयमपि नामैवं मन्त्रयते ।]

चेटी—अभिजादं खु भट्टिदारिआए मंतिदं—पिओ मे भत्तेति । [अभिजातं खलु भर्त्तृदारिकया मन्त्रितम्—प्रियो मे भर्त्तेति ।]

पद्मावती—एक्को खु मे संदेहो । [एकः खलु मे सन्देहः ।]

वासव०—किं किं ? [किं किम् ?]

पद्मावती—जह मम अय्यउत्तो तहं एव्व अय्याए वासवदत्ताए त्ति ? [यथा ममार्यपुत्रस्तथैवार्याया वासवदत्ताया इति ।]

वासव०—अदो वि अहिअं ? [अतोऽप्यधिकम् ।]

पद्मावती—कहं तुवं जाणासि ? [कथं त्वं जानासि ?]

वासव०—(मन में) मैं बहुत कठिन काम कर रही हूँ । यह भी इसी तरह कह रही है ।

चेटी—राजकुमारी ने कुलीनता के अनुसार कहा है कि पति मुझे प्रिय है ।

पद्मावती—मुझे एक सन्देह है ।

वासव०—क्या ?

पद्मावती—जैसे वे मुझे प्रिय हैं, वैसे आर्या वासवदत्ता को भी थे क्या ?

वासव०—इससे भी अधिक ।

पद्मावती—तुझे कैसे मालूम ?

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

वासव०—(आत्मगतम्) हं अय्यउत्तपक्खवादेण अदिक्कंतो समुदाआरो। एव्वं दाव भणिस्सं (प्रकाशम्) जइ अप्पो सिणेहो सा सजणं ण परित्तजदि। [हम्, आर्यपुत्रपक्षपातेनातिक्रान्तः समुदाचारः। एवं तावद् भणिष्यामि। यद्यल्पः स्नेहः सा स्वजनं न परित्यजति।

पद्मावती—होदव्वं। [भवितव्यम्।]

चेटी—भट्टिदारिए! साहु भत्तारं भणाहि—अहं पि वीणं सिक्खिस्सामि त्ति। [भर्तृदारिके! साधु भर्त्तारं भण—अहमपि वीणां शिक्षिष्य इति।]

पद्मावती—उत्तो मए अय्यउत्तो। [उक्तो मयाऽऽर्यपुत्रः।]

वासव०—तदो किं भणिदं? [ततः किं भणितम्?]

पद्मावती—अभणिअ किंचि दिग्घं णिस्ससिअ तुण्हीओ संवुत्तो। [अभणित्वा किञ्चिद् दीर्घं निश्वस्य तूष्णीकः संवृत्तः।]

वासव०—(मन में) पति के पक्षपात के कारण मैं मर्यादा को लाँघ गई। अब ऐसा कहूँ (प्रकट) यदि प्रेम कम होता तो वह बंधुजनों को न त्यागती।

पद्मावती—हो सकता है।

चेटी—राजकुमारी! पति से दृढ़ता से कहो कि मैं भी वीणा सीखूँगी।

पद्मावती—मैंने आर्यपुत्र से कहा था।

वासव०—तब उन्होंने क्या उत्तर दिया?

पद्मावती—कुछ उत्तर नहीं दिया। लंबी साँस लेकर चुप रहे।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

वासव०—तदो तुवं किं विअ तक्केसि ? [ततस्त्वं किमिव तर्कयसि ?]

पद्मावती—तक्केमि अय्याए वासवदत्ताए गुणाणि सुमरिअ दक्खिणदाए मम अग्गदो ण रोदिदित्ति । [तर्कयाम्यार्याया वासवदत्ताया गुणान् स्मृत्वा दक्षिणतया ममाग्रतो न रोदितीति ।]

वासव०—(आत्मगतम्) धारणा खु म्हि, जदि एव्वं सच्चं भवे । [धन्या खल्वस्मि, यद्येवं सत्यं भवेत् ।]

(ततः प्रविशति राजा विदूषकश्च)

विदूषकः—ही ! ही ! पचिअपडिअबंधुजीवकुसुमविरलवादरमणिज्जं पमदवणं । इदो दाव भवं ! [ही ही प्रचितपतितबन्धुजीवकुसुमविरलवातरमणीयं प्रमदवनम् इतस्तावद् भवान् ।]

राजा—वयस्य ! वसन्तक ! अयमयमागच्छामि ।]

वासव०—फिर इससे तुम क्या समझती हो ?

पद्मावती—मैं समझती हूँ कि आर्या वासवदत्ता के गुणों को याद कर शिष्टाचार के कारण मेरे सामने नहीं रोये ।

वासव०—(मन में) मैं धन्य हूँ यदि यह बात सही हो ।

(राजा और विदूषक का प्रवेश)

विदूषक—'बन्धूक' पुष्प कुछ बीन लिये गये हैं और कुछ गिरे पड़े हैं । मन्द-मन्द हवा चल रही है, जिससे यह प्रमद-वन सुहावना हो गया है । आप इधर आइए ।

राजा—मित्र वसन्तक ! यह मैं आया ।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

कामेनोज्जयिनीं गते मयि तदा कामप्यवस्थां गते
दृष्ट्वा स्वैरमवन्तिराजतनयां पञ्चेषवः पातिताः।
तैरद्यापि सशल्यमेव हृदये भूयश्च विद्धा वयं
पञ्चेषुर्मदनो यदा कथमयं षष्ठः शरः पातितः? ॥१॥

विदूषकः—कहिं णु खु गदा तत्तहोदी पदुमावदी, लदा मंडवं गदा भवे, उदाहो असणकुसुमसंचिदं वग्घचम्मावगुंठिदं विअ पव्वदतिलअं णाम सिलापट्टअं गदा भवे, आदु अधिअकडुअगंधसत्तच्छदवणं पविट्ठा भवे, अहव आलिहिदमिअपक्खिसंकुलं दारुपव्वदअं गदा भवे! (ऊर्ध्वमवलोक्य) ही ही सरअकालणिम्मले अंतरिक्खे पसारिअबलदेवबाहुदंसणीअं सारसपंतिं जाव समाहिदं गच्छंतिं पेक्खदु दाव भवं। [कुत्र नु खलु गता तत्रभवती पद्मावती, लतामण्डपं गता भवेत्, उताहो असनकुसुमसञ्चितं व्याघ्रचर्मावगुण्ठितमिव पर्वततिलकं नाम शिलापट्टकं गता भवेत्, अथवा अधिककटुकगन्धसप्तच्छदवनं प्रविष्टा भवेत्, अथवा आलिखितमृगपक्षिसंङ्कुलं दारुपर्वतकं गता भवेत्।

उस समय जब मैं उज्जयिनी गया और अवन्तिराजकुमारी वासवदत्ता को स्वेच्छापूर्वक देखा और (उसे देखने से) मेरी विचित्र दशा हो गई, तब कामदेव ने अपने पाँचों बाण मुझपर चलाये। उनके घाव अभी तक मेरे हृदय से नहीं मिटे। उसने फिर मुझे विद्ध किया। कामदेव के जब पाँच ही बाण हैं तब यह छठा बाण कहाँ से आया?॥१॥

विदूषक—पद्मावती कहाँ गई होंगी? लतामंडप में गई हों अथवा बाघ के चर्म से मढ़े हुए की भाँति 'असन' के फूलों से आच्छादित 'पर्वततिलक' नामक शिलापट्ट को गई हों, अथवा अतिकटु गन्धवाले सप्तच्छद वृक्षों के वन में गई हों अथवा उस काष्ठपर्वत को गई हों, जहाँ पशु-पक्षियों के चित्र बने हैं। (आकाश की ओर देखकर) अहा,

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

(ऊर्ध्वमवलोक्य) ही ! ही ! शरत्कालनिर्मलेऽन्तरिक्षे प्रसारितबलदेव बाहुदर्शनीयां सारसपङ्क्तिं यावत् समाहितं गच्छन्तीं पश्यतु तावद् भवान् ।]

राजा—वयस्य ! पश्याम्येनाम्,

ऋज्वायतां च विरलां च नतोन्नतां च ।
सप्तर्षिवंशकुटिलां च निवर्तनेषु ।
निर्मुच्यमानभुजगोदरनिर्मलस्य
सीमामिवाम्बरतलस्य विभज्यमानाम् ॥२॥

चेटी—पेक्खदु पेक्खदु भट्टिदारिआ एदं कोकणदमालापंडररमणीअं सारसपंतिं जाव समाहिदं गच्छंतिं । अम्मो ! भट्टा ! [पश्यतु पश्यतु भर्तृदारिका एतां कोकनदमालापाण्डररमणीयां सारसपङ्क्तिं यावत् समाहितं गच्छन्तीम् । अहो ! भर्त्ता !]

शरत्काल के स्वच्छ आकाश में बलदाऊ की फैली हुई भुजाओं के सदृश सुन्दर सारस पक्षियों की एक-सी गति से चलती हुई पंक्ति को आप देखिए ।

राजा—मित्र ! देख रहा हूँ ।

यह कहीं सीधी, कहीं चौड़ी, कहीं घनी, कहीं पतली, कहीं ऊँची और कहीं नीची है । घुमाव के समय सप्तर्षि-तारामंडल के समान कुटिल आकार को हो जाती है । जिसने अभी केंचुली छोड़ी है, उस साँप के उदर की भाँति स्वच्छ आकाश को दो भागों में विभाजित करनेवाली सीमा-जैसी मालूम होती है ॥२॥

चेटी—देखिए, राजकुमारी ! सफेद कमल की माला के समान सुन्दर एक गति से चलती हुई सारस-पंक्ति को देखिए । अहो, स्वामी आ गये !

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

पद्मावती—हं ! अय्यउत्तो ! अय्ये ! तव कारणादो अय्य उत्तदसणं परिहरामि । ता इमं दाव माहवीलदामंडवं पविसामो । [हम् ! आर्यपुत्रः । आर्ये ! तव कारणादार्यपुत्रदर्शनं परिहरामि । तदिमं तावन्माधवीलतामण्डपं प्रविशामः ।]

वासव०—एव्वं होदु । [एवं भवतु ।]

(तथा कुर्वन्ति)

विदूषकः—तत्तहोदी पदुमावदी इह आअच्छि अणिग्गदा भवे । [तत्रभवती पद्मावतीहागत्य निर्गता भवेत् ।]

राजा—कथं भवान् जानाति ?

विदूषकः—इमाणि अवइदकुसुमाणि सेफालिआगुच्छआणि पेक्खदु दाव भवं । [इमानपचितकुसुमान् शेफालिका गुच्छान् प्रेक्षतां तावद् भवान् ।]

राजा—अहो ! विचित्रता कुसुमस्य वसन्तक !

पद्मावती—ओह ! आर्यपुत्र आ गये । आर्ये ! तुम्हारे कारण मैं आर्यपुत्र से नहीं मिलती । आओ, वासन्ती-लता-मंडप के भीतर चली जायँ ।

वासव०—अच्छा ।

(लता-मंडप के भीतर चली जाती हैं ।)

विदूषक—महारानी पद्मावती यहाँ आकर लौट गईं ।

राजा—कैसे मालूम हुआ ?

विदूषकः—शेफालिका के इन गुच्छों को देखो । इनसे फूल चुन लिये गये हैं ।

राजा—कैसे विचित्र हैं ये फूल, वसंतक !

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

वासवदत्ता—(आत्मगतम्) वसंतअसंकित्तणेण अहं पुण जाणामि उज्जइणीए वत्तामि त्ति। [वसन्तकसङ्कीर्त्तनेनाहं पुनर्जानामि उज्जयिन्यां वर्त इति।]

राजा—वसन्तक! अस्मिन्नेवासीनौ शिलातले पद्मावतीं प्रतीक्षिष्यावहे।

विदूषकः—भो! तह (उपविश्योत्थाय) ही! ही। सरअकालतिक्खो दुस्सहो आदवो। ता इमं दाव माहवीमंडवं पविसामो। [भोस्तथा (उपविश्योत्थाय)। ही! ही! शरत्कालतीक्ष्णो दुस्सह आतपः। तदिमं तावन्माधवीमण्डपं प्रविशावः।]

राजा—बाढम्, गच्छाग्रतः।

विदूषकः—एव्वं होदु। [एवं भवतु।]

(उभौपरिक्रामतः)

पद्मावती—सव्वं आउलं कत्तुकामो अय्यवसंतओ। किं दाणिं करेम्ह? [सर्वमाकुलं कर्त्तुकाम आर्यवसन्तकः। किमिदानीं कुर्मः?]

वासवदत्ता—(मन में) वसंतक का नाम लेने से मुझे ऐसा लगता है कि मैं उज्जयिनी में ही हूँ।

राजा—वसंतक! इसी शिला पर बैठकर पद्मावती की प्रतीक्षा करें।

विदूषक—हाँ, अच्छा। (बैठकर फिर उठकर) ओह! शरद् की तीखी धूप सही नहीं जाती। आओ, इस माधवीलता के कुंज में चलें।

राजा—अच्छा, आगे चलो।

विदूषक—अच्छा।

(दोनों चलते हैं।)

पद्मावती—आर्य वसंतक तो सब किया कराया बिगाड़ना चाहते हैं। अब क्या किया जाय?

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

चेटी—भट्टिदारिए ! एदं महुअरपरिणिलीणं ओलंबलदं ओधूय भट्टारं वारइस्सं । [भर्त्तृदारिके ! एतां मधुकरपरिनिलीनामवलम्बलतामवधूय भर्त्तारं वारयिष्यामि ।]

पद्मावती—एव्वं करेहि । [एवं कुरु ।]

(चेटी तथा करोति)

विदूषकः—अविहा अविहा, चिट्ठदु चिट्ठदु दाव भवं । [अविहा अविहा । तिष्ठतु तिष्ठतु तावद् भवान् ।]

राजा—किमर्थम् ?

विदूषकः—दासीए पुत्तेहि महुअरेहि पीडिदोम्हि । [दास्याः पुत्रैर्मधुकरैः पीडितोऽस्मि ।]

राजा—मा मा भवानेवम् । मधुकरसन्त्रासः परिहार्यः । पश्य—

चेटी—राजकुमारी ! इस बड़ी लता को, जिसपर भौंरे बैठे हैं, हिलाकर मैं स्वामी को नहीं आने दूँगी ।

पद्मावती—ऐसा ही करो ।

(चेटी वैसा ही करती है ।)

विदूषक—ओह ! ओह ! ठहरिए महाराज, ठहरिए ।

राजा—क्यों ?

विदूषक—ये दुष्ट भौंरे मुझे सता रहे हैं ।

राजा—नहीं, नहीं; तुम ऐसा न करो । भौंरों को त्रस्त नहीं करना चाहिए । देखो—

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

मधुमदकला मधुकरा मदनार्त्ताभिः प्रियाभिरुपगूढाः ।
पादन्यासविषण्णा वयमिव कान्तावियुक्ताः स्युः ॥३॥

तस्मादिहैवासिष्यावहे ।

विदूषकः—एव्वं होदु । [एवं भवतु ।]

(उभावुपविशतः)

चेटी—भट्टिदारिए ! रुद्धा खुम्ह वयं । [भर्त्तृदारिके ! रुद्धाः खलु स्मो वयम् ।]

पद्मावती—दिट्ठिआ उवविट्ठो अय्यउत्तो । [दिष्ट्योपविष्ट आर्यपुत्रः ।]

वासव०—(आत्मगतम्) दिट्ठिआ पकिदित्थसरीरो अय्यउत्तो [दिष्ट्या प्रकृतिस्थशरीर आर्यपुत्रः ।]

चेटी—भट्टिदारिए ! सस्सुपादा खु अय्याए दिट्ठी । [भर्त्तृदारिके ! साश्रुपाता खल्वार्याया दृष्टिः ।]

मधुरस के पीने से मत्त होकर अव्यक्त मधुर कूजन करते हुए तथा कामार्त्त प्रियाओं से आलिंगित ये भ्रमर हमारे पाँव की आहट से त्रस्त होकर, हमारे-जैसे अपनी प्रियाओं से वियुक्त हो जायेंगे ॥३॥

अतः हम दोनों यहीं बैठें ।

विदूषक—अच्छा ।

(दोनों बैठ जाते हैं ।)

चेटी—राजकुमारी ! हम यहाँ घिर गईं ।

पद्मावती—भाग्य से आर्यपुत्र वहीं बैठ गये ।

वासव०—(मन में) भाग्य से आर्यपुत्र स्वस्थ हैं ।

चेटी—राजकुमारी ! आर्या आवन्तिका की आँखों में आँसू भर आये हैं ।

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

वासव०—एसा खु महुअराणं अविण आदो कासकुसुमरेणुणा पडिदेण सोदआ मे दिट्ठी। [एषा खलु मधुकराणामविनयात् काशकुसुमरेणुना पतितेन सोदका मे दृष्टिः।]

पद्मावती—जुज्जइ। [युज्यते।]

विदूषकः—भो! सुण्णं खु इदं पमदवणं। पुच्छिदव्वं किंचि अत्थि। तुच्छामिभवंतं? [भोः शून्यं खल्विदं प्रमदवनम्। प्रष्टव्यं किञ्चिदस्ति। पृच्छामि भवन्तम्?]

राजा—छन्दतः।

विदूषकः—का भवदो पिआ? तदाणिं तत्तहोदी वासवदत्ता इदाणिं पदुमावदी वा? [का भवतः प्रिया? तदानीं तत्रभवती वासवदत्ता, इदानीं पद्मावती वा?]

राजा—किमिदानीं भवान् महति बहुमानसङ्कटे मां न्यस्यति?

पद्मावती—हला! जादिसे संकटे निक्खित्तो आय्यउत्तो। [हला! यादृशे सङ्कटे निक्षिप्त आर्यपुत्रः।]

वासव०—भौंरों की गड़बड़ से कास के फूलों की धूलि मेरी आँखों में पड़ गई; अतः मेरी आँखों में पानी आ गया।

पद्मावती—हाँ, ऐसा ही है।

विदूषक—यह प्रमदवन सूना है। मैं कुछ पूछना चाहता हूँ। आपसे पूछूँ?

राजा—जो चाहो, पूछो।

विदूषक—आपको कौन प्रिय है? तब वासवदत्ता या अब पद्मावती?

राजा—अब क्यों आप मुझे प्रेम-संकट में डाल रहे हैं?

पद्मावती—सखी! आर्यपुत्र कैसे संकट में डाल दिये गये?

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

वासव०—(आत्मगतम्) अहं अ मंदभाआ। [अहं च मन्द-भागा।]

विदूषकः—सेरं भणादु भवं। एक्का उवरदा, अवरा असण्णिहिदा। [स्वैरं स्वैरं भणतु भवान्। एकोपरता, अपराऽसन्निहिता।]

राजा—वयस्य ! न खलु न खलु ब्रूयाम्। भवांस्तु मुखरः।

पद्मावती—एत्तएण भणिदं अय्यउत्तेण। [एतावता भणित-मार्यपुत्रेण।]

विदूषकः—भो ! सच्चेण सवामि, कस्सवि ण आचक्खिस्सं। एसा संदट्ठा मे जीहा। [भोः ! सत्येन शपे, कस्मा अपि नाख्यास्ये। एषा सन्दष्टा मे जिह्वा।]

राजा—नोत्सहे सखे ! वक्तुम्।

पद्मावती—अहो ! इमस्स पुरोभाइदा। एत्तिएण हिअअं ण जाणादि ! [अहो ! अस्य पुरोभागिता एतावता हृदयं न जानाति।]

वासव०—(मन में) और भाग्यहीना मैं भी।

विदूषक—आप संकोच-रहित होकर कहिए। एक तो मर गई और दूसरी पास नहीं।

राजा—मित्र ! मैं नहीं कहूँगा। तुम मुँहफट हो।

पद्मावती—आर्यपुत्र ने इतने में ही कह दिया।

विदूषक—मैं सत्य की सौगंध लेता हूँ कि किसी से भी न कहूँगा। मैंने यह जीभ काट खाई।

राजा—मित्र ! मुझे कहने का साहस नहीं होता।

पद्मावती—ओह, इसका हठ ! इतने से भी मन की बात नहीं समझता।

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

विदूषकः - किं ण भणादि मम ? अणाचक्खिअ इमादो सिला-वट्टआदो ण सक्कं एक्कपदं वि गमिदुं । एसो रुद्धो अत्तभवं । [किं न भणति मम ? अनाख्यायाऽस्माच्छिलापट्टकान्न शक्यमेकपदमपि गन्तुम् । एष रुद्धोऽत्रभवान् ।]

राजा—किं बलात्कारेण ?

विदूषकः—आम, बलक्कारेण । [आम् , बलात्कारेण ।]

राजा—तेन हि पश्यामस्तावत् ।

विदूषकः—पसीददु पसीददु भव । वअस्सभावेण साविदोसि, जइ सच्चं ण भणासि । [प्रसीदतु प्रसीदतु भवान् । वयस्यभावेन शापितोऽसि, यदि सत्यं न भणसि ।]

राजा—का गतिः । श्रूयताम्—

पद्मावती बहुमता मम यद्यपि रूपशीलमाधुर्यैः ।
वासवदत्ताबद्धं न तु तावन्मे मनो हरति ॥४॥

विदूषकः—क्यों नहीं मुझे कहते ? बिना कहे इस शिलापट्ट से एक पग भी नहीं जा सकते । आप यहीं रोके गये ।

राजा—क्या बल से ?

विदूषक—हाँ, बल से ।

राजा—तब हम देखते हैं ।

विदूषक— आप मानिए, आप मानिए । मैत्री की सौगंध, यदि आप सच नहीं कहते ।

राजा—विवश हूँ । सुनो—

रूप, शील और माधुर्य के कारण यद्यपि पद्मावती मुझे बहुत प्रिय है, तो भी वासवदत्ता पर आसक्त मेरे मन को वह नहीं हरती ॥४॥

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

वासव०—(आत्मगतम्) भोदु भोदु। दिण्णं वेदणं इमस्स परिखेदस्स। अहो! अज्ञादवासं पि एत्थ बहुगुणं संपज्जइ। [भवतु भवतु। दत्तं वेतनमस्य परिखेदस्य। अहो! अज्ञातवासोऽप्यत्र बहुगुणः सम्पद्यते।]

चेटी—भट्टिदारिए! अदक्खिण्णो खु भट्टा। [भर्तृदारिके! अदाक्षिण्यः खलु भर्त्ता।]

पद्मावती—हला! मा मा एव्वं। सदक्खिण्णो एव्व अय्यउत्तो जो इदाणिं वि अय्याए वासवदत्ताए गुणाणि सुमरदि। [हला! मा मैवम्। अदाक्षिण्य एवार्यपुत्रः, य इदानीमप्यार्याया वासवदत्ताया गुणान् स्मरति।]

वासव०—भद्दे! अभिजणस्स सदिसं मंतिदं। [भद्रे! अभिजनस्य सदृशं मन्त्रितम्।]

राजा—उक्तं मया। भवानिदानीं कथयतु। का भवतः प्रिया? तदा वासवदत्ता, इदानीं पद्मावती वा?

वासव०—(मन में) बस, मुझे कष्ट का पुरस्कार मिल गया। ओह! अज्ञात होकर यहाँ रहना भी बहुत लाभप्रद हो रहा है।

चेटी—राजकुमारी! स्वामी शिष्ट नहीं हैं।

पद्मावती—ऐसा मत कहो। आर्यपुत्र शिष्ट ही हैं; क्योंकि वे अब भी आर्या वासवदत्ता के गुणों को भूले नहीं।

वासव०—आर्ये! आपने अपने उच्च कुल के अनुरूप ही कहा है।

राजा—मैंने तो कह दिया। अब तुम भी कहो—तुम्हें कौन अच्छी लगती है, तब वासवदत्ता या अब पद्मावती?

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

पद्मावती—अय्यउत्तो वि वसंतओ संवुत्तो। [आर्यपुत्रोऽपि वसन्तकः संवृत्तः।]

विदूषकः—किं मे विप्पलविदेण। उभओ वि तत्तहोदीओ मे बहुमदाओ। [किं मे विप्रलपितेन। उभे अपि तत्रभवत्यौ मे बहुमते।]

राजा—वैधेय ! मामेवं बलाच्छ्रुत्वा किमिदानीं नाभिभाषसे ?

विदूषकः—किं मं पि बलक्कारेण ? [किं मामपि बलात्कारेण ?]

राजा—अथ किम्, बलात्कारेण।

विदूषकः—तेण हि ण सक्कं सोदुं। [तेन हि न शक्यं श्रोतुम्।]

राजा—प्रसीदतु प्रसीदतु महाब्राह्मणः। स्वैरं स्वैरमभिधीयताम्।

पद्मावती—आर्यपुत्र भी वसंतक बन गये।

विदूषक—मेरे बड़बड़ाने से क्या लाभ ? मुझे दोनों अच्छी लगती हैं।

राजा—मूर्ख ! मुझसे हठपूर्वक सुनकर अब क्यों नहीं कहते ?

विदूषक—क्या मुझसे भी बलपूर्वक सुनना चाहते हो ?

राजा—हाँ, बलपूर्वक।

विदूषक—तब तुम नहीं सुन सकते।

राजा—मान जाइए; महाराज, मान जाइए। जैसा चाहिए, कहिए।

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

विदूषकः—इदाणिं सुणादु भवं। तत्तहोदी वासवदत्ता मे बहुमदा। तत्तहोदी पदुमावदी तरुणी दस्सणीआ अकोवणा अणहकारा महुरवाआ सदक्खिण्णा। अअं च अवरो ममंतो गुणो सिणिद्धेण भोअणेण मं पच्चुग्गच्छइ—कहिं णु खु गदो अय्यवसंतओ त्ति। [इदानीं शृणोतु भवान्। तत्रभवती वासवदत्ता मे बहुमता। तत्रभवती पद्मावती तरुणी दर्शनीया अनहङ्कारा मधुरवाक् सदाक्षिण्या। अयं चापरो महान् गुणः, स्निग्धेन भोजनेन मां प्रत्युद्गच्छति कुत्र नु खलु गत आर्यवसन्तक इति।]

वासव०—(स्वगतम्) भोदु भोदु, वसंतअ! सुमरेहि दाणिं एदं। [भवतु भवतु वसन्तक! स्मरेदानीमेताम्।]

राजा—भवतु भवतु वसन्तक! सर्वमेतत् कथयिष्ये देव्यै वासवदत्तायै।

विदूषकः—अविहा वासवदत्ता? कहिं वासवदत्ता? चिरा उवरदा वासवदत्ता। [अविहा वासवदत्ता? कुत्र वासवदत्ता? चिरात् खलूपरता वासवदत्ता।]

राजा—(सविषादम्) एवम्! उपरता।

विदूषक—अब आप सुनें। वासवदत्ता मुझे बहुत मान्य थीं। पद्मावती युवती, सुन्दर, प्रसन्नमुख, गर्वहीन और मधुरभाषिणी हैं। इनमें एक और महान् गुण है कि स्वादिष्ट भोजन से मेरा स्वागत करती हैं और पुकारती हैं कि 'आर्य वसन्तक कहाँ गये?'

वासव०—(मन में) अच्छा, अच्छा वसंतक! अब इसे याद करो।

राजा—अच्छा वसंतक! यह सब मैं देवी वासवदत्ता से कह दूँगा।

विदूषक—हाय, वासवदत्ता! कहाँ है वासवदत्ता? उन्हें मरे कई दिन बीत गये।

राजा—(शोक से) ऐसा? क्या वासवदत्ता मर गईं?

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

अनेन परिहासेन व्याक्षिप्तं मे मनस्त्वया ।
ततो वाणी तथैवेयं पूर्वाभ्यासेन निस्सृता ॥५॥

पद्मावती—रमणीओ खु कहाजोओ णिसंसेण विसंवादिओ। [रमणीयः खलु कथायोगो नृशंसेन विसंवादितः ।]

वासव०—(आत्मगतम्) भोदु, भोदु, विस्सत्थम्हि । अहो ! पिअं णाम, ईदिसं वअणं अप्पच्चक्खं सुणी अदि । [भवतु भवतु, विश्वस्तास्मि । अहो ! प्रियं नाम, ईदृश वचनमप्रत्यक्षं श्रूयते ।]

विदूषकः—धारेदु धारेदु भवं । अणदिक्कमणीओ हि विही। ईदिसं दाणिं एदं। [धारयतु धारयतु भवान् । अनतिक्रमणीयो हि विधिः ईदृशमिदानीमेतत् ।]

इस परिहास से तुमने मेरे मन को अस्थिर बना दिया । इसीलिए तो पहले की तरह वैसे ही यह बात मुँह से निकल पड़ी ॥५॥

पद्मावती—कैसे सुन्दर कथा-प्रसंग को इस दुष्ट ने भंग किया ।

वासव०—(मन में) अच्छा, मुझे अब विश्वास हो गया । कितना अच्छा है, ऐसा वचन परोक्ष में सुनना !

विदूषक—धैर्य रखिए, धैर्य रखिए महाराज ! भाग्य को कोई हटा नहीं सकता । यह तो अब ऐसा सहना ही होगा ।

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

राजा—वयस्य ! न जानाति भवानवस्थाम् ! कुतः ?

दुःखं त्यक्तुं बद्धमूलोऽनुरागः
स्मृत्वा स्मृत्वा याति दुःखं नवत्वम् ।
यात्रा त्वेषा यद् विमुच्येह बाष्पं
प्राप्ताऽऽनृण्या याति बुद्धिः प्रसादम् ॥६॥

विदूषक—अस्सुपादकिलिण्णं खु तत्तहोदो मुहं। जाव मुहोदअं आणेमि। [अश्रुपातक्लिन्नं खलु तत्रभवतो मुखम्। यावन्मुखोदकमानयामि।] (निष्क्रान्तः)

पद्मावती—अय्ये ! बप्फाउलपडंतरिदं अय्यउत्तस्स मुहं। जाव णिक्कमम्ह। [आर्ये ! बाष्पाकुल पटान्तरितमार्यपुत्रस्य मुखम्। यावन्निष्क्रामामः।]

वासव०—एव्वं होदु। चिट्ठ तुवं ! उक्कंठिदं भत्तारं उज्झिअ अजुत्तं णिग्गमणं ! अहं एव्व गमिस्सं। [एवं भवतु। अथवा तिष्ठत्वम्। उत्कण्ठित भर्त्तारमुज्झित्वाऽयुक्तं निर्गमनम्। अहमेव गमिष्यामि।]

राजा—मित्र तुम मेरी दशा को नहीं समझते; क्योंकि दृढ़ प्रेम को त्यागना सरल नहीं। पुनः-पुनः याद करने से दुःख नया हो जाता है। यह लोक-व्यवहार है कि आँसू बहाकर, प्रेम से उऋण होकर मन स्वच्छ हो जाता है ॥६॥

विदूषक—आपका मुख आँसू गिरने से मलिन हो गया है। मैं मुँह धोने के लिए जल लाता हूँ। (चला जाता है।)

पद्मावती—आर्ये ! आर्यपुत्र का मुख आँसुओं से भर गया है और वे उसे रूमाल से ढके हुए हैं। अब हम निकल चलें।

वासव०—अच्छा ! अथवा तुम यहीं रहो। दुःखी स्वामी को छोड़कर तुम्हारा जाना उचित नहीं। मैं ही चली जाती हूँ।

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

चेटी—सुट्ठु अय्या भणादि। उवसप्पदु दाव भट्टिदारिआ। [सुष्ठ्वार्या भणति। उपसर्पतु तावद् भर्तृदारिका।]

पद्मावती—किं णु खु पविसामि ? [किन्नु खलु प्रविशामि।]

वासव०—हला ! पविस। [हला ! प्रविश।]

(इत्युक्त्वा निष्क्रान्ता)

(प्रविश्य)

विदूषकः—(नलिनीपत्रेण जलं गृहीत्वा) एसा तत्तहोदी पदुमावदी ? [एषा तत्रभवती पद्मावती ?]

पद्मावती—अय्य ! वसंतअ ! किं एदं ? आर्य वसन्तक ! किमेतत् ?

विदूषकः—एदं इदं। एदं इदं। [एतदिदम्। इदमेतत्।].

पद्मावती—भणादु भणादु अय्यो भणादु। [भणतु भणत्वार्यो भणतु।]

चेटी—आप ठीक कह रही हैं। राजकुमारी अपने स्वामी के पास जायँ।

पद्मावती—क्या मैं उनके पास जाऊँ ?

वासव०—सखी ! जाओ। (यह कहकर चली जाती है।)

(प्रवेश करके)

विदूषक—(कमल के पत्ते में जल लेकर) यह तो पद्मावती आ गईं ?

पद्मावती—आर्य वसन्तक ! यह क्या ?

विदूषक—वह यह है, यह वह है।

पद्मावती—कहो, श्रीमान् जी, कहो।

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

विदूषकः भोदि ! वादणीदेण कासकुसुमरेणुणा अक्खिणिपडिदेण सस्सुपादं खु तत्तहोदो मुहं । ता गह्णदु होदी इदं मुहोदअं । [भवति ! वातनीतेन काशकुसुमरेणुनाऽक्षिनिपतितेन साश्रुपातं खलु तत्रभवतो मुखम् । तद् गृह्णातु भवतीदं मुखोदकम् ।]

पद्मावती—(आत्मगतम्) अहो ! सदक्खिण्णस्स जणस्स परिजणो वि सदक्खिण्णो एव्व होदि । (उपेत्य) जेदु अय्यउत्तो । इदं मुहोदअं । [अहो ! सदाक्षिण्यस्य जनस्य परिजनोऽपि सदाक्षिण्य एव भवति । (उपेत्य) जयत्वार्यपुत्रः । इदं मुखोदकम् ।]

राजा—अये ! पद्मावती ! (अपवार्य) वसन्तकः किमिदम् ?

विदूषकः—(कर्णे) एव्वं विअ । [एवामिव ।]

राजा— साधु वसन्तक ! साधु (आचम्य) पद्मावति ! आस्यताम् ।

पद्मावती— जं अय्यउत्तो आणवेदि । (उपविशति) [यदार्यपुत्र आज्ञापयति ।]

विदूषक—आर्ये ! 'कास' फूलों का पराग आँख में पड़ जाने से महाराज का मुख आँसुओं से भर गया है । आप मुँह धोने का यह जल लीजिए ।

पद्मावती—(मन में) ओह ! शिष्ट जन के सेवक भी शिष्ट होते हैं । (समीप आकर) आर्यपुत्र की जय हो, यह मुँह धोने का जल है ।

राजा—ओह ! पद्मावती ! (अलग होकर) वसन्तक ! यह क्या ?

विदूषक—(कान में) यह ऐसा है ।

राजा—वसन्तक ! तुमने ठीक किया, ठीक किया (आचमन करके) पद्मावती बैठो ।

पद्मावती—जैसी आपकी आज्ञा ! (बैठ जाती है ।)

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

राजा—पद्मावति !

शरच्छशाङ्कगौरेण वाताविद्धेन भामिनि ।
काशपुष्पलवेनेदं साश्रुपातं मुखं मम ॥७॥

(आत्मगतम्)

इयं बाला नवोद्वाहा सत्यं श्रुत्वा व्यथां व्रजेत् ।
कामं धीरस्वभावेयं स्त्रीस्वभावस्तु कातरः ॥८॥

विदूषकः—उइदं तत्तहोदो मअधराअस्स अवरण्हकाले भवंतं अग्गदो करिअ सुहिज्जणदंसणं। सक्कारो हि णाम सक्कारेण पडिच्छिदो पीदिं उप्पावेदि । ता उट्ठदु दाव भवं । [उचितं तत्रभवतो मगधराजस्या-पराह्णकाले भवन्तमग्रतः कृत्वा सुहृज्जनदर्शनम् । सत्कारो हि नाम सत्कारेण प्रतीष्टः प्रीतिमुत्पादयति । तदुत्तिष्ठतु तावद् भवान् ।]

राजा—पद्मावती ! शरद के चन्द्र की भाँति उज्ज्वल कास-फूल की धूलि हवा से उड़कर मेरी आँखों में आ गिरी है, जिससे मेरा मुख, प्रिये ! आँसुओं से भर गया है ॥७॥

(मन में)

यह बालिका अभी ब्याही है । सच सुनकर इसे दुःख होता । यद्यपि इसका स्वभाव गंभीर है तो भी स्त्रियों का स्वभाव भीरु होता है ॥८॥

विदूषक—श्रीमान् मगधराज दर्शक ने दिन के अन्तिम भाग में आपको साथ लेकर मित्रों से भेंट करना उचित समझा है । तो अब आप उठिए; क्योंकि यदि आदर का बदला आदर से दिया जाय तो प्रेम बढ़ता है ।

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

राजा—बाढम् । प्रथमः कल्पः । (उत्थाय)

गुणानां वा विशालानां सत्काराणां च नित्यशः ।
कर्त्तारः सुलभा लोके विज्ञातारस्तु दुर्लभाः ॥६॥

(निष्क्रान्ताः सर्वे)

चतुर्थोऽङ्कः समाप्तः

———

राजा—हाँ, ठीक है। यह तो उत्तम प्रस्ताव है। (उठकर) परोपकार आदि विशाल सत्कर्म और जन-सम्मान को नित्य करनेवाले तो लोक में बहुत पाये जाते हैं, किन्तु उनके जानकार विरले ही हैं ॥६॥

(सब चले जाते हैं।)

चतुर्थ अंक समाप्त

—:०:—

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

अथ पञ्चमोऽङ्कः

(ततः प्रविशति पद्मिनिका)

पद्मिनिका—महुअरिए ! महुअरिए ! आअच्छ दाव सिग्घं । [मधुकरिके ! मधुकरिके ! आगच्छ तावच्छीघ्रम् ।]

(प्रविश्य)

मधुकरिका—हला ! इअम्हि । किं करीअदु ? [हला ! इयमस्मि मधुकरिके । किं क्रियताम् ?]

पद्मिनिका—हला ! किं ण जाणासि तुवं—भट्टिदारिआ पदुमावदी सीर्षवेदणाए दुक्खावदेत्ति । [हला ! किं न जानासि त्वं—भर्त्तृदारिका पद्मावती शीर्षवेदनया दुःखितेति ।]

मधुकरिका—हद्धि ! [हा धिक् !]

पाँचवाँ अंक

(पद्मिनिका का प्रवेश)

पद्मिनिका—मधुकरिका ! मधुकरिका ! जल्दी आओ ।

(आकर)

मधुकरिका—सखी ! यह आ गई । क्या करना है ?

पद्मिनिका—सखी ! क्या तू नहीं जानती कि राजकुमारी पद्मावती सिर-दर्द से पीड़ित है ?

मधुकरिका—हाय, बहुत बुरा !

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

पद्मिनिका—हला ! गच्छ सिग्घं, अय्यं अवंतिअं सद्दावेहि। केवलं भट्टिदारिआए सीसवेदणं एव्व णिवेदेहि। तदो सअं एव्व आगमिस्सदि ? [हला ! गच्छ शीघ्रम्, आर्यामावन्तिकां शब्दायस्व। केवलं भर्त्तृदारिकायाः शीर्षवेदनामेव निवेदय। ततः स्वयमेवागमिष्यति।]

मधुकरिका—हला ! किं सा करिस्सदि ? [हला किं सा करिष्यति ?]

पद्मिनिका—सा खु दाणिं महुराहि कहाहि भट्टिदारिआए सीसवेदणं विणोदेदि। [सा खल्विदानीं मधुराभिः कथाभिर्भर्त्तृदारिकायाः शीर्षवेदनां विनोदयति।]

मधुकरिका—जुज्जइ ! कहिं सअणीअं रइदं भट्टिदारिआए ? [युज्यते। कुत्र शयनीयं रचितं भर्त्तृदारिकायाः ?]

पद्मिनिका—समुद्दगिहके किल सेज्जात्थिण्णा। गच्छ दाणिं तुवं। अहं वि भट्टिणो णिवेदणत्थं अय्यवसंतअं अण्णेसामि। [समुद्रगृहके किल शय्याऽऽस्तीर्णा। गच्छेदानीं त्वम्। अहमपि भर्त्तृनिवेदनार्थमार्यवसन्तकमन्विष्यामि।]

पद्मिनिका—सखी ! जल्दी जाओ, आर्या आवन्तिका को बुला लाओ। राजकुमारी के सिर-दर्द की ही बात कहना। वह आप ही चली आयेगी।

मधुकरिका—सखी ! वह क्या करेगी ?

पद्मिनिका—वह आकर मधुर कहानियाँ सुनाकर राजकुमारी के सिर-दर्द को कम करेगी।

मधुकरिका—ठीक है। राजकुमारी की शय्या कहाँ बिछी है ?

पद्मिनिका—समुद्रगृह में शय्या बिछी है। तू अब जा। मैं भी महाराज को सूचित करने के लिए आर्य वसंतक को ढूँढ़ती हूँ।

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

मधुकरिका—एव्वं होदु । (निष्क्रान्ता) [एवं भवतु ।]

पद्मिनिका—कहिं दाणिं अय्यवसंतअं पेक्खामि ? [कुत्रदानीमार्यवसन्तकं पश्यामि ?]

(ततः प्रविशति विदूषकः)

विदूषकः—अज्ज खु देवीविओअविहुरहिअअस्स तत्तहोदो वच्छराअस्स पदुमावदीपाणिग्गहणसमीरिअस्स अच्चंतसुहावहे मंगलोसवे मदणग्गिदाहो अहिअदरं वड्ढइ । (पद्मिनिकां विलोक्य) अयि पदुमिणिआ ? पदुमिणिए ! किं इह वत्तदि ? [अद्य खलु देवीवियोगविधुर हृदयस्य तत्रभवतो वत्सराजस्य पद्मावतीपाणिग्रहणसमीरितस्यात्यन्तसुखावहे मङ्गलोत्सवे मदनाग्निदाहोऽधिकतरं वर्धते । (पद्मिनिकां विलोक्य) अयि पद्मिनिका ? पद्मिनिके ! किमिह वर्त्तते ?]

पद्मिनिका—अय्य ! वसंतअ ! किं ण जाणासि तुवंभट्टिदारिआ पदुमावदी सीसवेदणाए दुःखाविदेत्ति । [आर्य ! वसन्तक ! किं न जानासि त्वं भर्तृदारिका पद्मावती शीर्षवेदनया दुःखितेति ।]

मधुकरिका—ठीक है । (चली जाती है ।)

पद्मिनिका—मैं अब आर्य वसंतक को कहाँ देखूँ ?

(विदूषक का प्रवेश)

विदूषक—देवी वासवदत्ता के वियोग से व्याकुल हृदयवाले श्रीमान् वत्सराज उदयन का कामज्वर पद्मावती के साथ विवाह होने से आज इस अतिसुखदायक विवाहोत्सव में बहुत ही अधिक बढ़ रहा है। (पद्मिनिका को देखकर) ओह पद्मिनिका ! पद्मिनिका ! क्या बात है ?

पद्मिनिका—आर्य वसंतक ! क्या तुम नहीं जानते कि राजकुमारी पद्मावती सिर-दर्द से पीड़ित है ?

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

विदूषकः—भोदि ! सच्चं ? ण जाणामि । [भवति ! सत्यं ? न जानामि ।]

पद्मिनिका—तेण हि भट्टिणो णिवेदे हि णं । जाव अहं वि सीसाणुलवणं तुवारेमि । [तेन हि भर्त्रे निवेदयै नाम् । यावदहमपि शीर्षानुलेपनं त्वरयामि ।]

विदूषकः—कहिं सअणीअं रइदं पदुमावदीए ? [कुत्र शयनीयं रचितं पद्मावत्याः ?]

पद्मिनिका—समुद्दगिहके किल सेज्जात्थिण्णा । [समुद्रगृहके किल शय्याऽऽस्तीर्णा ।]

विदूषकः—गच्छदु भोदि । जाव अहं वि तत्तहोदो णिवेदइस्सं । [गच्छतु भवती । यावदहमपि तत्रभवते निवेदयिष्यामि ।]

(निष्क्रान्तौ)

[प्रवेशकः]

विदूषक—ठीक ! मैं नहीं जानता ।

पद्मिनिका—तुम राजा से यह बात कह देना । मैं भी जबतक सिर का लेप जल्द तैयार करती हूँ ।

विदूषक—पद्मावती की शय्या बिछी है ।

पद्मिनिका—समुद्रगृह में शय्या बिछी है ।

विदूषक—तुम जाओ । तो मैं भी राजा को सूचित करता हूँ ।

(दोनों चले जाते हैं ।)

(प्रवेशक समाप्त)

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

(ततः प्रविशति राजा)

राजा—

श्लाघ्यामवन्तिनृपतेः सदृशीं तनूजां
कालक्रमेण पुनरागतदारभारः।
लावाणके हुतवहेन हृताङ्गयष्टिं
तां पद्मिनीं हिमहतामिव चिन्तयामि ॥१॥

(प्रविश्य)

विदूषकः—तुवरदु तुवरदु दाव भवं। [त्वरतां त्वरतां तावद् भवान्।]

राजा—किमर्थम् ?

विदूषकः—तत्तहोदी पदुमावदी सीसवेदणाए दुक्खाविदा। [तत्रभवती पद्मावती शीर्षवेदनया दुःखिता।]

राजा—कैवमाह—

(राजा का प्रवेश)

राजा—कुछ काल के बीत जाने पर फिर से पत्नी के भार को प्राप्त होकर मैं अपने सदृश गुण-रूपवती अवन्तिराज की उस प्रशंसा-योग्य कन्या को, जिसके सुन्दर अंग लावाणक में अग्नि द्वारा जल गये, हिम से विनष्ट कमलिनी के सदृश याद करता हूँ। ॥१॥

(आकर)

विदूषक—जल्दी कीजिए, आप जल्दी कीजिए।

राजा—क्यों ?

विदूषक—श्रीमती पद्मावती शिरोवेदना से पीड़ित हैं।

राजा—किसने ऐसा कहा ?

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

विदूषकः—पदुमिणिआए कहिदं। [पद्मिनिकया कथितम्।]

राजा—भोः! कष्टम्,

रूपश्रिया समुदितां गुणतश्च युक्तां
लब्ध्वा प्रियां मम तु मन्द इवाद्य शोकः।
पूर्वाभिघातसरुजोऽप्यनुभूतदुःखः
पद्मावतीमपि तथैव समर्थयामि ॥२॥

अथ कस्मिन् प्रदेशे वर्त्तते पद्मावती?

विदूषकः—समुद्दगिहके किल सेज्जात्थिण्णा। [समुद्रगृहके किल शय्याऽऽस्तीर्णा।]

राजा—तेन हि तस्य मार्गमादेशय।

विदूषकः—एदु एदु भवं। [एत्वेतु भवान्।]

(उभौ परिक्रामतः)

विदूषक—पद्मिनिका ने ऐसा कहा।

राजा—बहुत बुरा हुआ।

मैं पहले ही वासवदत्ता का मृत्यु-रूपी चोट से पीड़ित था, पर रूप-शोभा से समुन्नत तथा गुणों से युक्त प्रिया पद्मावती को पाकर आज मेरा शोक मन्द-सा हो गया था; किन्तु पूर्व-दुःख के अनुभव से मैं पद्मावती की भी वैसी दशा समझ रहा हूँ। अर्थात् जैसे वासवदत्ता का प्राणान्त हुआ, वैसे पद्मावती का भी अन्त होगा। ॥२॥

अच्छा, पद्मावती कहाँ है?

विदूषक—समुद्र-गृह में शय्या बिछी है।

राजा—तो उसका मार्ग बताओ।

विषदूक—आइए, आप आइए। (दोनों चलते हैं।)

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

विदूषकः—इदं समुद्दगिहकं । पविसदु भवं । [इदं समुद्रगृहकम् । प्रविशतु भवान् ।]

राजा—पूर्वं प्रविश ।

विदूषकः—भोः ! तह । (प्रविश्य) अविहा ! चिट्ठदु चिट्ठदु दाव भवं । [भोः ! तथा ! (प्रविश्य) ! अविहा ! तिष्ठतु तिष्ठतु तावद् भवान् ।]

राजा—किमर्थम् ?

विदूषकः—एसो खु दीवप्पभावसूइदरूवो वसुधातले परिवत्तमाणो अअं काकोदरो । [एष खलु दीपप्रभावसूचितरूपो वसुधातले परिवर्त्तमानोऽयं काकोदरः ।]

राजा—(प्रविश्यावलोक्य सस्मितम्) अहो ! सर्पव्यक्तिर्वैधेयस्य ।

विदूषक—यह समुद्र-गृह है । आप अन्दर चलिए ।

राजा—पहले तुम प्रवेश करो ।

विदूषक—अच्छा (प्रवेश करके), ठहरिए तो, आप ठहरिए ।

राजा—क्यों ?

विदूषक—यह पृथ्वी पर लोटता हुआ सर्प दीपक के प्रकाश में स्पष्ट दीख रहा है ।

राजा—(जाकर देखकर, हँसकर) अहा ! यह मूर्ख इसे साँप समझ रहा है ।

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

ऋज्वायतां हि मुखतोरणलोलमालां
भ्रष्टां क्षितौ त्वमवगच्छसि मूर्ख ! सर्पम् ।
मन्दानिलेन निशि या परिवर्त्तमाना
किञ्चित्करोति भुजगस्य विचेष्टितानि ॥३॥

विदूषकः—(निरूप्य) सुट्ठ भवं भणादि । ण हु अअं काओ-अरो । (प्रविश्यावलोक्य) तत्तहोदी पदुमावदी इह आअच्छिअ णिग्गदा भवे । [सुष्ठु भवान् भणति । न खल्वयं काकोदरः । (प्रविश्यावलोक्य) तत्रभवती पद्मावतीहागत्य निर्गता भवेत् ।]

राजा वयस्य ! अनागतया भवितव्यम् !

विदूषकः कहं भवं जाणादि ? [कथं भवान् जानाति ?]

राजा—किमत्र ज्ञेयम् ? पश्य—

शय्या नावनता तथास्तृतसमा न व्याकुलप्रच्छदा
न क्लिष्टं हि शिरोपधानममलं शीर्षाभिघातौषधैः ।

मूर्ख, प्रवेश-द्वार पर लटकती हुई सीधी लम्बी हिलती हुई माला को तू साँप समझ रहा है, जो रात में मन्द वायु के झकोरों से लोट-पोट हो कुछ साँप की चेष्टाओं का अनुकरण कर रही है ॥३॥

विदूषक—(सूक्ष्मतया देखकर) आप ठीक कह रहे हैं । निश्चित ही यह साँप नहीं है । (प्रवेश कर और देखकर) श्रीमती पद्मावती जी यहाँ आकर चली गई होंगी ।

राजा—मित्र, अभी आई नहीं होंगी ।

विदूषक—आप कैसे जानते हैं ?

राजा—इसमें क्या जानना है ? देखो—

सेज दबी नहीं है । जैसी बिछी थी वैसी ही है । कहीं भी सिकुड़न

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

रोगे दृष्टिविलोभनं जनयितुं शोभा न काचित्कृता
प्राणी प्राप्य रुजा पुनर्न शयनं शीघ्रं स्वयं मुञ्चति ॥४॥

विदूषकः—तेण हि इमस्सिं सय्याए मुहुत्तअं उवविसिअं तत्त-होदिं पडिवालेदु भवं। [तेन ह्यस्यां शय्यायां मुहूर्त्तमुपविश्य तत्रभवतीं प्रतिपालयतु भवान्।]

राजा—बाढम्। (उपविश्य) वयस्य निद्रा मां बाधते। कथ्यतां काचित् कथा।

विदूषकः—अहं कहइस्सं। हों त्ति करेदु अत्तभवं। [अहं कथयिष्यामि। हों इति करोत्वत्रभवान्।]

राजा—बाढम्।

विदूषकः—अत्थि णअरी उज्जइणी णाम। तहिं अहिअ रमणी-आणि उदअण्हाणाणि वत्तंति किल। [अस्ति नगर्युज्जयिनी नाम। तत्राधिकरमणीयान्युदकस्नानानि वर्त्तन्ते किल।]

नहीं है। सिर-दर्द की औषधियों से स्वच्छ तकिया भी मैला नहीं हुआ। रोग की दशा में आँखों को लुभाने के लिए कोई सजावट भी नहीं की गई है। फिर रोगग्रस्त मनुष्य अपनी इच्छा से शीघ्र शय्या को नहीं छोड़ता। ॥४॥

विदूषक—तो इस शय्या पर क्षण-भर बैठकर आप उनकी प्रतीक्षा करें।

राजा—अच्छा (बैठकर) मित्र, मुझे नींद तंग कर रहा है। कोई कथा सुनाओ।

विदूषक मैं सुनाता हूँ। आप हूँ-हूँ करते जाइए।

राजा—अच्छा।

विदूषक—उज्जयिनी नाम की एक नगरी है। वहाँ स्नान करने के बहुत सुन्दर स्थान हैं।

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepal

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

राजा—कथमुज्जयिनी नाम ?

विदूषकः—जइ अणभिप्पेदा एसा कहा, अण्णं कहइस्सं ।
[यद्यनभिप्रेतैषा कथा, अन्यां कथयिष्यामि ।]

राजा—वयस्य ! न खलु नाभिप्रेतैषा कथा । किन्तु—

स्मराम्यवन्त्याधिपतेः सुतायाः
प्रस्थानकाले स्वजनं स्मरन्त्याः ।
बाष्पं प्रवृत्तं नयनान्तलग्नं
स्नेहान्ममैवोरसि पातयन्त्याः ॥५॥

अपि च—

बहुशोऽप्युपदेशेषु यया मामीक्षमाणया ।
हस्तेन स्रस्तकोणेन कृतमाकाशवादितम् ॥६॥

राजा—क्या उज्जयिनी ?

विदूषक—यदि यह कथा आपको पसन्द नहीं तो मैं दूसरी कथा सुनाता हूँ ।

राजा—मित्र ! ऐसा नहीं कि यह कथा मुझे अच्छी नहीं लगती । किन्तु—

चलते समय बन्धुजनों का स्मरण करती हुई अवन्ति-नरेश की पुत्री वासवदत्ता की मुझे याद हो आती है जबकि वह उमड़कर भी नेत्रों के कोने में रुके हुए आँसुओं को प्रेम से मेरी ही छाती पर गिरा रही थी । ॥५॥

और भी—

(वीणा बजाने के) बहुत-से शिक्षणों में मुझे देखते हुए जिसने हाथ से कोण के गिर जाने पर शून्य में ही खाली हाथ चलाये । ॥६॥

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

विदूषकः—भोदु, अण्णं कहइस्सं। अत्थि णअरं ब्रह्मदत्तं णाम। तहिं किल राआ कंपिल्लो णाम। [भवतु, अन्यां कथयिष्यामि। अस्ति नगरं ब्रह्मदत्तं नाम। तत्र किल राजा काम्पिल्यो नाम।]

राजा—किमिति किमिति ?

विदूषकः—(पुनस्तदेव पठति)

राजा—मूर्ख ! राजा ब्रह्मदत्तः, नगरं काम्पिल्यमित्यभिधीयताम्।

विदूषकः—किं राआ ब्रह्मदत्तो णअरं कंपिल्लं ? [किं राजा ब्रह्मदत्तः, नगरं काम्पिल्यम् ?]

राजा—एवमेतत्।

विदूषकः—तेण हि मुहुत्तअं पडिवालेदु भवं जाव अट्ठगअं करिस्सं। राआ ब्रह्मदत्तो णअरं कंपिल्लं। (इति बहुशस्तदेव पठति) इदाणिं सुणादु भवं। अयि ! सुत्तो अत्तभवं ? अदिसीदला इअं वेला। अत्तणो पावार अंगरिहअ आअमिस्सं। (निष्क्रान्तः) [तेन हि मुहूर्त्तकं प्रतिपालयतु भवान्, यावदोष्ठगतं करिष्यामि। राजा ब्रह्मदत्तः, नगरं

विदूषक—अच्छा, दूसरी कथा कहता हूँ। ब्रह्मदत्त नाम का एक नगर है। वहाँ काँपिल्य नाम का राजा है।

राजा—क्या, क्या ?

(विदूषक फिर वही कहता है)

राजा—मूर्ख ! राजा ब्रह्मदत्त और नगर काँपिल्य—ऐसा कहो।

विदूषक—क्या राजा ब्रह्मदत्त और नगर काँपिल्य ?

राजा—हाँ, ऐसा ही है ?

विदूषक—तो कुछ समय ठहरो, तबतक मैं इसे कण्ठस्थ कर लूँ—राजा ब्रह्मदत्त और नगर काँपिल्य। (कई बार इसी को कहकर) अब

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

काम्पिल्यम् (इति बहुशस्तदेव पठति) इदानीं शृणोतु भवान्। अयि सुप्तोऽत्रभवान्। अतिशीतलेयं वेला। आत्मनः प्रावारकं गृहीत्वाऽऽगमिष्यामि।]

(ततः प्रविशति वासवदत्ता आवन्तिकावेषेण चेटी च)

चेटी—एदु एदु अय्या! दिढं खु भट्टिदारिआ सीसवेदणाए दुक्खाविदा। [एत्वेत्वार्या। दृढं खलु भर्त्तृदारिका शीर्षवेदनया दुःखिता।]

वासव०—हद्धि! कहिं सअणीअं रइदं पदुमावदीए? [हा धिक् कुत्र शयनीयं रचितं पद्मावत्याः?]

चेटी—समुद्दगिहके किल सेज्जात्थिण्णा। [समुद्रगृहके किल शय्याऽऽस्तीर्णा।]

वासव०—तेण हि अग्गदो याहि। [तेन ह्यग्रतो याहि।]

आप सुनिए। ओह! आप तो सो गये। इस समय बहुत शीत है। मैं ओढ़ने की चादर लेकर आता हूँ।

(आवन्तिका के वेष में वासवदत्ता और एक दासी का प्रवेश)

चेटी—आर्या! इधर आइए, इधर आइए। राजकुमारी सिर-दर्द से बहुत ही दुःखी हैं।

वासवदत्ता—बहुत कष्ट! पद्मावती की सेज कहाँ बिछी है?

चेटी—समुद्रगृह में सेज बिछी है।

वासवदत्ता—तो आगे चलो। (दोनों चलती हैं।)

चेटी—यह समुद्रगृह है। आप अन्दर चलें।

वासवदत्ता—तुम आगे-आगे चलो।

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

(उभे परिक्रामतः)

चेटी—इदं समुद्दगिहकं। पविसदु अय्या। जाव अहं वि सीसाणुलेवणं तुवारेमि। [इदं समुद्रगृहकम्। प्रविशत्वार्या यावदहमपि शीर्षानुलेपनं त्वरयामि।] (निष्क्रान्ता)

वासव०—अहो! अकरुणा खु इस्सरा मे। विरहपय्युम्सुअस्स अय्यउत्तस्स विस्समत्थाणभूदा इअं वि णाम पदुमावदी अस्सत्था जादा। जाव पविसामि। (प्रविश्यावलोक्य) अहो! परिजणस्स पमादो। अस्सत्थं पदुमावदिं केवलं दीवसहाअं करिअ परित्तजदि। इअं पदुमावदी ओसुत्ता। जाव उवविसामि। अहव अञ्जासणपरिग्गहेण अप्पो विअ सिणेहो पडिभादि। ता इमस्सिं सय्याए उवविसामि। (उपविश्य) किं णु हु एदाए सह उवविसंतीए अज्ज पल्हादिदं विअ मे हिअअं। दिट्ठिआ अविच्छिण्णसुहणिस्सासा। णिव्वुत्तरोआए होदव्वं। अहव

(दोनों चलती हैं।)

चेटी—यह समुद्रगृह है। आप भीतर चलें। तबतक मैं भी सिर-दर्द का लेप जल्दी से तैयार करूँ। (चली जाती है।)

वासवदत्ता—हाय! देवता मुझपर निर्दय हो रहे हैं। मेरे वियोग से उत्कंठित आर्यपुत्र के विनोद का स्थान पद्मावती भी अस्वस्थ हो गई। अच्छा, मैं भीतर चलूँ। (भीतर जाकर और देखकर) ओह! सेवकों की असावधानी, जो कि अस्वस्थ पद्मावती को दीपक के सहारे अकेली छोड़कर चले गये हैं। पद्मावती सोई है। तो मैं बैठती हूँ। अथवा यदि मैं किसी दूसरे आसन पर बैठी तो ऐसा मालूम होगा कि पद्मावती के प्रति मेरा प्रेम कम है। अतः इसी शय्या पर बैठ जाऊँ। (बैठकर) क्यों आज इसके साथ बैठते हुए मेरा हृदय प्रसन्न-सा हो रहा है। सौभाग्य से यह सुख से श्वास ले रही है। प्रतीत

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

एअदेससंविभाअदाए सअणीअस्स सुएदि मे आलिंगेहि त्ति। जाव सइस्सं। (शयनं नाटयति) [अहो ! अकरुणाः खल्वीश्वरा मे। विरह-पर्युत्सुकस्यार्यपुत्रस्य विश्रमस्थानभूतेयमपि नाम पद्मावत्यस्वस्था जाता यावत् प्रविशामि। (प्रविश्यावलोक्य) अहो ! परिजनस्य प्रमादः। अस्वस्थां। पद्मावतीं केवलं दीपसहायां कृत्वा परित्यजति। इयं पद्मावत्य-वसुप्ता। यावदुपविशामि। अथवाऽन्यासनपरिग्रहेणाऽल्प इव स्नेहः प्रतिभाति। तदस्यां शय्यायामुपविशामि। (उपविश्य) किं नु खल्वेतया सहोपविशन्त्या अद्य प्रह्लादितमिव मे हृदयम्। दिष्ट्याऽविच्छिन्नसुख-निःश्वासा। निवृत्तरोगया भवितव्यम्। अथवैकदेशसंविभागतया शयनीयस्य सूचयति मामालिङ्गेति। यावच्छयिष्ये।]

राजा—(स्वप्नायते) हा वासवदत्ते !

वासवदत्ता—(सहसोत्थाय) हं ! अय्यउत्तो, ण हु पदुमावदी ? किं णु खु दिट्ठम्हि ? महंतो खु अय्यजोअंधराअणस्स पडिण्णाहारो मम दंसणेण णिप्फलो संवुत्तो। [हम् ! आर्यपुत्रः, न खलु पद्मावती ? किन्नु खलु दृष्टास्मि ? महान् खल्वार्ययौगन्धरायणस्य प्रतिज्ञाभारो मम दर्शनेन निष्फलः संवृत्तः।]

होता है कि यह नीरोग हो गई है। अथवा शय्या पर एक ओर सोने से मुझे कह रही है कि तू मुझे आलिंगन कर। अच्छा, मैं सो जाऊँ। (सो जाती है।)

राजा—(स्वप्नावस्था में प्रलाप करता है) हा वासवदत्ता !

वासवदत्ता—(सहसा उठकर) हूँ, यह तो आर्यपुत्र हैं, पद्मावती नहीं। क्या मुझे देख लिया ? तब तो आर्य यौगंधरायण का महान् प्रयास मेरे दर्शन से विफल हो गया।

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

राजा—हा ! अवन्तिराजपुत्रि !

वासवदत्ता—दिट्ठिआ सिविणाअदि खु अय्यउत्तो। ण एत्थ कोचि जणो। जाव मुहुत्तअं चिट्ठिअ दिट्ठिं हिअअं च तोसेमि। [दिष्ट्या स्वप्नायते खल्वार्यपुत्रः । नात्र कश्चिज्जनः। यावन्मुहूर्त्तकं स्थित्वा दृष्टिं हृदयं च तोषयामि ।]

राजा—हा ! प्रिये ! हा ! प्रियशिष्ये ! देहि मे प्रतिवचनम् ।

वासवदत्ता—आलवामि भट्टा ! आलवामि । [आलपामि भर्त्तः । आलपामि ।]

राजा—किं कुपितासि ?

वासवदत्ता—णहि णहि, दुक्खिदम्हि ।

राजा—यद्यकुपिता, किमर्थं नालङ्कृतासि ?

वासवदत्ता—इदो वरं किम् ? [इतः परं किम् ?]

राजा—हा अवन्तिराजपुत्री !

वासवदत्ता—सौभाग्य से आर्यपुत्र स्वप्न में बोल रहे हैं। यहाँ कोई मनुष्य नहीं। थोड़ी देर ठहरकर दृष्टि और हृदय को प्रसन्न कर लूँ ।

राजा—हा प्रिये ! हा प्रियशिष्ये ! मुझे उत्तर दो ।

वासव०—उत्तर देती हूँ ! उत्तर देती हूँ ।

राजा—क्या तुम रुष्ट हो ?

वासव०—नहीं, नहीं, मैं दुःखित हूँ ।

राजा—यदि रुष्ट नहीं हो तो तुमने गहने क्यों नहीं पहने ?

वासव०—और क्या ?

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

राजा—किं विरचिकां स्मरसि ?

वासवदत्ता—(सरोषम्) आ अवेहि, इहावि विरचिआ ? [आ अपेहि, इहापि विरचिका ?]

राजा—तेन हि विरचिकार्थं भवतीं प्रसादयामि ।

(हस्तौ प्रसारयति)

वासवदत्ता—चिरं ठिदम्हि । कोवि मं पेक्खे । ता गमिस्स । अहव सय्यापलंबिअं अय्यउत्तस्स हत्थं सअणीए आरोविअ गमिस्सं । (तथा कृत्वा निष्क्रान्ता) [चिरं स्थितास्मि । कोऽपि मां पश्येत् । तद् गमिष्यामि । अथवा शय्याप्रलम्बितमार्यपुत्रस्य हस्तं शयनीय आरोप्य गमिष्यामि ।] (तथा कृत्वा निष्क्रान्ता ।)

राजा—(सहसोत्थाय) वासवदत्ते ! तिष्ठ तिष्ठ । हा धिक् !

निष्क्रामन् सम्भ्रमेणाहं द्वारपक्षेण ताडितः ।
ततो व्यक्तं न जानामि भूतार्थोऽयं मनोरथः ॥७॥

राजा—क्या तुझे विरचिका की याद आ रही है ?

वासव०—(क्रोध में) हट, क्या यहाँ भी विरचिका ?

राजा—तो विरचिका के लिए मैं तुझे मनाता हूँ । (हाथ फैलाता है ।)

वासव०—मैं देर तक ठहर गई । कोई भी मुझे देख लेगा । तो मैं चल दूँ । अथवा शय्या से लटकते हुए आर्यपुत्र के हाथ को शय्या पर रखकर चलूँ । (वैसा करके चली जाती है ।)

राजा—(सहसा उठकर) वासवदत्ता ! ठहरो, ठहरो । हा ! मैं सहसा निकलता हुआ द्वार के पार्श्वभाग से टकरा गया । मैं स्पष्ट नहीं जानता कि यह घटना सत्य है अथवा मेरे मन का सङ्कल्प-मात्र है । ॥७॥

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

(प्रविश्य)

विदूषकः—अइ ! पडिबुद्धो अत्तभवं । [अयि प्रतिबुद्धोऽत्र-भवान् ।]

राजा—वयस्य ! प्रियमावेदये, धरते खलु वासवदत्ता ।

विदूषकः—अविहा ! वासवदत्ता ? कहिं वासवदत्ता ? चिरा खु उवरदा वासवदत्ता । [अविहा ! वासवदत्ता ? कुत्र वासवदत्ता ? चिरात् खलूपरता वासवदत्ता ।]

राजा—वयस्य ! मा मैवम्,

शय्यायामवसुप्तं मां बोधयित्वा सखे गता ।
दग्धेति ब्रुवता पूर्वं वञ्चितोस्मि रुमण्वता ॥८॥

(प्रवेश करके)

विदूषक—आप जाग गये ?

राजा—मित्र ! मैं तुम्हें हर्ष की बात कहता हूँ, वासवदत्ता निश्चित ही जीवित है ।

विदूषक—हा ! वासवदत्ता ! कहाँ वासवदत्ता ? कई दिन पहले वे मर गईं ।

राजा—मित्र ! ऐसा मत कहो ।

मित्र, शय्या पर सोये हुए मुझे जगाकर वे चली गईं । पहले 'वासवदत्ता जल गईं' यह कहते हुए रुमण्वान से मैं ठगा गया । ॥८॥

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

विदूषकः—अविहा। असंभावणीअं एदं ण। आ उदअण्हाण-संकित्तणेण तत्तहोदिं चिंतअंतेण सा सिविणे दिट्ठा भवे। [असम्भावनीयमेतन्न। आ! उदकस्नानसंकीर्त्तनेन तत्रभवतीं चिन्तयता सा स्वप्ने दृष्टा भवेत्।]

राजा—एवम, मया स्वप्नो दृष्टः ?

यदि तावदयं स्वप्नो धन्यमप्रतिबोधनम्।
अथायं विभ्रमो वा स्याद् विभ्रमो ह्यस्तु मे चिरम् ॥९॥

विदूषकः—भो वअस्स ! तदस्सि णअरे अवंतिसुन्दरी णाम जक्खिणी पडिवसदि। सा तुए दिट्ठा भवे। [भो वयस्य ! एतस्मिन् नगरेऽवन्तिसुन्दरी नाम यक्षिणी प्रतिवसति। सा त्वया दृष्टा भवेत्।]

राजा—न न,

विदूषक—हा ! यह हो सकता है। हाँ, मैंने उदक स्नानों की बात की थी, उसी से वासवदत्ता की याद करते-करते आपने उसे स्वप्न में देख लिया हो।

राजा—ऐसा ! क्या मैंने स्वप्न देखा ?

यदि यह स्वप्न था तो सोते रहना ही अच्छा था। यदि यह बुद्धिभ्रम है तो मुझे यह भ्रम ही चिरकाल तक बना रहे। ॥९॥

विदूषक—मित्र ! इस नगर में अवन्तिसुन्दरी नाम की एक यक्षिणी रहती है। सम्भव है कि आपने उसे देखा होगा।

राजा—नहीं, नहीं।

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

स्वप्नस्यान्ते विबुद्धेन नेत्रविप्रोषिताञ्जनम् ।
चारित्रमपि रक्षन्त्या दृष्टं दीर्घालकं मुखम् ॥१०॥

अपि च—वयस्य ! पश्य पश्य—

योऽयं सन्त्रस्तया देव्या तया बाहुर्निपीडितः ।
स्वप्नेऽप्युत्पन्नसंस्पर्शो रोमहर्षं न मुञ्चति ॥११॥

विदूषकः—मा दाणिं भवं अणत्थं चिंतिअ। एदु एदु भवं। चउस्सालं पविसामो। [सेदानीं भवाननर्थं चिन्तयित्वा। एत्वेतु भवान्। चतुःशालं प्रविशामः।]

(प्रविश्य)

काञ्चुकीयः—जयत्वार्यपुत्रः। अस्माकं महाराजो दर्शको भवन्तमाह—एष खलु भवतोऽमात्यो रुमण्वान् महता बलसमुदायेनोपयातः खल्वारुणिमभिघातयितुम्। तथा हस्त्यश्वरथपदातीनि मामकानि विजयाङ्गानि सन्नद्धानि। तदुत्तिष्ठतु भवान्। अपि च—

स्वप्न के बाद जब मैं जाग गया तब मैंने स्त्री-धर्म का पालन करनेवाली वासवदत्ता का मुख देखा, जो लंबे-लंबे केशों से ढका था और जहाँ आँखों में काजल नहीं था। ॥१०॥

और भी—मित्र ! देखो, देखो।

भय से भीत होकर उस देवी ने जो मेरा हाथ पकड़ा, वह स्वप्नावस्था में भी स्पर्श होने से अभी तक रोमांचित ही है। ॥११॥

विदूषक—अब आप व्यर्थ की बातें मत सोचिए। इधर आइए, इधर आइए। चौसाल-भवन को चलें।

(प्रवेश कर)

कंचुकी—जय हो महाराज ! हमारे महाराज दर्शक ने आपको सूचित किया है कि आपका मन्त्री रुमण्वान् महती सेना लेकर आरुणि पर आक्रमण करने चला है। मेरी भी विजयसाधिका चतुरङ्गिणी सेना—गज, अश्व, रथ, पैदल—शस्त्रास्त्र से सज्जित है। तो अब आप उठ खड़े हों।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

भिन्नास्ते रिपवो,भवद्गुणरताः पौराः समाश्वासिताः
पार्ष्णी यापि भवत्प्रयाणसमये तस्या विधानं कृतम् ।
यद् यत् साध्यमरिप्रमाथजननं तत्त न्मयानुष्ठितं
तीर्णा चापि बलैर्नदी त्रिपथगा वत्साश्च हस्ते तव ॥१२॥

राजा—(उत्थाय) बाढम्—अयमिदानीम् ;

उपेत्य नागेन्द्रतुरङ्गतीर्णे
तमारुणिं दारुणकर्मदक्षम् ।
विकीर्णबाणोग्रतरङ्गभङ्गे
महार्णवाभे युधि नाशयामि ॥१३॥

(निष्क्रान्ताः सर्वे)

पञ्चमोऽङ्कः समाप्तः ।

और भी—

आपके शत्रु नष्ट कर दिये गये। आपके गुणों पर अनुरक्त नागरिकों को भी पूरा आश्वासन दे दिया गया। आपकी रणयात्रा के समय पृष्ठ-रक्षिणी सेना का भी प्रबन्ध कर दिया गया। शत्रु-विनाश के लिए जिन-जिन वस्तुओं की अपेक्षा थी, उन्हें भी जुटा लिया। सेना ने गंगा को भी पार कर लिया। अब पूरा वत्सराज्य आपके हाथ में आ गया। ॥१२॥

राजा—(उठकर) अच्छा, यह मैं अब जाकर हिंसात्मक क्रूर कर्म में चतुर उस आरुणि को गजराज तथा अश्वों से पार किये गये और चलाये गये बाण-रूपी उग्र तरंगों से युक्त रण में नष्ट करता हूँ। ॥१३॥

(सब चले जाते हैं।)

पाँचवाँ अंक समाप्त

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

अथ षष्ठोऽङ्कः

(ततः प्रविशति काञ्चुकीयः)

काञ्चुकीयः—क इह भोः ! काञ्चनतोरणद्वारमशून्यं कुरुते ?

(प्रविश्य)

प्रतीहारी—अय्य ! अह विजआ किं करीअदु ? [आर्य ! अहं विजया । किं क्रियताम् ?]

काञ्चुकीयः—भवति ! निवेद्यतां निवेद्यतां वत्सराज्यलाभप्रवृद्धोदयायोदयनाय—एष खलु महासेनस्य सकाशाद् रैभ्यसगोत्रः काञ्चुकीयः प्राप्तः, तत्रभवत्या चाङ्गारवत्या प्रेषिताऽऽर्या वसुन्धरा नाम वासवदत्ता धात्री च प्रतीहारमुपस्थिताविति ।

प्रतीहारी—अय्य ! अदेसकालो पडिहारस्स । [आर्य अदेशकालः प्रतीहारस्य ।]

छठा अंक

(कंचुकी का प्रवेश)

कंचुकी—ऐ ! सुवर्ण बहिर्द्वार पर कौन खड़ा है ?

(आकर)

प्रतीहारी—आर्य ! मैं विजया खड़ी हूँ । क्या आदेश है ?

कंचुकी—श्रीमतीजी ! वत्सराज्य की प्राप्ति से विशेष समृद्धि को प्राप्त महाराज उदयन से आप कहें कि महाराज महासेन के पास से रैभ्यसगोत्र का कंचुकी एवं आदरणीय अंगारवती द्वारा प्रेषित वसुन्धरा नाम की वासवदत्ता की धाय—दोनों द्वार पर खड़े हैं ।

प्रतीहारी—आर्य ! द्वारपाल को कहने का यह स्थान और समय उचित नहीं है ।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

काञ्चुकीयः—कथमदेशकालो नाम ?

प्रतीहारी—सुणादु अय्यो। अज्ज भट्टिणो सुय्यामुहप्पा सादगदेण केण वि वीणा वादिदा। तं च सुणिअ भट्टिणा भणि अं घोसवदीए सद्दो विअ सुणी अदि त्ति। [श्रृणोत्वार्यः। अद्य भर्त्तुः सूर्यामुख-प्रासादगतेन केनापि वीणा वादिता। तां च श्रुत्वा भर्त्रा भणितम्—घोषवत्याः शब्द इव श्रूयते इति।]

काञ्चुकीयः—ततस्ततः ?

प्रतीहारी—तदो तहिं गच्छिअ पुच्छिदो—कुदो इमाए वीणाए आगमो त्ति। तेण भणिअं—अम्हेहि णम्मदातीरे कुच्चगुम्मलग्गा दिट्ठा। जइ प्पओअणं इमाए उवणीअदु भट्टिणोत्ति। तं च उवणीदं अंके करिअ मोहं गदो भट्टा। तदो मोहप्पच्चागदेण बप्फय्याउलेण मुहेण भट्टिणा भणिअं—दिट्ठासि घोसवदि। सा हु ण दिस्सदित्ति। अय्य ! ईदिसो अणवसरो। कहं णिवेदेमि ? [ततस्तत्र गत्वा पृष्टः—कुतोऽस्या वीणाया आगम इति। तेन भणितम्—अस्माभिर्नर्मदातीरे

कंचुकी—स्थान और समय कैसे उचित नहीं ?

प्रतीहारी—आप सुनिए। आज महाराज के सूर्यामुख महल में जाकर किसी ने वीणा बजाई। उसे सुनकर महाराज बोले—'घोषवती का-सा शब्द सुनाई देता है।'

कञ्चुकी—फिर क्या हुआ ?

प्रतीहारी—तब, वहाँ जाकर उन्होंने उससे पूछा कि 'यह वीणा तुम्हें कहाँ मिली ? उसने कहा कि मैंने नर्मदा के तट पर कुशा की झाड़ी में इसे पड़ी हुई पाया। यदि आपको यह वीणा चाहिए तो मैं इसे आपको भेंट में दे दूँ। जब उसने इसे भेंट में दे दिया तब वह इसे अपनी गोद में लेकर मूर्च्छित हो गये। जब उनकी मूर्च्छा चली गई

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

कूगुल्र्चमलग्ना दृष्टा। यदि प्रयोजनमनया, उपनीयतां भर्त्रे इति। तां चोपनीतामङ्के कृत्वा मोहं गतो भर्त्ता। ततो मोहप्रत्यागतेन बाष्पपर्याकुलेन मुखेन भर्त्रा भणितम्—दृष्टासि घोषवति! सा खलु न दृश्यत इति। आर्य! ईदृशोऽनवसरः। कथं निवेदयामि?]

काञ्चुकीयः— भवति! निवेद्यताम्। इदमपि तदाश्रयमेव।

प्रतीहारी—अय्य! इअं णिवेदेमि। एसो भट्टा सुय्यामुह—प्पासादादो ओदरइ। ता इह एव्व णिवेदइस्सं। [आर्य! इयं निवेदयामि। एष भर्त्ता सूर्यामुखप्रासादादवतरति। तदिहैव निवेदयिष्यामि।]

काञ्चुकीयः—भवति! तथा।

(उभौ निष्क्रान्तौ)

(मिश्रविष्कम्भकः)

तब उन्होंने आँसू-भरे मुँह से कहा—घोषवती! तुझे तो देख लिया, किन्तु वह तो नहीं दीख पड़तीं। इसलिए यह उचित अवसर नहीं है। मैं कैसे समाचार दूँ?

कञ्चुकी—श्रीमती, कहिए, इसका भी उसीसे सम्बन्ध है?

प्रतीहारी—आर्य! मैं यह समाचार देती हूँ। महाराज सूर्यामुख महल से उतर रहे हैं। अतः यहीं पर समाचार देती हूँ।

कञ्चुकी—श्रीमती, अच्छा।

(दोनों चले जाते हैं।)

मिश्र विष्कम्भक समाप्त

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

(ततः प्रविशति राजा विदूषकश्च)

राजा—

श्रुतिसुखनिनदे ! कथं नु देव्याः
स्तनयुगले जघनस्थले च सुप्ता ।
विहगगणरजोविकीर्णदण्डा
प्रतिभयमध्युषिताऽस्यरण्यवासम् ॥१॥

अपि च, अस्निग्धाऽसि घोषवति ! या तपस्विन्या न स्मरसि—

श्रोणिसमुद्वहनपार्श्वनिपीडितानि
खेदस्तनान्तरसुखान्युपगूहितानि ।
उद्दिश्य मां च विरहे परिदेवितानि
वाद्यान्तरेषु कथितानि च सस्मितानि ॥२॥

विदूषक—अलं दाणिं भवं अदिमत्तं संतप्पिअ । [अलमिदानीं भवानतिमात्रं सन्तप्य ।]

राजा—वयस्य ! मा मैवम् ,

(राजा और विदूषक का प्रवेश)

राजा—अरी कर्णप्रिय स्वरवती वीणा ! तू तो देवी वासवदत्ता के स्तनों और जाँघों पर सोकर अब पक्षियों के मल से लिप्त-दण्ड होकर भयानक वन में कैसे रहती हो ? ॥१॥

और भी, घोषवती ! तू बहुत ही स्नेहहीन है, जो तू उस बेचारी का तुझे जाँघों पर उठाना, बगल में दबाना, थक जाने पर सुख से स्तनों के बीच रखना, मेरे विरह में रोना, बाजों के बजते-बजते हँस-हँसकर मुझसे बातें करना आदि सब बातों को भूल गई है । ॥२॥

विदूषक—अब आप विशेष सन्ताप न करें ।

राजा—मित्र, ऐसा न कहो ।

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

चिरप्रसुप्तः कामो मे वीणया प्रतिबोधितः ।
तां तु देवीं न पश्यामि यस्या घोषवती प्रिया ॥३॥

वसन्तक ! शिल्पिजनसकाशान्नवयोगां घोषवतीं कृत्वा शीघ्रमानय ।

विदूषकः—जं भवं आणवेदि । [यद् भवानाज्ञापयति ।]

(वीणां गृहीत्वा निष्क्रान्तः)

(प्रविश्य)

प्रतीहारी—जेदु भट्टा । एसो खु महासेणस्स सआसादो रैब्भसगोत्तो कंचुईओ देवीए अंगारवदीए पेसिदा अय्या वसुन्धरा णाम वासवदत्ताधत्ती अ पडिहारं उवट्ठिदा । [जयतु भर्त्ता । एषा खलु महासेनस्य सकाशाद् रैभ्यसगोत्रः काञ्चुकीयो देव्याऽङ्गारवत्या प्रेषिताऽऽर्या वसुन्धरा नाम वासवदत्ताधात्री च प्रतीहारमुपस्थितौ ।]

राजा—तेन हि पद्मावती तावदाहूयताम् ।

प्रतीहारी—जं भट्टा आणवेदि । [यद् भर्त्ताऽऽज्ञापयति ।]

(निष्क्रान्ता)

बहुत दिनों से शान्त मेरी कामावस्था को वीणा ने जगा दिया । किन्तु जिसे यह वीणा अति प्यारी थी, उस देवी को मैं नहीं देख रहा हूँ ॥३॥

वसन्तक ! घोषवती को कारीगर से ठीक कराकर ले आओ ।

विदूषक—जैसी आपकी आज्ञा ! (वीणा लेकर चला जाता है ।)

(आकर)

प्रतीहारी—महाराज की जय हो ! महासेन के पास से यह रैभ्यस गोत्र का कंचुकी और देवी अङ्गारवती द्वारा भेजी गई वासवदत्ता की धाय वसुन्धरा—दोनों द्वारपाल के पास खड़े हैं ।

राजा—तब पद्मावती को पहले बुला लाओ ।

प्रतीहारी—जैसी आपकी आज्ञा । (चली जाती है ।)

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

राजा—किन्नु खलु शीघ्रमिदानीमयं वृत्तान्तो महासेनेन विदितः ?

(ततः प्रविशति पद्मावती प्रतीहारी च)

प्रतीहारी—एदु एदु भट्टिदारिआ ! [एत्वेतु भर्त्तृदारिका !]

पद्मावती—जेदु अय्यउत्तो । [जयत्वार्यपुत्रः ।]

राजा—पद्मावति ! किं श्रुतम्–महासेनस्य सकाशाद् रैभ्यसगोत्रः काञ्चुकीयः प्राप्तः, तत्रभवत्या चाङ्गारवत्या प्रेषितार्या वसुन्धरा नाम वासवदत्ताधात्री च प्रतीहारमुपस्थितावेति ।

पद्मावती—अय्यउत्त ! पिअं मे आदिकुलस्स कुसलवुत्तंतं सोदुं । [आर्यपुत्र ! प्रियं मे ज्ञातिकुलस्य कुशलवृत्तान्तं श्रोतुम् ।]

राजा—अनुरूपमेतद् भवत्याऽभिहितम्—वासवदत्तास्वजनो मे स्वजन इति । पद्मावति ! आस्यताम् । किमिदानीं नास्यते ?

राजा—क्या शीघ्र ही इस समाचार को महासेन ने जान लिया ?

(पद्मावती और प्रतीहारी का प्रवेश)

प्रतीहारी—राजकुमारी ! इधर आइए, इधर आइए ।

पद्मावती—आर्यपुत्र की जय हो ।

राजा—पद्मावती ! क्या तुमने सुना कि महासेन के पास से रैभ्यस गोत्र का कंचुकी और पूज्य अंगारवती द्वारा भेजी गई वासवदत्ता की धाय वसुन्धरा द्वारपाल के पास खड़े हैं ?

पद्मावती—आर्यपुत्र ! बन्धुजनों का कुशल-समाचार सुनना मुझे प्रिय है ।

राजा—आपने यह उचित कहा है कि वासवदत्ता के बन्धुजन मेरे बन्धुजन हैं । पद्मावती ! बैठो, इस समय तुम क्यों नहीं बैठती ?

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

पद्मावती—अय्यउत्त ! किं मए सह उवविट्ठो एदं जणं पेक्खिस्सदि ? [आर्यपुत्र ! किं मया सहोपविष्ट एतं जनं द्रक्ष्यति ?]

राजा—कोऽत्र दोषः ?

पद्मावती—अय्यउत्तस्स अवरो परिग्गहो त्ति उदासीणं विअ होदि । [आर्यपुत्रस्यापरः परिग्रह इत्युदासीनमिव भवति ।]

राजा—कलत्रदर्शनार्हं जनं कलत्रदर्शनात् परिहरतीति बहुदोषमुत्पादयति । तस्मादास्यताम् ।

पद्मावती—जं अय्यउत्तो आणवेदि । (उपविश्य) अय्यउत्त ! तादो वा अम्बा वा किं णु खु भणिस्सदि त्ति आविग्गा विअ संवुत्ता । [यदार्यपुत्र आज्ञापयति । (उपविश्य) आर्यपुत्र ! तातो वाऽम्बा वा किन्नु खलु भणिष्यतीत्याविग्नेव संवृत्ता ।]

राजा—पद्मावति ! एवमेतत् ।

किं वक्ष्यतीति हृदयं परिशङ्कितं मे
कन्या मयाप्यपहृता न च रक्षिता सा ।

पद्मावती—आर्यपुत्र ! क्या आप मेरे साथ बैठकर उनसे मिलेंगे ?

राजा—इसमें क्या बुरा है ?

पद्मावती—आर्यपुत्र का दूसरा विवाह है; अतः उन्हें बुरा लगेगा ।

राजा—(नहीं) जो स्त्री को देखने का अधिकारी है, उसे स्त्री को देखने से रोकने पर बहुत बुराई होती है । अतः आप बैठें ।

पद्मावती—जो आर्यपुत्र की आज्ञा । (बैठकर) आर्यपुत्र ! पिता या माता ने क्या सन्देश भेजा होगा—इस चिन्ता में कुछ उद्विग्न-सी हो रही हूँ ।

राजा—पद्मावती ! तुमने ठीक कहा है ।

मेरा हृदय शंकित हो उठा है कि वे क्या कहेंगे । मैंने उनकी

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

भाग्यैश्चलैर्महदवाप्तगुणोपघातः
पुत्रः पितुर्जनितशेष इवास्मि भीतः ॥४॥

पद्मावती—ण किं सक्कं रक्खिदुं पत्तकाले। [न किं शक्यं रक्षितुं प्राप्तकाले।]

प्रतीहारी—एसो कंचुईओ धत्ती अ पडिहारं उवट्ठिदा। एष काञ्चुकीयो धात्री च प्रतीहारमुपस्थितौ।

राजा—शीघ्रं प्रवेश्यताम्।

प्रतीहारी—जं भट्टा आणवेदि। [यद् भर्त्ताऽऽज्ञापयति।]

(निष्क्रान्ता)

(ततः प्रविशति काञ्चुकीयो धात्री प्रतीहारी च)

काञ्चुकीयः—भोः !

सम्बन्धिराज्यमिदमेत्य महान् प्रहर्षः
स्मृत्वा पुनर्नृपसुतानिधनं विषादः।

कन्या का अपहरण किया, किन्तु मैं उसकी रक्षा न कर सका। अस्थिर भाग्यों के चक्कर में आकर मैं गुरुजनों का अपराधी बना। जैसे पिता को क्रोधित कर पुत्र उनसे डरता है, वैसे ही मैं इस समय उनसे डर रहा हूँ। ॥४॥

पद्मावती—मृत्युकाल आने पर कोई किसी को नहीं बचा सकता।

प्रतीहारी—कंचुकी और धाय दोनों द्वारपाल के पास खड़े हैं।

राजा—तो उन्हें शीघ्र ले आओ।

प्रतीहारी—जो स्वामी की आज्ञा। (चली जाती है।)

(कंचुकी, धाय और प्रतीहारी का प्रवेश)

कंचुकी—अहा !

बन्धुजन के राज्य में आकर मुझे महान् हर्ष हो रहा है। राजकुमारी की मृत्यु का स्मरण कर दुःख होता है। हे भाग्य ! शत्रु से

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

किं नाम दैव ! भवता न कृतं यदि स्याद्
राज्यं परैरपहृतं कुशलं च देव्याः ॥५॥

प्रतीहारी—एसो भट्टा, उपसप्पदु अय्यो। [एष भर्त्ता, उपसर्पत्वार्यः।]

काञ्चुकीयः—(उपेत्य) जयत्वार्यपुत्रः।

धात्री—जेदु भट्टा। (जयतु भर्त्ता।)

राजा—(सबहुमानम्) आर्य !

पृथिव्यां राजवंश्यानामुदयास्तमयप्रभुः।
अपि राजा स कुशली मया काङ्क्षितबान्धवः ॥६॥

काञ्चुकीयः—अथ किम् ? कुशली महासेनः। इहापि सर्वगतं कुशलं पृच्छति।

अपहृत राज्य की प्राप्ति और देवी वासवदत्ता के जीवित रहने की कुशल-समाचार-प्राप्ति—यदि ये दोनों बातें एक साथ सम्पन्न हो जातीं तो आपने क्या न किया होता ? ॥५॥

प्रतीहारी—यह हैं महाराज ! आप इनके पास चलिए।

कंचुकी—(पास पहुँचकर) आर्यपुत्र की जय हो !

धाय—महाराज की जय हो !

राजा—(आदर से) आर्य !

पृथ्वी पर राजाओं के उत्थान तथा पतन करने में समर्थ, मेरे साथ सम्बन्ध बनाने को इच्छुक वह राजा महासेन कुशल से तो हैं ? ॥६॥

कंचुकी—हाँ। महासेन कुशल से हैं। यहाँ भी सबका कुशल पूछते हैं।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

राजा—(आसनादुत्थाय) किमाज्ञापयति महासेनः ?

काञ्चुकीयः—सदृशमेतद् वैदेहीपुत्रस्य। नन्वासनस्थेनैव भवता श्रोतव्यो महासेनस्य सन्देशः।

राजा—यदाज्ञापयति महासेनः। (उपविशति)

काञ्चुकीयः—दिष्ट्या परैरपहृतं राज्यं पुनः प्रत्यानीतमिति। कुतः—

कातरा येऽप्यशक्ता वा नोत्साहस्तेषु जायते।
प्रायेण हि नरेन्द्रश्रीः सोत्साहैरेव भुज्यते ॥७॥

राजा—आर्य ! सर्वमेतन्महासेनस्य प्रभावः कुतः —

अहमवजितः पूर्वं तावत्सुतैः सह लालितो
दृढमपहृता कन्या भूयो मया न च रक्षिता।

राजा—(आसन से उठकर) महासेन का क्या आदेश है ?

कंचुकी—यह (आसन से उठकर सन्देश सुनना) वैदेही-पुत्र के सदृश ही है। महासेन के सन्देश को आप आसन पर बैठे ही सुनें।

राजा—जैसी महासेन की आज्ञा। (बैठ जाता है।)

कंचुकी—"आपने शत्रु द्वारा अपहृत राज्य को सौभाग्य से पाया।" क्योंकि—

जो कायर और असमर्थ होते हैं, उनमें उत्साह नहीं होता। प्रायः उत्साही वीर ही राजलक्ष्मी का उपभोग करते हैं ॥७॥

राजा—यह सब महासेन का प्रभाव है।

पहले उन्होंने मुझे जीता। अपने पुत्रों के साथ मुझे पाला। उनकी कन्या को मैं साहस से भगा लाया। फिर उसे बचा नहीं

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

निधनमपि च श्रुत्वा तस्यास्तथैव मयि स्वता
ननु यदुचितान् वत्सान् प्राप्तुं नृपोऽत्रहि कारणम् ॥८॥

काञ्चुकीयः—एष महासेनस्य सन्देशः। देव्याः सन्देशमिहात्र-भवती कथयिष्यति।

राजा—हा अम्ब!

षोडशान्तःपुरज्येष्ठा पुण्या नगरदेवता।
मम प्रवासदुःखार्त्ता माता कुशलिनी ननु? ॥९॥

धात्री—अरोआ भट्टिणी भट्टारं सव्वगदं कुसलं पुच्छदि।
[आरोगा भट्टिनी भर्त्तारं सर्वगतं कुशलं पृच्छति।]

राजा—सर्वगतं कुशलमिति? अम्ब! ईदृशं कुशलम्।

सका। उसकी मृत्यु को सुनकर भी उनका मुझपर वही प्रेम बना हुआ है। निश्चित ही अधिकृत (किन्तु शत्रु द्वारा पराजित) वत्सदेश के भूभाग को पाने में महाराज महासेन ही कारण हैं। ॥८॥

कञ्चुकी—यह महासेन का सन्देश है! महारानी का सन्देश आर्या वसुन्धरा सुनायेंगी।

राजा—हाय माता!

सोलह रानियों में प्रमुख, नगर की प्रमुख देवता, मेरे प्रवास से जनित कष्ट से पीड़ित माता अंगारवती ठीक तो हैं? ॥९॥

धाय—महारानी सकुशल हैं। आपका सर्वांगीण कुशल-मंगल पूछती हैं।

राजा—सर्वांगीण कुशल-मंगल? माता! यहाँ तो मेरी ऐसी दशा है।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

धात्री—मा दाणिं भट्टा अदिमत्तं संतप्पिदुं । [मेदानीं भर्त्तातिमात्रं सन्तप्तुम् ।]

कञ्चुकीयः—धारयत्वार्यपुत्रः ! उपरताऽप्यनुपरता महासेनपुत्री एवमनुकम्प्यमानाऽऽर्यत्रेण । अथवा—

कः कं शक्तो रक्षितुं मृत्युकाले
रज्जुच्छेदे के घटं धारयन्ति ?
एवं लोकस्तुल्यधर्मो वनानां
काले काले छिद्यते रुह्यते च ॥१०॥

राजा—आर्य ! मा मैवम्,

महासेनस्य दुहिता शिष्या देवी च मे प्रिया ।
कथं सा न मया शक्या स्मर्त्तुं देहान्तरेष्वपि ॥११॥

धात्री—आह भट्टिणी—उवरदा वासवदत्ता । मम वा महासेणस्स वा जादिसा गोवालअपालआ, तादिसो एव्व तुमं पुढमं एव्व अभि-

---

धाय—महाराज ! अब आप अधिक सन्ताप न करें ।

कञ्चुकी—आप धीरज रखें । महासेन की पुत्री मृत होने पर भी मृत नहीं जबकि आप उसके प्रति इतनी सहानुभूति रखते हैं । अथवा—

मृत्युकाल के उपस्थित होने पर कौन किसे बचा सकता है ? जब रस्सी टूट जाती है, कौन घड़े को गिरने से रोक सकता है ? इसी तरह मनुष्य भी वृक्षों के समान धर्मवाला है—समय-समय पर मरता है और समय-समय पर जन्म लेता है । ॥१०॥

राजा—आर्य ! ऐसा न कहो ।

वह महासेन की पुत्री मेरी प्रिय शिष्या थी, मेरी प्रिया पत्नी थी । जन्म-जन्मान्तर में भी मैं उसे कैसे भूल सकता हूँ । ॥११॥

धाय—महारानी ने कहा है—"वासवदत्ता मर गई । तुम मेरे

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

प्पेदो जामादुअत्ति । एदण्णिमित्तं उज्जइणिं आणीदो । अणग्गिसक्खिअं वीणाववदेसेण दिण्णा । अत्तणो चवलदाए अणिवुत्त विवाहमंगलो एव्व गदो । अहअ अम्मेहिं तव अ वासवदत्ताए अ पडिकिदिं चित्तफलआए आलि हिअ विवाहो णिव्वुत्तो । एसा चित्तफलआ तव सआसं पेसिदा । एदं पेक्खिअ णिव्वुदो होहि । [आह भट्टिनी—उपरता वासवदत्ता । मम च महासेनस्य वा यादृशौ गोपालकपालकौ तादृश एव त्वं प्रथममेवाभिप्रेतो जामातेति । एतन्निमित्तमुज्जयिनीमानीतः । अनग्निसाक्षिकं वीणाव्यपदेशेन दत्ता । आत्मनश्चपलतयाऽनिर्वृत्तविवाहमंगलएव गतः । अथ चावाभ्यां तव च वासवदत्तायाश्च प्रतिकृतिं चित्रफलकायामालिख्य विवाहो निर्वृत्तः । एषा चित्रफलका तव सकाशं प्रेषिता । एतां दृष्ट्वा निर्वृत्तो भव ।]

राजा—अहो ! अतिस्निग्धमनुरूपं चाभिहितं तत्रभवत्या ।

वाक्यमेतत् प्रियतरं राज्यलाभ शतादपि ।
अपराद्धेष्वपि स्नेहो यदस्मासु न विस्मृतः ॥१२॥

या महाराज के लिए गोपालक तथा पालक-जैसे प्रिय पुत्र हो । हमने पहले ही तुझे दामाद मान लिया था । इसीलिए तुम उज्जयिनी में लाये गये । अग्नि को साक्षी न बनाकर वीणा सिखाने के बहाने उसे तुझे समर्पण किया । किन्तु अपनी चपलता के कारण, विवाह किये बिना ही तुम भाग गये । तब हम दोनों ने तुम्हारे और वासवदत्ता के चित्र को फलक पर उतारकर तुम दोनों का विवाह कर दिया । वह चित्र-फलक तुम्हारे पास भेजा है । इसे देखकर तुम धीरज धरो ।

राजा—अहा ! महारानी ने अतिप्रिय तथा अपने अनुरूप ही कहा है ।

यह वाक्य सौ राज्यों के लाभ से भी प्रियतर है; क्योंकि वे मुझ-जैसे अपराधी के प्रति भी अपना प्रेम नहीं भूले हैं । ॥१२॥

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

पद्मावती—अय्यउत्त ! चित्तगदं गुरुअणं पेक्खिअ अभिवादेदुं इच्छामि । [आर्यपुत्र ! चित्रगतं गुरुजनं दृष्ट्वाभिवादयितुमिच्छामि ।]

धात्री—पेक्खदु पेक्खदु भट्टिदारिआ । (चित्रफलकां दर्शयति) [पश्यतु पश्यतु भर्तृदारिका ।]

पद्मावती—(दृष्ट्वाऽऽत्मगतम्) हं अदिसदिसा खु इअं अय्याए आवंतिआए । (प्रकाशम्) अय्यउत्त ! सदिसी खु इअं अय्याए ? [(दृष्ट्वाऽऽत्मगतम्) हम् ! अतिसदृशी खल्वियमार्याया आवन्तिकायाः । (प्रकाशम्) आर्यपुत्र ! सदृशी खल्वियमार्यायाः ?)

राजा—न सदृशी । सैवेति मन्ये । भोः कष्टम् ।

अस्यास्निग्धस्य वर्णस्य विपत्तिर्दारुणा कथम् ?
इदं च मुखमाधुर्यं कथं दूषितमग्निना ? ॥१३॥

पद्मावती—अय्यउत्तस्स पडिकिदिं पेक्खिअ जाणामि इअं अय्याए सदिसी ण वेत्ति । [आर्यपुत्रस्य प्रतिकृतिं दृष्ट्वा जानामीयमार्यायाः सदृशी न वेति ।]

पद्मावती—आर्यपुत्र ! चित्र में गुरुजन को देखकर मैं प्रणाम करना चाहती हूँ ।

धाय—देखिए, राजकुमारी जी देखिए । (चित्रपट दिखाती है ।)

पद्मावती—(देखकर मन में) यह तो आवन्तिका के बहुत सदृश है । (प्रकट) आर्यपुत्र ! क्या यह आर्या के सदृश है ?

राजा—सदृश ही नहीं, मैं समझता हूँ कि यह वही है । हाय ! इस सुन्दर रूप पर ऐसी दारुण विपत्ति कैसे आ पड़ी ? मुख की इस सुन्दरता को अग्नि ने कैसे दूषित किया ? ॥१३॥

पद्मावती—आर्यपुत्र के चित्र को देखकर मैं जानूँगी कि यह दूसरा चित्र आर्या के सदृश है या नहीं ।

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

धात्री—पेक्खदु पेक्खदु भट्टिदारिआ । [पश्यतु पश्यतु भर्तृदारिका ।]

पद्मावती—(दृष्ट्वा) अय्यउत्तस्स पडिकिदीए सदिसदाए जाणामि इअं अय्याए सदिसित्ति । [आर्यपुत्रस्य प्रतिकृत्याः सदृशतया जानामीय मार्यायाः सदृशीति ।]

राजा—देवि ! चित्रदर्शनात् प्रभृति प्रहृष्टोद्विग्नामिव त्वां पश्यामि । किमिदम् ?

पद्मावती—अय्यउत्त ! इमाए पडिकिदीए सदिसी इह एव्व पडिवसदि । [आर्यपुत्र ! अस्याः प्रतिकृत्याः सदृशीहैव प्रतिवसति ।]

राजा—किं वासवदत्तायाः ?

पद्मावती—आम ।

राजा—तेन हि शीघ्रमानीयताम् ।

धाय—राजकुमारी जी, देखिए ।

पद्मावती—(देखकर) आर्यपुत्र के चित्र की आर्यपुत्र की आकृति से समानता को देखकर मैं समझती हूँ कि यह दूसरा चित्र आर्या वासवदत्ता की आकृति के समान ही होगा !

राजा—देवी ! चित्र-दर्शन से मैं तुझे प्रसन्न और उद्विग्न-सा देख रहा हूँ । यह क्या है ?

पद्मावती—आर्यपुत्र ! इस चित्र के सदृश एक नारी यहीं पर रहती है ।

राजा—क्या वासवदत्ता के सदृश ?

पद्मावती—हाँ ।

राजा—तो उसे शीघ्र ले आओ ।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

पद्मावती—अय्यउत्त ! मम कण्णाभावे केणावि बम्हणेण मम भइणिअत्ति ण्णासो णिक्खित्तो। पोसिदभत्तुआ परपुरुसदंसणं परिहरदि। ता अय्यं मए सह आअदं पेक्खिअ जाणादु अय्यउत्तो। [आर्यपुत्र ! मम कन्याभावे केनापि ब्राह्मणेन मम भगिनिकेति न्यासो निक्षिप्तः। प्रोषितभर्तृका परपुरुषदर्शनं परिहरति। तदार्या मया सहागतां दृष्ट्वा जानात्वार्यपुत्रः।]

राजा—

यदि विप्रस्य भगिनी व्यक्तमन्या भविष्यति।
परस्परगता लोके दृश्यते रूपतुल्यता ॥१४॥

(प्रविश्य)

प्रतीहारी—जेदु भट्टा। एसो उज्जयिणीओ बम्हणो, भट्टिणीए हत्थे मम भइणीअत्ति ण्णासो णिक्खित्तो, तं पडिग्गहिदुं पडिहारं उवट्ठिदो। [जयतु भर्त्ता। एष उज्जयिनीयो ब्राह्मणः, भट्टिन्या हस्ते मम भगिनिकेति न्यासो निक्षिप्तः, तं प्रतिग्रहीतुं प्रतीहारमुपस्थितः।]

पद्मावती— आर्यपुत्र ! जब मैं कन्या थी, किसी ब्राह्मण ने 'यह मेरी बहन है'—ऐसा कहकर मेरे पास उसे धरोहर के रूप में रखा था। उसका पति परदेश चला गया है, अतः वह किसी अन्य पुरुष का मुँह नहीं देखती। जब वह मेरे साथ आयगी तब आर्यपुत्र उसे देखकर पहचान लेंगे (कि वह वासवदत्ता है कि नहीं)।

राजा—यदि वह ब्राह्मण की बहन है तो वह अवश्य ही अन्य होगी। ससार में एक-दूसरे के रूप की तुल्यता दीख पड़ती है। ॥१४॥

(आकर)

प्रतीहारी—महाराज की जय हो ! "स्वामिनी के पास मैंने अपनी बहन को धरोहर के रूप में रखा था, उसे लेने आया हूँ"—ऐसा कहकर उज्जैन का यह ब्राह्मण द्वारपाल के पास खड़ा है।

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

राजा—पद्मावति ! किन्नु स ब्राह्मणः ?

पद्मावती—होदव्वं । [भवितव्यम् ।]

राजा—शीघ्रं प्रवेश्यतामभ्यन्तरसमुदाचारेण स ब्राह्मणः ।

प्रतीहारी—जं भट्टा आणवेदि । [यद् भर्त्ताऽऽज्ञापयति ।]

(निष्क्रान्ता)

राजा—पद्मावति ! त्वमपि तामानय ।

पद्मावती—जं अय्यउत्तो आणवेदि । [यदार्यपुत्र आज्ञापयति ।]

(निष्क्रान्ता)

(ततः प्रविशति यौगन्धरायणः प्रतीहारी च)

यौगन्धरायणः—भोः ! (आत्मगतम्)

राजा—पद्मावती ! क्या वही ब्राह्मण है ?

पद्मावती—सम्भव है ।

राजा—उचित सम्मान के साथ उस ब्राह्मण को शीघ्र ही भीतर लाओ ।

प्रतीहारी—जैसा महाराज का आदेश हो । (चली जाती है ।)

राजा—पद्मावती ! तुम भी उसे लाओ ।

पद्मावती—आर्यपुत्र की जैसी आज्ञा । (चली जाती है ।)

(यौगन्धरायण और प्रतीहारी का प्रवेश)

यौगन्धरायण—(मन में) ओह !

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

प्रच्छाद्य राजमहिषीं नृपतेर्हितार्थं
कामं मया कृतमिदं हितमित्यवेक्ष्य ।
सिद्धेऽपि नाम मम कर्मणि पार्थिवोऽसौ
किं वक्ष्यतीति हृदयं परिशङ्कितं मे ॥१५॥

प्रतीहारी—एसो भट्टा। उपसप्पदु अय्यो। [एष भर्त्ता ! उपसर्पत्वार्यः ।]

यौगन्धरायणः—(उपसृत्य) जयतु भवान् जयतु ।

राजा—श्रुतपूर्व इव स्वरः । भो ब्राह्मण ! किं भवतः स्वसा पद्मावत्या हस्ते न्यास इति निक्षिप्ता ?

यौग०—अथ किम् ?

राजा—तेन हि त्वर्यतां त्वर्यतामस्य भगिनिका ।

महाराज के हित के लिए महारानी वासवदत्ता को छिपाकर 'इसी में उनका हित होगा'—यह समझकर सही मैंने यह काम किया । मेरे कार्य के सिद्ध हो जाने पर भी वह राजा क्या कहेंगे—इस प्रकार मेरा मन व्याकुल हो रहा है ।

प्रतीहारी—ये महाराज हैं, उनके पास चलें ।

यौगन्धरायण—(पास जाकर) जय हो, महाराज की जय हो !

राजा—यह स्वर तो पहले सुना हुआ-सा मालूम पड़ता है । ऐ ब्राह्मण ! क्या आपने बहन को पद्मावती के हाथ में धरोहर के रूप में रखा था ?

यौगन्धरायण—हाँ !

राजा—तो इनकी बहन को शीघ्र ही यहाँ लाओ ।

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

प्रतीहारी—जं भट्टा आणवेदि । (निष्क्रान्ता) [यद्भर्त्ताज्ञापयति ।]

(ततः प्रविशति पद्मावती आवन्तिका प्रतीहारी च)

पद्मावती—एदु एदु अय्या । पिअं दे णिवेदेमि । [एत्वेत्वार्या । प्रियं ते निवेदयामि ।]

आवन्तिका—किं किं । [किं किम् ?]

पद्मावती—भादा दे आअदो । [भ्राता ते आगतः ।]

आवन्तिका—दिट्ठिआ दाणिं पि सुमरदि । [दिष्ट्येदानीमपि स्मरति ।]

पद्मावती—(उपसृत्य) जेदु अय्यउत्तो । एसा एणासौ । [जयत्वार्यपुत्रः । एष न्यासः ।]

राजा—निर्यातय पद्मावती । साक्षिमन्न्यासो निर्यातयितव्यः । इहात्रभवान् रैभ्यः, अत्रभवती चाधिकरणं भविष्यतः ।

प्रतीहारी—महाराज का जैसा आदेश । (चली जाती है ।)

(पद्मावती, आवन्तिका और प्रतीहारी का प्रवेश)

पद्मावती—आओ आर्या ! इधर आओ । मैं तुझे प्रिय समाचार देती हूँ ।

आवन्तिका—क्या, क्या ?

पद्मावती—तुम्हारा भाई आया है ।

आवन्तिका—सौभाग्य से मुझे वह अब भी भूला नहीं ।

पद्मावती—(पास पहुँचकर) आर्यपुत्र की जय हो ! यह है धरोहर ।

राजा—पद्मावती ! धरोहर को चुकता करो । साक्षियों के सामने धरोहर को लौटाना चाहिए । इस विषय में श्रीमान् रैभ्य और आर्या वसुन्धरा न्यायसभिक होंगे ।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

षष्ठोऽङ्कः

पद्मावती—अय्य ! णीअदां दाणिं अय्या। [आर्य ! नीयतामिदानीमार्या।]

धात्री—(आवन्तिका निर्वर्ण्य) अम्मो ! भट्टिदारिआ वासवदत्ता ! [अम्मो ! भर्त्तृदारिका वासवदत्ता !]

राजा—कथं महासेनपुत्री ? देवि प्रविश त्वमभ्यन्तरं पद्मावत्या सह।

यौग०—न खलु न खलु प्रवेष्टव्यम्। मम भगिनी खल्वेषा।

राजा—किं भवानाह ? महासेनपुत्री खल्वेषा।

यौगन्ध०—भो राजन् !

भरतानां कुले जातो विनीतो ज्ञानवाञ्छुचिः।
तन्नार्हसि बलाद्धर्त्तुं राजधर्मस्य देशिकः ॥१६॥

पद्मावती—आर्य ! अब आर्या को ले जाइए।

धाय—(आवन्तिका को देखकर) अहो ! यह तो राजकुमारी वासवदत्ता है।

राजा—क्या महासेन की पुत्री ? देवी ! तुम पद्मावती के साथ भीतर जाओ।

यौगन्धरायण—भीतर मत भेजिए, भीतर मत भेजिए। यह तो मेरी बहन है।

राजा—आप क्या कह रहे हैं। यह तो महासेन की पुत्री है।

यौगन्धरायण—राजन् ! भरत-वंश में आपका जन्म हुआ है। आप विनयशील हैं, ज्ञानवान् हैं और शुद्धात्मा हैं। राजधर्म का प्रवर्त्तक होकर आपको बलपूर्वक मेरी बहन का छीनना सुहाता नहीं है। ॥१६॥

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

राजा—भवतु, पश्यामस्तावद् रूपसादृश्यम्। संक्षिप्यतां जवनिका।

यौगन्ध०—जयतु स्वामी।

वासव०—जेदु अय्यउत्तो। [जयत्वार्यपुत्रः।]

राजा—अये! असौ यौगन्धरायणः, इयं महासेनपुत्री।

किन्नु सत्यमिदं स्वप्नः सा भूयो दृश्यते मया।
अनयाऽप्येवमेवाहं दृष्ट्या वञ्चितस्तदा ॥१७॥

यौगन्ध०—स्वामिन्! देव्यपनयेन कृतापराधः खल्वहम्। तत् क्षन्तुमर्हति स्वामी। (इति पादयोः पतति)

राजा—(उत्थाप्य) यौगन्धरायणो भवान् ननु।

राजा—अच्छा, हम आकृति की सदृशता देखते हैं। पर्दा हटाओ।

यौगन्धरायण—महाराज की जय हो!

वासवदत्ता—आर्यपुत्र की जय हो!

राजा—ओह! यह हैं यौगन्धरायण! और यह है महासेन की पुत्री!

क्या यह सत्य है? अथवा यह स्वप्न है क्या? मैं उसे फिर देख रहा हूँ। पहले भी मैं इसी प्रकार इसे देखकर इससे ठगा गया था। ॥१७॥

यौगन्धरायण—स्वामिन्! महारानी को छिपाकर मैंने अपराध किया है। महाराज क्षमा करें। (पाँवों पर गिरता है।)

राजा—(उठाकर) आप सत्य ही यौगन्धरायण हो।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

मिथ्यौन्मादैश्च युद्धैश्च शास्त्रदृष्टैश्च मन्त्रितैः ।
भवद्यत्नैः खलु वयं मज्जमानाः समुद्धृताः ॥१८॥

यौगन्ध०—स्वामिभाग्याममनुगन्तारो वयम् ।

पद्मावती—अम्महे ! अय्या खु इअं । अय्ये ! सहीजण—समुदाआरेण अजाणंतीए अदिक्कंदो समुदाआरो । ता सीसेण पसादेमि । [अहो ! आर्या खल्वियम् । आर्ये ! सखीजनसमुदाचारेणाऽजानत्याऽतिक्रान्तः समुदाचारः । तच्छीर्षेण प्रसादयामि ।]

वासव०—(पद्मावतीमुत्थाप्य) उट्ठे हि उट्ठे हि । अविहवे ! उट्ठे हि । अत्थिसअं णाम सरीरं अवरद्धइ । [उत्तिष्ठोत्तिष्ठाविधवे ! उत्तिष्ठ । अर्थिस्वं नाम शरीरमपराध्यति ।]

पद्मावती—अणुग्गहिदम्हि । [अनुगृहीताऽस्मि ।]

पागलपन के झूठे बहाने, युद्ध, शास्त्रोक्त मन्त्रणा एवं आपके द्वारा किये गये उपायों से निश्चित ही डूबते हुए हम बचाये गये । ॥१८॥

यौगन्धरायण—महाराज के भाग्यों के साथ हमारा भाग्य भी जुड़ा है ।

पद्मावती—अहो ! यह आर्या वासवदत्ता हैं ! आर्ये ! अज्ञानवश मैंने आपके साथ सखी-जैसा व्यवहार कर सदाचार का उल्लंघन किया है । इसलिए मैं प्रणाम द्वारा आपकी प्रसन्नता चाहती हूँ ।

वासवदत्ता—(पद्मावती को उठाकर) उठो, उठो, सौभाग्यवती ! उठो । प्रार्थी (यौगन्धरायण) का यह धरोहर-रूपी शरीर ही अपराधी है ।

पद्मावती—आपकी महती कृपा !

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

राजा—वयस्य यौगन्धरायण ! देव्यपनये का कृता ते बुद्धिः !

यौग०—कौशाम्बीमात्रं परिपालयामीति ।

राजा—अथ पद्मावत्या हस्ते किं न्यासकारणम् ?

यौग०—पुष्पकभद्रादिभिरादेशिकैरादिष्टा स्वामिनो देवी भविष्यतीति ।

राजा—इदमपि रुमण्वता ज्ञातम् ?

यौग०—स्वामिन् ! सर्वैरेव ज्ञातम् ।

राजा—अहो ! शठः खलु रुमण्वान् ।

राजा—मित्र यौगन्धरायण ! देवी के छिपाने का क्या प्रयोजन था ?

यौगन्धरायण—केवल कौशाम्बी पर ही हमारा अधिकार रह गया था (अर्थात् राज्य का अन्य भाग शत्रु के हाथ में था) इसलिए ।

राजा—पद्मावती के हाथ में इन्हें धरोहर के रूप में रखने का क्या कारण था ?

यौगन्धरायण—पुष्पकभद्र आदि ज्योतिषियों का कथन था कि पद्मावती आपकी रानी होंगी ।

राजा—क्या यह रुमण्वान् को विदित था ?

यौगन्धरायण—महाराज ! सभी जानते थे ।

राजा—अहो रुमण्वान् महान् धूर्त्त है ।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

यौग०—स्वामिन् ! देव्याः कुशलनिवेदनार्थमिद्यैव प्रतिनिवर्त्तता-मत्रभवान् रैभ्योऽत्रभवती च।

राजा—न, न । सर्व एव वयं यास्यामो देव्या पद्मावत्या सह ।

यौग०—यदाज्ञापयति स्वामी ।

(भरतवाक्यम्)

इमां सागरपर्यन्तां हिमवद्विन्ध्यकुण्डलाम् ।
महीमेकातपत्राङ्कां राजसिंहः प्रशास्तु नः ॥१६॥

(निष्क्रान्ताः सर्वे)

षष्ठोऽङ्कः समाप्तः

स्वप्नवासवदत्तं समाप्तम्

यौगन्धरायण—महाराज ! देवी वासवदत्ता का कुशल-वृत्तान्त सूचित करने को आज ही आर्य रैभ्य और आर्या वसुन्धरा को वापस भेज दीजिए ।

राजा—नहीं, नहीं । हम सभी देवी पद्मावती को साथ लेकर वहाँ जायेंगे ।

यौगन्धरायण—जैसा महाराज का आदेश ।

(भरतवाक्य)

एक छत्र से चिह्नित, समुद्र-पर्यन्त इस पृथ्वी का, जिसके हिमालय और विन्ध्याचल दो कुण्डल हैं, हमारे राजसिंह नरेश पालन करें ॥१६॥

(सब चले जाते हैं ।)

छठा अङ्क समाप्त

स्वप्नवासवदत्त समाप्त

———

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

परिशिष्टः

'स्वप्नवासवदत्त' के कुछ परीक्षोपयोगी अंशों की प्रसंग-सहित व्याख्या—

प्रथम अङ्क

(१) एवमनिर्ज्ञातानि दैवतान्यवभूयन्ते ।

यह वाक्य भासकृत 'स्वप्नवासवदत्त' के प्रथम अङ्क से उद्धृत किया गया है। यह यौगन्धरायण की उक्ति है।

महाराज दर्शक की बहन पद्मावती अपनी माता महादेवी से मिलने के लिए तपोवन के आश्रम को चली। सिपाहियों ने तपोवन के मार्ग से लोगों को हटाना शुरू किया। वासवदत्ता को यह अच्छा नहीं लगा। उसने मंत्री यौगन्धरायण से पूछा कि कौन मनुष्य लोगों को हटा रहा है? वासवदत्ता के प्रश्न के उत्तर में यौगन्धरायण ने कहा कि वह मनुष्य मार्ग से लोगों को हटा रहा है, जो अपने को धर्म से हटा रहा है। उसके कथन का अभिप्राय यह था कि तपोवन में मार्ग से लोगों को हटाना पाप है।

इसपर वासवदत्ता ने कहा कि मेरे पूछने का अभिप्राय यह नहीं है। मैं तो यह पूछना चाहती हूँ कि क्या मुझे भी हटाया जायगा? उत्तर में यौगन्धरायण ने कहा कि हाँ, तुझे भी हटाया जायगा; क्योंकि हटानेवाले लोग नहीं जानते कि तुम महासेन प्रद्योत की पुत्री तथा वत्सराज उदयन की पत्नी हो। अज्ञानवश तो देवताओं का भी अपमान हो जाता है।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

(२) तथा परिश्रमः परिखेदं नोत्पादयति यथाऽयं परिभवः।

यह वाक्य भासकृत 'स्वप्नवासवदत्त' के प्रथम अङ्क से उद्धृत किया गया है। यह वासवदत्ता की उक्ति है।

मगध-नरेश दर्शक की बहन पद्मावती अपनी माता महादेवी से मिलने के लिए तपोवन के आश्रम को चली। उसके सिपाहियों ने मार्ग से लोगों को हटाना शुरू किया। वासवदत्ता को यह अच्छा नहीं लगा।

यौगन्धरायण और वासवदत्ता दोनों अज्ञात वेश में वहाँ आये थे। दोनों ने मार्ग में अनेक कष्टों का अनुभव किया होगा। वासवदत्ता बहुत थक गई थी, किन्तु थकावट की उसे चिन्ता नहीं हुई। वह इस विचार से दुःखित थी कि उसे भी मार्ग से हटाया जायगा। उक्त वाक्य में वह यौगन्धरायण से कह रही है कि परिश्रम से उसे ऐसा कष्ट नहीं हुआ जैसा कि अपमान से होनेवाला था।

(३) कालक्रमेण जगतः परिवर्त्तमाना।
चक्रारपङ्क्तिरिव गच्छति भाग्यपङ्क्तिः॥

यह वाक्य भासकृत स्वप्नवासवदत्त के प्रथम अङ्क से उद्धृत किया गया है। यह यौगन्धरायण की उक्ति है।

तपोवन में पद्मावती के आने पर मार्ग से लोगों को हटाया जा रहा है। वासवदत्ता चिन्तित है कि उसे भी मार्ग से हटाया जायगा। शारीरिक परिश्रम से उत्पन्न कष्ट की अपेक्षा अपमान से उत्पन्न कष्ट अधिक भीषण होता है। इसपर यौगन्धरायण उसे इस प्रकार धीरज बँधाता है—

एक समय था जब तुम भी इसी प्रकार चलती थी। जब पुनः तुम्हारे पति को राज्य-लाभ होगा तब तुम इसी प्रकार चलोगी। भाग्य सदा एक-सा नहीं रहता। कभी अच्छे दिन आते हैं और कभी बुरे दिन।

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

रथ का पहिया जब घूमता रहता है तब उसका जो भाग नीचे है, वह ऊपर आ जाता है और फिर वही ऊपर का भाग नीचे चला जाता है। वैसे ही मनुष्य का भाग्य कभी उन्नत और कभी अवनत हो जाता है।

(४) न परुषमाश्रमवासिषु प्रयोज्यम्।

यह वाक्य भासकृत 'स्वप्नवासवदत्त' के प्रथम अङ्क से उद्धृत किया गया है। यह काञ्चुकीय की उक्ति है।

मगध-नरेश दर्शक की बहन पद्मावती जब अपनी माता महादेवी से मिलने के लिए तपोवन में आई और उसके सिपाही मार्ग में से लोगों को हटाने लगे तब काञ्चुकीय ने आकर सम्भषर्क से कहा कि लोगों को मत हटाओ। आश्रमवासियों के साथ कठोरता का व्यवहार करना उचित नहीं। इससे राजा की निन्दा होती है। ये तपोवन के लोग नगर में होनेवाले अपमानों से बचने के हेतु वन में आकर बसे हैं। इनके साथ नागरिकों का-सा व्यवहार करना उचित नहीं।

काञ्चुकीय के कहने पर सिपाही मार्ग से लोगों को हटाना बन्द कर देते हैं।

(५) हन्त सविज्ञानमस्य दर्शनम्।

यह वाक्य भासकृत 'स्वप्नवासवदत्त' के प्रथम अङ्क से उद्धृत किया गया है।

यह यौगन्धरायण की उक्ति है। मगध-नरेश दर्शक की बहन पद्मावती अपनी माता महादेवी से मिलने के लिए तपोवन में आई। उसके सिपाही मार्ग से लोगों को हटाने लगे। तब काञ्चुकीय ने आकर उन सिपाहियों को रोका और कहा कि यह तपोवन है। यहाँ रहनेवाले लोगों को यदि तुम मार्ग से हटाओगे तो राजा की निन्दा होगी। अपमान से बचने के लिए तो ये लोग यहाँ आकर बसे हैं।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

उक्त वाक्य में यौगन्धरायण ने काञ्चुकीय की प्रशंसा की है। वह उसके विचार से सहमत है।

(६) प्रद्वेषो बहुमानो वा सङ्कल्पादुपजायते।

यह वाक्य भासकृत 'स्वप्नवासवदत्त' के प्रथम अङ्क से उद्धृत किया गया है। यह यौगन्धरायण की उक्ति है।

महाराज दर्शक की बहन पद्मावती को देखकर यौगन्धरायण के मन में उसके प्रति विशेष आदर उत्पन्न हुआ। पुष्पकभद्र आदि ज्योतिषियों से उसे ज्ञात हुआ था कि पद्मावती उदयन की पत्नी होगी। वह पद्मावती को स्वामिनी समझने लगा। विवाह-सम्बन्ध होने से पूर्व ही उसके प्रति उसका आदर जाग्रत हो उठा। वह सोचने लगा कि द्वेष और आदर अपने मन की विचार-शक्ति से ही उत्पन्न होते हैं; क्योंकि मैं इसे अपने राजा उदयन की पत्नी के रूप में देख रहा हूँ। अतः मेरा इसके प्रति आदर-भाव उत्पन्न हुआ है।

(७) तपोवनानि नामाऽतिथिजनस्य स्वगेहम्।

यह वाक्य भासकृत 'स्वप्नवासवदत्त' नाटक के प्रथम अङ्क से उद्धृत किया गया है। यह तापसी की उक्ति है।

महाराज दर्शक की बहन पद्मावती अपनी माता महादेवी के दर्शनार्थ तपोवन को आई। स्वागतकारिणी तापसी को उसने प्रणाम किया—'आर्ये वन्दे !' तापसी ने उसे आशीर्वाद दिया—'चिरंजीव' और कहा कि तपोवन अतिथियों का अपना घर है। इसपर पद्मावती ने अपना आगमन सफल समझा।

(८) दुःखं न्यासस्य रक्षणम्।

यह वाक्य भासकृत 'स्वप्नवासवदत्त' नाटक के प्रथम अङ्क से उद्धृत किया गया है। यह काञ्चुकीय की उक्ति है।

महाराज दर्शक की बहन पद्मावती ने सभी ऋषियों को आमंत्रित किया। वह उन्हें उनकी अभीष्ट वस्तु प्रदान करने को तैयार

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

हो गई। काञ्चुकीय ने घोषणा की—"कलश किसे चाहिए? कौन वस्त्र का इच्छुक है? किसे अपना शिक्षण पूर्ण करके गुरु को कितनी दक्षिणा देनी है?"

इस घोषणा को सुनकर यौगन्धरायण काञ्चुकीय के समक्ष आकर अपनी माँग प्रस्तुत करता है—"मेरी बहन आवन्तिका कुछ दिनों के लिए पद्मावती का आश्रय चाहती है। उसका पति विदेश को गया है। जबतक वह लौटता नहीं, तबतक मेरी बहन पद्मावती के पास रहेगी।"

यौगन्धरायण की माँग सुनकर काञ्चुकीय घबरा जाता है। वह उसकी माँग को स्वीकार करना नहीं चाहता। वह कहता है कि 'धरोहर की रक्षा करना कठिन है। इसकी अपेक्षा तो धन देना, प्राण देना और तप करना भी कठिन नहीं है।'

किन्तु पद्मावती काञ्चुकीय के इस विचार से सहमत नहीं हुई। जबकि पहले ही घोषणा कर दी गई कि जो व्यक्ति जिस वस्तु की माँग करे, वह उसे दी जायगी, अनन्तर किसी भी प्रार्थना को ठुकराना उचित नहीं होगा।

(९) नहि सिद्धवाक्यान्युत्क्रम्य गच्छति विधिः सुपरीक्षितानि।

यह वाक्य भासकृत स्वप्नवासवदत्त के प्रथम अङ्क से उद्धृत किया गया है। यह यौगन्धरायण की उक्ति है।

जब यौगन्धरायण तपोवन को आया तब पद्मावती भी अकस्मात् वहाँ आ पहुँची। पद्मावती ने आकर घोषणा करा दी कि कोई भी तापस किसी भी इष्ट वस्तु को माँगे, वह उसे देगी। पद्मावती का तपोवन में आना और उक्त प्रकार की घोषणा कराना—दोनों ऐसे सुअवसर पर हुए, जैसे कि वे योजना के अन्तर्गत हों। इस प्रकार मंत्रियों की योजना को सफल बनाने में दैव ने भी साथ दिया।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

आदेशिकों ने कई बातें पहले से ही कह दी थीं। उन्होंने पहले ही कह दिया था कि उदयन के राज्य का बहुत-सा भाग शत्रु के हाथ में चला जायगा। उन्होंने यह भी कहा था कि उदयन का पद्मावती से विवाह होगा। पहली बात पूरी उतरी। शत्रु ने वत्सदेश का बहुत-सा भाग छीन लिया। अब दूसरी बात भी—उदयन का पद्मावती से विवाह—पूरी उतरनी चाहिए।

यौगन्धरायण का कथन है कि दैव सिद्धों के आदेशानुसार चलता है। सिद्धों का वचन कभी असत्य नहीं होता। उनके वचन में विश्वास रखते हुए यौगन्धरायण ने वासवदत्ता को पद्मावती के हाथ सौंपा।

(१०) सर्वजनसाधारणमाश्रमपदं नाम।

यह वाक्य भासकृत 'स्वप्नवासवदत्त' के प्रथम अङ्क से उद्धृत किया गया है।

यह काञ्चुकीय की उक्ति है।

पद्मावती, आवन्तिका के वेष में वासवदत्ता, यौगन्धरायण और काञ्चुकीय तपोवन में एक साथ बैठे हुए बातचीत कर रहे थे। इतने में वहाँ एक ब्रह्मचारी आया। महिलाओं को देखकर वह कुछ व्याकुल हो गया। इसपर काञ्चुकीय ने उससे कहा कि आप व्याकुल न हों। तपोवन के आश्रम में कोई भी व्यक्ति आ सकता है। यह स्थान सभी के लिए प्रवेश्य है।

(११) सकाम इदानीमार्ययौगन्धरायणो भवतु।

यह वाक्य भासकृत 'स्वप्नवासवदत्त' के प्रथम अङ्क से उद्धृत किया गया है। वासवदत्ता आत्मगत कह रही हैं।

ब्रह्मचारी उदयन की शोकावस्था के सम्बन्ध में इस प्रकार सुना रहा था कि जब उदयन को मालूम हुआ कि वासवदत्ता और यौगन्धरायण दोनों अग्नि में जल गये तब वह उसी अग्नि में कूदने लगा, किन्तु

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

मन्त्रियों ने उसे रोका। तब वह वासवदत्ता के गहनों को छाती से लगाकर मूर्च्छित हो गया।

ब्रह्मचारी द्वारा वर्णित उदयन की शोक-दशा को सुनकर सभी उपस्थित जन दुःखित हुए, किन्तु वासवदत्ता अपने मन में आर्य यौगन्धरायण को कोसने लगी। मूर्च्छा-दशा में यदि उदयन ने प्राण त्याग दिये तो यौगन्धरायण की पूरी योजना विफल होगी—यह सोचकर वासवदत्ता ने मन में व्यंग्यपूर्ण शब्दों में कहा कि अब आर्य यौगन्धरायण का मनोरथ पूरा हो।

(१२) धन्या सा स्त्री यां तथा वेत्ति भर्त्ता।
भर्तृस्नेहात् सा हि दग्धाऽप्यदग्धा॥

यह अवतरण भासकृत 'स्वप्नवासवदत्त' के प्रथम अङ्क से लिया गया है। यह ब्रह्मचारी की उक्ति है।

उदयन को जब वासवदत्ता की मृत्यु का पता चला, तब वह पृथ्वी पर लोटने लगा। उसका शरीर धूलि से भर गया। वह सहसा उठकर—'हा वासवदत्ता! हा अवन्ति-राजकुमारी! हा प्रिय शिष्या' आदि बहुत विलाप करने लगा। उसे इतना दुःख हुआ जितना कभी किसी चकवे को भी प्रिया-वियोग में नहीं होता। कोई भी विरही इतना सन्तप्त नहीं होगा। धन्य है वह नारी, जिसे पति वैसा मानता है। वास्तव में वही पतिप्रिया है। जलने पर भी वह जली नहीं। वह उसके हृदय में रहकर सदैव जीवित है।

द्वितीय अङ्क

(१३) सर्वजनमनोऽभिरामं खलु सौभाग्यं नाम।

यह वाक्य भासकृत 'स्वप्नवासवदत्त' के द्वितीय अङ्क से उद्धृत किया गया है। यह पद्मावती की उक्ति है।

वासवदत्ता, पद्मावती और उसकी दासी एक साथ बैठी हुई बातचीत कर रही थीं। वासवदत्ता को मालूम था कि पद्मावती का सम्बन्ध उसके भाई से होनेवाला है। अतः वासवदत्ता ने उसे 'भवि-

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

ष्यन्महासेनवधु' कहा। इसपर पद्मावती ने पूछा कि यह महासेन कौन है? वासवदत्ता ने कहा कि उज्जयिनी के राजा प्रद्योत का यह नाम है। बहुत सेना होने के कारण उसका यह नाम पड़ा था। तब दासी ने कहा कि पद्मावती महासेन के पुत्र से विवाह करना नहीं चाहती। वह वत्सराज उदयन को चाहती है। तब वासवदत्ता ने पूछा—क्यों? दासी ने कहा कि वह दयालु है। फिर दासी ने पूछा कि यदि वह राजा रूपवान् न हो। पद्मावती के उत्तर से पहले ही वासवदत्ता ने कहा कि वह रूपवान् है—इस प्रकार उज्जयिनी के लोग कहते हैं। वासवदत्ता की इस उक्ति पर पद्मावती को संदेह नहीं हुआ। वह समझती थी कि उज्जयिनी के लोगों ने उसे कई बार देखा होगा और उसकी प्रशंसा की होगी; क्योंकि सुन्दरता सबके मन को हर लेती है।

(१४) आगमप्रधानानि सुलभपर्यवस्थानानि महापुरुषहृदयानि भवन्ति।

यह वाक्य भासकृत 'स्वप्नवासवदत्त' के द्वितीय अङ्क से उद्धृत किया गया है। यह धाय की उक्ति है।

वासवदत्ता, पद्मावती और उसकी दासी एक साथ बैठी हुई विनोद-वार्त्ता में व्यस्त थीं। इतने में पद्मावती की धाय ने आकर कहा कि राजकुमारी पद्मावती का वत्सराज उदयन के प्रति वाग्दान हो गया। इसपर वासवदत्ता ने पूछा कि उदयन स्वस्थ तो हैं? उत्तर में धाय ने कहा कि स्वस्थ हैं और उन्होंने राजकुमारी पद्मावती को स्वीकार भी कर लिया है। तब वासवदत्ता ने सहसा कहा कि बहुत बुरा हुआ। जब धाय ने पूछा कि इसमें क्या बुरा हुआ, तब वासवदत्ता ने कहा कि इसमें बुरा कुछ नहीं हुआ, किन्तु यह आश्चर्य की बात थी कि वह वासवदत्ता के लिए इतना सन्तप्त होकर अब एकदम उदासीन हो गये। तब धाय ने उसे समझाया कि महान् व्यक्तियों के हृदय शास्त्रों के उपदेशों से प्रभावित होकर सहज ही अपनी प्रकृति पर आ जाते हैं। अतः वासवदत्ता की मृत्यु का शोक

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

उनके मन में स्थायी नहीं रहा। शास्त्रों में लिखा है कि मृत्यु अनिवार्य है। मृत के लिए शोक नहीं करना चाहिए। महापुरुषों की यह विशेषता है कि वे गम्भीर होते हैं। शोक उन्हें दबा नहीं सकता।

तृतीय अङ्क

(१५) अहो अकरुणाः खल्वीश्वराः।

यह वाक्य भासकृत 'स्वप्नवासवदत्त' के तृतीय अङ्क से उद्धृत किया गया है। यह वासवदत्ता की उक्ति है।

उदयन का पद्मावती से विवाह हो गया। इससे पूर्व उदयन के हृदय पर वासवदत्ता का ही अधिकार था। अब वे पद्मावती के हो गये; अतः वासवदत्ता अतीव चिन्तित है। शिलापट्ट पर बैठी हुई शून्य-हृदय-सी वह दुःखित हो रही है।

इतने में एक दासी ने आकर उससे कहा कि हमारी स्वामिनी कह रही हैं कि तुम राजकुमारी पद्मावती के लिए सौभाग्य-माला तैयार करो। वासवदत्ता पहले से ही दुःखित थी। इस सन्देश से वह और भी दुःखित हुई और कहने लगी कि ऐसा काम करना भी मेरे भाग्य में लिखा था! हाय, दैव निश्चित ही निर्दय है!

यह वाक्य 'स्वप्नवासवदत्त' के पञ्चम अङ्क में भी आया है। वहाँ भी यह वासवदत्ता की उक्ति है। पद्मावती की दासी वासवदत्ता से कह रही है कि राजकुमारी पद्मावती शिरोवेदना से पीड़ित हैं। उनके मस्तक पर लगाने को वह अनुलेपन लाई है।

वासवदत्ता सुनकर घबरा जाती है। उसे पता है कि उदयन पद्मावती को ब्याहकर वासवदत्ता के शोक को कथंचित् रोक सके हैं। अब पद्मावती को अस्वस्थ सुनकर वे पूर्ववत् दुःखी होंगे। उक्त शब्दों में वह दैव को कोस रही है। दैव अतीव निर्दय है।

यहाँ पर पति-प्रेम का उच्च आदर्श प्रस्तुत किया गया है। पद्मावती के अस्वस्थ होने पर वासवदत्ता इसलिए दुःखित है कि उदयन पद्मावती को अस्वस्थ पाकर स्वयं अस्वस्थ हो जायेंगे।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

(१६) अयुक्तं परपुरुषमङ्कीर्त्तनं श्रोतुम् ।

यह वाक्य भासकृत 'स्वप्नवासवदत्ता' के तृतीय अंक से उद्धृत किया गया है। यह वासवदत्ता की उक्ति है। वासवदत्ता और उसकी दासी एक साथ बैठी हुई विनोद-वार्त्तालाप कर रही हैं।

पद्मावती का उदयन के साथ विवाह हो गया। वासवदत्ता दासी से पूछती है—क्या तूने वर को देखा है? दासी 'हाँ' में उत्तर देती है। वासवदत्ता पूछती है कि क्या वह रूपवान् है? तब दासी कहती है कि 'हाँ' वह कामदेव के सदृश है। वासवदत्ता दासी से चुप रहने को कहती है। दासी पूछती है कि तुम मुझे मना क्यों कर रही हो? वासवदत्ता कहती है कि पराये पुरुष का वर्णन सुनना ठीक नहीं॥

चतुर्थ अङ्क

(१७) दत्तं वेतनमस्य परिखेदस्य ।

यह वाक्य भासकृत 'स्वप्नवासवदत्ता' के चतुर्थ अंक से उद्धृत किया गया है। यह वासवदत्ता की उक्ति है।

जब उदयन और विदूषक परस्पर वार्त्तालाप कर रहे हैं तब विदूषक उदयन से पूछता है कि आपको कौन प्रिय है—वासवदत्ता अथवा पद्मावती? उदयन कुछ नहीं कहना चाहता। विदूषक आग्रह करता है—वासवदत्ता जीवित नहीं हैं; पद्मावती वहाँ उपस्थित नहीं। विदूषक के प्रश्नोत्तर में उदयन को त्रस्त होना नहीं चाहिए। तब उदयन अपने हृदय के भावों को व्यक्त करता है—

"रूप, शील और माधुर्य होने के कारण यद्यपि पद्मावती आदरणीय है तो भी वासवदत्ता में आसक्त मेरे मन को वह आकृष्ट नहीं कर सकी।"—उदयन की इस उक्ति से प्रफुल्ल होकर वासन्ती लता-मंडप में छिपी हुई वासवदत्ता अपने मन में कहती है कि अज्ञातवास में मैंने जितना भी कष्ट उठाया, आज उसका वेतन मिल गया; क्योंकि उदयन समझते हैं कि मैं मर चुकी हूँ तो भी वे मुझे भूले नहीं और पद्मावती

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

की अपेक्षा मुझे विशेष गौरव प्रदान किया। अज्ञातवास में मेरा रहना आज सफल हुआ; क्योंकि मुझे पति का प्रेम परोक्ष में प्रकट हुआ॥

(१८) अनतिक्रमणीयो हि विधिः।

यह वाक्य भासकृत 'स्वप्नवासवदत्त' के चतुर्थ अंक में से उद्धृत किया गया है। यह विदूषक की उक्ति है।

विदूषक के कथन का अभिप्राय यह है कि विधि-विधान अवश्य होकर रहेगा। हम उसे हटा नहीं सकते।

यह प्रसंग उस समय का है जब उदयन विदूषक से पूछ रहा है कि 'तुझे कौन प्रिय है—वासवदत्ता अथवा पद्मावती?' विदूषक कहता है कि वासवदत्ता का मैं अवश्य आदर किया करता था, किन्तु पद्मावती रूपवती है, मधुरवाक् है, क्रोध और अहंकार नहीं करती। उसमें एक भव्य गुण यह है कि वह उत्तम स्वादिष्ट भोजन से मेरा अभिनन्दन करती है। इसपर उदयन कहता है कि यह मैं वासवदत्ता से कह दूँगा। विदूषक कहता है कि वासवदत्ता कहाँ है! वह तो मर चुकी हैं। तब उदयन शोक से व्याकुल हो जाता है। इसपर विदूषक उसे धैर्य बँधाता है और कहता है कि दैवगति दुर्निवार है। दैवी विधान अतिक्रान्त नहीं हो सकता। जो भाग्य में लिखा है, वह होकर रहेगा। मनुष्य के अधीन कुछ भी नहीं है।

(१९) दुःखं त्यक्तुं बद्धमूलोऽनुरागः
स्मृत्वा स्मृत्वा याति दुःखं नवत्वम्।
यात्रा त्वेषा यद् विमुच्येह बाष्पं
प्राप्तातृष्णया याति बुद्धिः प्रसादम्॥

यह पद्य भासकृत स्वप्नवासवदत्त के चतुर्थ अंक से उद्धृत किया गया है। यह उदयन की उक्ति है।

वासवदत्ता की याद में उदयन शोकातुर है। विदूषक उसे धैर्य बँधा

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

रहा है। उदयन उससे कहता है कि मुझे धैर्य का उपदेश मत दो, तुम मेरी दशा को नहीं जानते।

दृढ़ प्रेम को भुलाना सरल नहीं। प्रियजन की याद में दुःख नया हो जाता है। प्रेम की यह रीति है कि हम वियोग में आँसू बहाकर उऋण हो जाते हैं और हमारा दुःखी मन शान्त हो जाता है।

(२०) सदाक्षिण्यस्य जनस्य परिजनोऽपि सदाक्षिण्य एव भवति।

यह वाक्य 'स्वप्नवासवदत्त' के चौथे अंक से उद्धृत किया गया है। यह पद्मावती की उक्ति है।

प्रमदवन की वाटिका में वासवदत्ता की स्मृति में उदयन अश्रुपात कर रहे हैं। उनका मुख आँसुओं के गिरने से मलिन हो गया है। विदूषक मुँह धोने का जल लाने जाता है। जब वह जल ला रहा है, मार्ग में पद्मावती से भेंट हो जाती है। वह विदूषक से पूछती है कि यह क्या है? पहले तो विदूषक बतलाना नहीं चाहता, किन्तु जब पद्मावती आग्रह करती है तब वह कहता है कि हवा में उड़ी हुई कास के फूल की धूलि राजा की आँख में पड़ गई है और उनका मुख अश्रुपात से मलिन हो गया है। अतः उनका मुँह धोने का जल ले जा रहा हूँ। अच्छा होगा कि यह जल आप ही ले जावें।

वासन्तीलता-मण्डप में छिपी हुई पद्मावती ने जान लिया था कि वास्तव में वासवदत्ता की स्मृति में आँख से निकले हुए आँसुओं से उदयन का मुख मलिन हुआ है, न कि कास के फूल की धूलि के आँख में पड़ने से। वह समझती है कि विदूषक उससे झूठ बोल रहा है। वह उससे कैसे कहता कि वासवदत्ता की स्मृति में उदयन रोया है। वह स्वयं मन में कहती है कि शिष्ट जन का सेवक भी शिष्ट होता है। शिष्टाचार के अनुसार रहस्य का गोपन ही उचित था।

(२१) स्त्रीस्वभावस्तु कातरः।

यह वाक्य भासकृत 'स्वप्नवासवदत्त' के चतुर्थ अंक से उद्धृत किया गया है। यह उदयन की उक्ति है।

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

प्रमदवन की वाटिका में वासवदत्त की स्मृति में उदयन अश्रुपात कर रहे हैं। उनका मुख आँसुओं के गिरने से मलिन हो गया है। विदूषक मुँह धोने का जल लाने जाता है। जब वह जल ला रहा है, मार्ग में पद्मावती से भेंट हो जाती है। वह विदूषक से पूछती है कि यह क्या है ? पहले तो विदूषक मौन रहता है, किन्तु जब पद्मावती आग्रह करती है तब वह कहता है कि वायु से उड़ी हुई कास-पुष्प की रेणु राजा के नेत्रों में पड़ गई है। मुँह धोने का जल ला रहा हूँ। अच्छा होगा कि यह जल आप ही ले चलें।

माधवीलता-मंडप में छिपी हुई पद्मावती ने जान लिया था कि वास्तव में वासवदत्ता की स्मृति में आँखों से स्रवित अश्रु से उदयन का मुख मलिन हुआ था, न कि कास-कुसुम को रेणु के आँखों में पड़ जाने से।

किन्तु जब वह जल लेकर पहुँची तब उदयन ने उससे झूठ कह दिया कि वायु से प्रकम्पित कास-कुसुम की रेणु के आँख में पड़ जाने से मेरे मुँह पर आँसू आ गिरे।

इस प्रकार उदयन तथ्य को छिपाना चाहता है। वह मन में सोच रहा है कि यदि इसे सत्य कह दिया जाय तब सम्भव है कि यह उस सत्य को सहन न कर सके। यद्यपि यह गंभीर स्वभाव की नारी है तो भी स्त्रियों का स्वभाव अधीर होता है॥

(२२) सत्कारो हि नाम सत्कारेण प्रतीष्टः प्रीतिमुत्पादयति।

यह वाक्य भासकृत 'स्वप्नवासवदत्त' के चतुर्थ अंक से उद्धृत किया गया है। यह विदूषक की उक्ति है।

विदूषक उदयन से कह रहा है कि महाराज दर्शक ने अपने मित्र-राजाओं की एक बैठक बुलाई है। हमें चाहिए कि हम स्वयं महाराज दर्शक को साथ लेकर वहाँ चलें। महाराज दर्शक ने बैठक बुलाकर हमें सम्मानित किया। हमें महाराज दर्शक के साथ स्वयं वहाँ उपस्थित होकर दर्शक को सम्मान देना चाहिए। हमें आमंत्रण की प्रतीक्षा करना उचित

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

नहीं। जब कोई व्यक्ति हमें आदर देता है तो हमें भी उसका आदर करना चाहिए। प्रेम से प्रेम बढ़ता है।

(२३) गुणानां वा विशालानां सत्काराणां च नित्यशः।
कर्त्तारः सुलभा लोके विज्ञातारश्च दुर्लभा॥

यह पद्य भासकृत 'स्वप्नवासवदत्त' के चतुर्थ अंक से उद्धृत किया गया है। यह महाराज उदयन की उक्ति है। उदयन विदूषक से कह रहे हैं कि परोपकार आदि विशाल गुणों का तथा निरन्तर सम्मान का प्रदर्शन करनेवाले लोग लोक में बहुत पाये जाते हैं, किन्तु उनके जानकार तो विरले ही हैं।

प्रसंग इस प्रकार है—उदयन का विवाह पद्मावती से हो गया है। अनन्तर वत्सराज के भूभाग को, जिसे आरुणि ने छीन लिया था, लौटाने के लिए महाराज दर्शक ने मित्र-राष्ट्रों के राजाओं की एक बैठक बुलाई। विदूषक उदयन से कह रहा है कि हम आमंत्रण की प्रतीक्षा में न रहें अपितु स्वयं ही महराज दर्शक को साथ लेकर बैठक में उपस्थित हो जायँ। महाराज दर्शक ने सभा का आयोजन करके हमें सम्मान दिया है। हम उस सम्मान को पहचानें और बैठक में उपस्थित होकर इस बात का परिचय दें कि हमने उनके सम्मान का स्वागत किया है।

विदूषक ने इस पद्य से पूर्व उदयन से कहा था कि जब कोई व्यक्ति हमें आदर देता है तब हमें भी उसका आदर करना चाहिए। प्रस्तुत पद्य में उदयन द्वारा विदूषक के कथन का समर्थन है।

षष्ठ अङ्क

(२४) कातरा येऽप्यशक्ता वा नोत्साहस्तेषु जायते।
प्रायेण हि नरेन्द्रश्रीः सोत्साहैरेव भुज्यते॥

यह पद्य भासकृत 'स्वप्नवासवदत्त' के छठे अंक से उद्धृत किया गया है। यह काञ्चकीय की उक्ति है। काञ्चकीय उदयन को महासेन

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

प्रद्योत का सन्देश दे रहा है। अतः वास्तव में महासेन प्रद्योत की यह उक्ति है।

महासेन के सन्देश का तात्पर्य यह है कि निर्बल और कायर मनुष्यों में उत्साह नहीं होता। राज्य का उपभोग प्रायः उत्साही मनुष्य ही करते हैं।

प्रसंग इस प्रकार है—राजा दर्शक की सहायता और मंत्रियों की नीति के फलस्वरूप उदयन ने शत्रु पर विजय पाई। महासेन प्रद्योत सन्देश भेजकर उदयन की प्रशंसा कर रहे हैं। उनके सन्देश का तत्त्व कौटिल्य के इस कथन पर आधारित है कि पृथ्वी का उपभोग वीर पुरुष ही कर सकता है—'वीरभोग्या वसुन्धरा।'

(२५) कः कं शक्तो रक्षितुं मृत्युकाले
रज्जुच्छेदे के घटं धारयन्ति।
एवं लोकस्तुल्यधर्मो वनानां
काले काले छिद्यते रुह्यते च॥

यह पद्य भासकृत 'स्वप्नवासवदत्त' नाटक के छठे अंक से उद्धृत किया गया है। यह काञ्चकीय की उक्ति है।

महासेन प्रद्योत ने काञ्चकीय और धाय को वासवदत्ता और उदयन के चित्र देकर उदयन के पास भेजा। वे आकर उदयन से मिले और उसे महासेन प्रद्योत और अंगारवती का सन्देश दिया। चित्र को देखकर उदयन का सन्ताप पुनर्जाग्रत हो गया। उसे वासवदत्ता की याद आई। तब काञ्चकीय ने उससे कहा कि आप सन्ताप मत करें; क्योंकि मृत्यु अनिवार्य है।

जब मौत का समय निकट आता है तब कोई भी व्यक्ति उससे नहीं बच सकता। जब घड़े की रस्सी टूट जाती है तब घड़ा कुएँ में गिर जाता है। हम उसे पकड़ नहीं सकते। मनुष्य उस वन के समान है, जो प्रतिदिन कटता है और फिर से उगता है।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

(२६) परस्परगता लोके दृश्यते रूपतुल्यता ।

यह पंक्ति भासकृत 'स्वप्नवासवदत्त' के छठे अंक से उद्धृत की गई है। यह उदयन की उक्ति है।

प्रद्योत महासेन ने वासवदत्ता और उदयन के चित्र देकर काञ्चुकीय और धाय को उदयन के पास भेजा। जब पद्मावती ने वासवदत्ता के चित्र को देखा तब उसने कहा कि उस चित्र की आकृति आवन्तिका से मिलती है, जिसे एक ब्राह्मण ने उसके हाथ सौंपा था और कहा था कि जबतक उसका पति विदेश से न लौटे तबतक वह वहीं पद्मावती के पास रहेगी।

इसपर उदयन ने कहा कि यदि आवन्तिका किसी ब्राह्मण की बहन है, तो स्पष्ट ही वह वासवदत्ता नहीं होगी। जगत् में समान रूप और समान आकृतिवाले व्यक्ति भी मिलते हैं॥

(२७) साक्षिमन्न्यासो निर्यातयितव्यः ।

यह वाक्य भासकृत स्वप्नवासवदत्त के छठे अंक से उद्धृत किया गया है। यह उदयन की उक्ति है।

जब पद्मावती, उदयन, काञ्चुकीय, धाय आदि बातचीत कर रहे थे तब पद्मावती ने कहा कि वासवदत्ता का जो चित्र महासेन ने भेजा है, उस चित्र की आकृति के सदृश आकृति की एक नारी उसके पास रहती है। एक ब्राह्मण ने उसे सौंपा था कि जबतक उसका पति विदेश से नहीं लौटता तबतक वह वहाँ (पद्मावती के पास) रहेगी।

पद्मावती की इस बात को सुनकर उदयन को सन्देह हुआ कि सम्भव है, वह वासवदत्ता हो।

इतने में ब्राह्मण के वेष में यौगन्धरायण उनके समक्ष उपस्थित हुआ। उसने अपनी बहन की माँग की। आवन्तिका को वहाँ लाया गया। वह घूँघट किये थी।

उदयन ने पद्मावती से कहा कि धरोहर को लौटाते समय कोई

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

गवाह होना चाहिए। अतः आवन्तिका को लौटाते समय कांचुकीय और धाय—दोनों गवाह होंगे।

(२८) अर्थिस्वं नाम शरीरमपराध्यति।

यह वाक्य भासकृत 'स्वप्नवासवदत्त' के छठे अङ्क से उद्धृत किया गया है।

यह वासवदत्ता की उक्ति है। पद्मावती ने वासवदत्ता से क्षमा माँगी और कहा कि मैंने आपकी वास्तविकता को न जानकर भूल की। मैंने आपके साथ सखी-जैसा व्यवहार किया जबकि मुझे गुरुजन के सदृश व्यवहार करना था। अतः मैं नमन द्वारा आपको मनाती हूँ।

ऐसा कहते हुए जब पद्मावती ने अपना सिर झुकाया तब वासवदत्ता ने पद्मावती से कहा कि आप अपराधिनी नहीं हैं। अपराध मेरा ही था; क्योंकि मैंने अपने को अज्ञात रखा। इस परिस्थिति में आपने यदि मेरे साथ कभी अनुचित व्यवहार किया तो इसमें मेरा ही अपराध था। "प्रार्थी यौगन्धरायण द्वारा आपको सौंपा गया मेरा शरीर ही अपराधी है।"

अथवा उक्त वाक्य प्रश्नात्मक है। वासवदत्ता पद्मावती से कह रही है कि मेरे शरीर की स्वामिनी होकर क्या आप अपराधिनी हो सकती हैं? अर्थात् नहीं हो सकतीं। प्रभु का दास पर पूर्ण अधिकार होता है।

—:०:—

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

टिप्पणियाँ

प्रथम अंक

नान्दी—भास के नाटकों में नान्दी का अर्थ 'पूर्वरंग' है। नाटक के आरंभ से पूर्व पर्दे के पीछे विघ्न-निवारणार्थ देवताओं की अर्चा की जाती थी।

नन्दन्ति देवता यस्मात्तस्मान्नान्दीति संज्ञिता ॥

कालिदास और उसके परवर्त्ती नाटकों में नाटक के आरम्भ में नमस्कारात्मक अथवा शुभाशंसात्मक पद्य को ही 'नान्दी' कहा जाने लगा।

प्रस्तुत नाटक में 'उदयनवेन्दुसवर्णा' नान्दी नहीं है; क्योंकि इस पद्य के पूर्व भास ने नान्दी का होना कहा है—'नान्द्यन्ते ततः प्रविशति सूत्रधारः'; किन्तु भास के परवर्त्ती साहित्यिकों ने इसे नान्दी कहा है; क्योंकि उनके द्वारा स्वीकृत नान्दी के सभी लक्षण इसमें मिलते हैं। यह पद्य 'आशीर्वादात्मिका नान्दी' कहा जा सकता है।

सूत्रधार—रंगमञ्च का प्रबन्धक। लक्षण इस प्रकार है—

नाट्योपकरणादीनि सूत्रमित्यभिधीयते।
सूत्रं धारयतीत्यर्थे सूत्रधारो निगद्यते ॥

(१) उदयेति। अन्वयः—उदयनवेन्दुसवर्णौ आसवदत्ता बलौ पद्मावतीर्ण पूर्णौ वसन्त कम्रौ बलस्य भुजौ त्वां पाताम् ॥

शब्दार्थ—सवर्ण=सदृश। आसव=मदिरा। अवतीर्ण=आगमन। कम्र=कमनीय, रम्य। पाताम्=रक्षा करें।

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

समास—उदयनवेन्दुसवर्णौ—उदयकालिकः नवेन्दु नवः इन्दुः—कर्मधारय) = उदयनवेन्दुः (कर्म०—मध्यमपदलोपी); उदयनवेन्दुना समानः वर्णः ययोः (बहुव्रीहिः) तौ। आसवदत्ताबलौ—आसवेन दत्तम् अबलं याभ्यां (बहु०) तौ; अथवा—आसवेन दत्तम् आ (समन्तात्) बल याभ्याम् (बहु०), तौ। पद्मावतीर्णपूर्णौ = पद्मायाः अवतीर्णम् (= अवतारः) (ष० तत्पु०), अथवा पद्मस्य अवतीर्णम् (ष० तत्पु०), तेन पूर्णौ (तृ० तत्पु०)। वसन्तकम्रौ—वसन्त इव कम्रौ (उपमित कर्म०)।

विशेष—आर्यावृत्तम्। इस पद्य में उदयन, वासवदत्ता, पद्मावती और वसन्तक—इन चार मुख्य पात्रों का नामनिर्देश किया गया है। अतः यह मुद्रा-अलंकार है। [१]

आर्यमिश्र। मिश्र = पूज्य।

नेपथ्य—पर्दे के पीछे नाट्य के उपकरण रखने का स्थान; सज्जाकक्ष।

(२) भृत्यैरिति। अन्वयः—मगधराजस्य स्निग्धैः कन्यानुगामिभिः भृत्यैः तपोवनगतः सर्वः जनः धृष्टम् उत्सार्यते।

शब्दार्थ—स्निग्ध = प्रिय। धृष्टम् = कठोरता से, न कि नम्र भाव से।

वाच्य-परिवर्त्तन—मगधराजस्य स्निग्धाः कन्यानुगामिनः भृत्याः तपोवनगतं सर्वं जनं धृष्टम् उत्सारयन्ति॥

समास—मगधराजस्य = मगधानां राजा मगधराजः, (ष० तत्पु०) तस्य।

कन्यानुगामिभिः—कन्याम् अनुगन्तुं शीलम् एषाम् इति तैः, कन्याम् अनुगच्छन्तीति (उपपद तत्पु०) ते कन्यानुगामिनः तैः। तपोवनगतः = तपोवनं गतः (द्वि० तत्पु०)।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

विशेष—'मगधराज' शब्द से पद्मावती के भाई तथा मगध देश के राजा दर्शक का निर्देश है।

अनुष्टुब् वृत्तम्। [२]

स्थापना—परवर्त्ती साहित्यिकों ने इसे प्रस्तावना कहा है। इसे 'आमुख' भी कहते हैं। कथावस्तु की स्थापना होने से ही इस अंश को 'स्थापना' कहा गया है। भास के नाटकों में सूत्रधार के द्वारा ही स्थापना की गई है, किन्तु भरत के नाट्यशास्त्र में सूत्रधार से भिन्न स्थापक के होने का विधान मिलता है—'स्थापकः प्रविशेत्तत्र'। भास ने सामान्यतः भरत के नियमों का ही परिपालन किया है, किन्तु कहीं-कहीं स्वतंत्रता का भी परिचय दिया है।

(३) धीरस्येति। **अन्वयः**—धीरस्य आश्रमसंश्रितस्य वसतः वन्यैः फलैः तुष्टस्य मानार्हस्य वल्कलवतः जनस्य त्रासः समुत्पाद्यते। भोः उत्सिक्तः विनयाद् अपेतपुरुषः चलैः भाग्यैः विस्मितः कः अयम् इदं निभृतं तपोवनम् आज्ञया ग्रामीकरोति।

शब्दार्थ—वसतः = तपोवन में निवास करते हुए। वन्य = वन में उत्पन्न। वल्कलवतः = वल्कलधारी। त्रास = भय। उत्सिक्त = घमंडी। अपेत = रहित। विस्मित = अतिगर्वित! निभृत = शान्त। ग्रामीकरोति—गाँव-जैसा बना रहा है।

समास—आश्रमसंश्रितस्य = आश्रमं संश्रितः (द्वि० तत्पु०) तस्यः। अपेतपुरुषः = अपेताः पुरुषाः यस्य (बहु०) सः।

विशेष—शार्दूलविक्रीडित वृत्तम्।

ग्रामीकरोति = अग्रामं ग्रामं करोति। [३]

वक्तुकामा—वक्तुं कामो यस्याः सा (बहु०)। 'काम' शब्द से पूर्व 'तुं' के मकार का लोप हो जाता है—'तुं काममनसोरपि'।

भुक्तोज्झितः – (पूर्वं) भुक्तः (पश्चाद्) उज्झितः (कर्म०)

Jagannath Bhattarai Collection, Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

(४) पूर्वमिति । अन्वयः—पूर्वं त्वया अपि एवम् अभिमतं गतम् आसीत् । पुनः भर्त्तुः विजयेन श्लाघ्यं गमिष्यसि । कालक्रमेण परिवर्त्तमाना जगतः भाग्यपङ्क्तिः चक्रारपङ्क्तिः इव गच्छति ॥

शब्दार्थ—अभिमत — स्वेच्छानुरूप । श्लाघ्यम् — प्रशंसापूर्वक । परिवर्त्तमाना = बदलती हुई । चक्रारपङ्क्तिः = चक्र के पहियों की श्रेणी ।

समास—कालक्रमेण = कालस्य क्रमः (ष० तत्पु०), तेन । चक्रारपङ्क्तिः = चक्रस्य अराणां पंक्तिः (ष० तत्पु०) । भाग्यपङ्क्तिः— भाग्यस्यपङ्क्तिः (ष० तत्पु०) ।

विशेष—वसन्ततिलका वृत्तम् । [४]

(५) परिहरतु इति । अन्वयः—भवान् नृपापवादं परिहरतु । आश्रमवासिषु परुषं न प्रयोज्यम् । मनस्विनः एते नगरपरिभवान् विमोक्तुं वनम् अभिगम्य वसन्ति ।

शब्दार्थ—अपवाद = निन्दा । परुष = कठोर । परिभव = अपमान । मनस्विनः = स्वात्माभिमानी ।

समास—नृपापवादम् = नृपस्य अपवादः (ष० तत्पु०) तम् । आश्रमवासिषु = आश्रमे वसन्तीति (उपपद तत्पु०) ते आश्रमवासिनः, तेषु । नगरपरिभवान — नगरोत्पन्नाः परिभवाः (कर्म०) तान् ।

विशेष—पुष्पिताग्रा वृत्तम् । विमोक्तुम् — वि + मुच् + तुम् । मनस्विनः = प्रशस्तं मनः येषां ते — मनस् + विन् । अभिगम्य = अभि + गम् + क्त्वा (= ल्यप्) । [५]

काञ्चुकीय = कञ्चुकी । लक्षण इस प्रकार है—

ये नित्यं सत्त्वसम्पन्नाः कामदोषादिवर्जिताः ।
ज्ञानविज्ञानकुशलाः काञ्चुकीयास्तु ते स्मृताः ॥

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

अन्तःपुरचरो वृद्धो विप्रो गुणगणान्वितः ।
सर्वकार्यार्थकुशलः कञ्चुकीत्यभिधीयते ॥

काञ्चुकीय अथवा कञ्चुकी निपुण, कामादि दोष-रहित, सत्त्वनिष्ठ, गुणान्वित तथा सभी कार्यों में दक्ष होना चाहिए। अन्तःपुर के कार्यों में ही प्रायः उसकी नियुक्ति की जाती है।

अभिहित नामधेयस्य—अभिहितं (कृतं) नामधेयं यस्य (बहु०)।

(६) तीर्थोदकानीति । अन्वयः—(तद् भवन्तः) तीर्थोदकानि, समिधः, कुसुमानि, दर्भान्—(इमानि) तपोधनानि स्वैरं वनाद् उपनयनन्तु। धर्मप्रिया नृपसुता तपस्विषु धर्मपीडां नहि इच्छेत् एतत् अस्याः कुलव्रतम्।

शब्दार्थ—स्वैरम्=स्वेच्छानुसार, स्वच्छन्द। कुलव्रतं=कुलपरम्परागत धर्म।

समास—तीर्थोदकानि—तीर्थस्य उदकम्=तीर्थोदकम् (ष० तत्पु०), तानि। तपोधनानि=तपसे धनानि (चतुर्थी तत्पु०)। धर्मप्रिया=धर्मः प्रियः यस्याः (ष० तत्पु०) सा। 'वा प्रियस्य' इस वार्त्तिक के अनुसार 'प्रियधर्मा' भी हो सकता है। धर्मपीडा—धर्मस्य पीडा (ष० तत्पु०) ताम्। कुलव्रतम्—कुलागतं व्रतम् (मध्यमपदलोपी कर्म०)।

विशेष—वसन्ततिलका वृत्तम्। [६]

(७) प्रद्वेष इति । अन्वयः—प्रद्वेष बहुमानः वा सङ्कल्पात् उपजायते। भर्त्तृदाराभिलाषित्वात् मे अस्यं महती स्वता।

शब्दार्थ—प्रद्वेषः=वैर। बहुमानः=आदर। सङ्कल्प=मन की इच्छा। भर्त्तृ=स्वामी। दार=पत्नी। अभिलाषित्व=इच्छा का होना। स्वता—आत्मीयता।

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

समास - भर्त्तृदाराभिलाषित्वात्—भर्त्तुः दारा=भर्त्तृदाराः (ष० तत्पु०); भर्त्तृदारा इत्यभिलाषोऽस्यास्तीति (बहु०) भर्त्तृदाराभिलाषी, तस्य भावः भर्त्तृदाराभिलाषित्वं तस्मात्।

विशेष—अनुष्टुब् वृत्तम्। [७]

(८) कस्यार्थ इति। अन्वयः—कस्य कलशेन अर्थः ? कः वासः मृगयते ? कः यथानिश्चितं दीक्षां पारितवान् ? पुनः किम् इच्छति यद् गुराः देयं भवेत् ? इह धर्माभिरामप्रिया नृपजा आत्मानुग्रहम् इच्छति। यस्य यत् समीप्सितम् अस्ति तद् वदतु अद्य कस्य किं दीयताम् ?

शब्दार्थ—वासः=वस्त्र को। मृगयते=चाहता है। पारितवान् =समाप्त किया है। धर्माभिराम=धर्म में रुचि रखनेवाले (तापस लोग)। नृपजा=राजकुमारी। समीप्सित=अभीष्ट।

समास—यथानिश्चितम्—निश्चितमनतिक्रम्य (अव्ययी०)। आत्मानुग्रहम्—आत्मनि अनुग्रहः (स० तत्पु७) तम्। धर्माभिरामप्रिया—धर्मेऽभिरामो येषां (बहु०) ते धर्माभिरामाः; धर्माभिरामाः प्रियाः यस्याः (बहु०) सा। अथवा—धर्मः अभिरामः प्रियश्च यस्याः (बहु०) सा। अथवा—धर्मेण अभिरामा चासौ प्रिया च (कर्म०)।

विशेष—शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम्। भास की सरल शैली का यह उत्तम उदाहरण है। [८]

आगन्तुक=नवागत। प्रोषितभर्त्तृका—प्रोषितो भर्त्ता यस्याः (बहु०) सा।

(९) कार्यमिति। अन्वयः—अर्थैः कार्यं नैव, भोगैः अपि न, वस्त्रैः न; अहं वृत्तिहेतोः काषायं न प्रपन्नः। धीरा दृष्टधर्मप्रचारा इयं कन्या ये भगिन्याः चारित्रं रक्षितुं शक्ता।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

शब्दार्थ—अर्थ = धन। काषाय = गेरुआ वस्त्र। वृत्ति = आजीविका। प्रपन्न = प्राप्त, स्वीकृत। धीरा = विदुषी। चारित्र = चरित्र।

समास—दृष्टधर्मप्रचारा = दृष्टः धर्मस्य प्रचारः यस्याः (बहु०) सा।

विशेष—वैश्वदेवी वृत्तम्। अर्थैः, भोगैः, वस्त्रैः—ये तीनों 'हेतौ तृतीया' के उदाहरण हैं।

काषायम् = कषायेण रक्तं वस्त्रम्, कषाय + अण्। चारित्रम् = चरित्रमेव चारित्रम्—स्वार्थेऽण्।

[९]

निक्षेप्तुकामः—नि + क्षिप् + तुम् + काम। 'तुं कामनसोरपि' इस नियम से 'तुम्' के मकार का लोप हो जाता है।

क्रम = कार्य। व्यपाश्रयणा = वि + अप + आ + श्रि + युच् + टाप्, प्रार्थना।

(१०) सुखमिति। अन्वयः—अर्थः सुखं दातुं भवेत्। प्राणाः सुखं दातुं (भवेयुः)। तपः सुखं दातुं भवेत्। अन्यत् सर्वं सुखं भवेत्। न्यासस्य रक्षणं दुःखम्।

शब्दार्थ—न्यास = धरोहर, थाती।

विशेष—अनुष्टुप् वृत्तम्।

अवसितम् = समाप्त। अव + सो + क्त। विश्वासस्थानम् = विश्वासहेतु।

(११) पद्मावतीति। अन्वयः—यैः प्रथमं विपत्तिः प्रदिष्टा अथ (तैः) पद्मावती नरपतेः महिषी भवित्री दृष्टा। तत्प्रत्ययात् इदं कृतम्। विधिः सुपरीक्षितानि सिद्धिवाक्यानि उत्क्रम्य नहि गच्छति॥

शब्दार्थ—भवित्री—(भू + तृच् + ङीप्) कालान्तर में होनेवाली। प्रत्यय = विश्वास। उत्क्रम्य = [उत् + क्रम् + क्त्वा (= ल्यप्)], लाँघकर।

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

समास—तत्प्रत्ययात्=तेषु प्रत्ययः (स० तत्पु०) तस्मात् सिद्धवाक्यानि=सिद्धानां वाक्यं सिद्धवाक्यम् (ष० तत्पु०), तानि।

विशेष—वसन्ततिलका वृत्तम्। इस पद्य में आदेशिकों के कथन की दैव द्वारा भी अनतिक्रमणीयता का निर्देश किया गया है। [११]

ततः प्रविशतिब्रह्मचारी—यौगन्धरायण और वासवदत्ता के लावाणक से चले आने के बाद उदयन की दशा का वर्णन ब्रह्मचारी द्वारा कराना महाकवि भास के कलावैशिष्ट्य का योग्यतम परिचायक है। अतीत और वर्त्तमान का भविष्य के साथ सम्बन्ध जोड़ने में भासकवि अद्वितीय हैं।

(१२) विस्रब्धमिति। अन्वयः—हरिणाः देशागतप्रत्ययाः अचकिताः विस्रब्धं चरन्ति। सर्वे वृक्षाः पुष्पफलैः समृद्धविटपाः दयारक्षिताः। कपिलानि गोकुलधनानि भूयिष्ठम्। दिशः अक्षेत्रवत्यः। इदं तपोवनम् (इति) निस्सन्दिग्धम्। हि अयं धूमः बह्वाश्रयः।

शब्दार्थ—देश=तपोवन। अचकित=निर्भय। समृद्ध=भरी हुई। विटप=शाखा। गोकुलधन=सम्पत्ति-रूपी गो-समूह। भूयिष्ठम्=बहुत। अक्षेत्रवत्यः क्षेत्र (खेत)-रहित। बह्वाश्रय—कई स्थानों से निर्गत।

समास—देशागतप्रत्ययाः—देशेन (=तपोवनेन) आगत प्रत्ययः येषां (बहु०) ते।

अचकिताः=न चकिताः। (नञ् तत्पु०)। पुष्पफलैः—पुष्पाणि च फलानि च (इतरेतरद्वन्द्व) पुष्पफलानि तैः। समृद्धविटपाः=समृद्धाः विटपाः येषां (बहु०) ते। दयारक्षिताः—दयया रक्षिताः (तृ० तत्पु०)। गोकुलधनानि—गवां कुलम् (ष० तत्पु०)=गोकुलम्। गोकुलानि धनानि इव (उपमितकर्मधारय)। अक्षेत्रवत्यः—न क्षेत्रवत्यः (नञ् तत्पु०) बह्वाश्रयः—बहूनि (स्थानानि) आश्रयः यस्य (बहु०) सः।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

विशेष—शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम्। भास की सरल शैली का उत्तम उदाहरण है।

[१२]

अभ्यवपत्तुकामः—बचाने का इच्छुक। अनुक्रोशत्व = दयाभाव।

(१३) नैवेति। अन्वयः—इदानीं तादृशाः चक्रवाकाः नैव। स्त्रीविशेषैः वियुक्ताः अन्ये अपि नैव। भर्त्ता यां तथा वेत्ति सा स्त्री धन्या। हि भर्त्तृस्नेहात् सा दग्धा अपि अदग्धा।

शब्दार्थ—चक्रवाक = चकवा।

समास—स्त्रीविशेषैः = स्त्रीषु विशेषाः = स्त्रीविशेषाः, (निर्धारणे सप्तमी), अथवा स्त्रीणां विशेषाः (निर्धारणे षष्ठी), स्त्रीविशेषाः तैः स्त्रीविशेषैः।

भर्त्तृस्नेहात् = भर्त्तुः स्नेहः (ष० तत्पु०) भर्त्तृस्नेहः तस्मात्।

विशेष—शालिनी वृत्तम्।

[१३]

पर्यवस्थापयितुम्—होश में लाने के लिए। परि + अव + स्था + णिच् + तुम्।

(१४) अनाहारे इति। अन्वयः—(सः हि) अनाहारे तुल्यः प्रततरुदितक्षामवदनः शरीरे नृपतिसमदुःखं संस्कारं परिवहन् दिवा वा रात्रौ वा यत्नैः नरपतिं परिचरति, नृपः सद्यः प्राणान् त्यजति यदि तस्य अपि उपरमः।

शब्दार्थ—प्रतत = सतत, निरन्तर। क्षाम = क्षीण। संस्कार = वेषभूषा। परिचरति = सेवा करता है। सद्यः = शीघ्र। उपरमः = मृत्यु।

समास—अनाहारः = न आहारः (नञ् तत्पु०) तस्मिन्। प्रततरुदितक्षामवदनः—प्रततं (यथा स्यात्तथा) रुदितेन क्षामं वदनं यस्य (बहु०) सः। नृपतिसमदुःखम्—नृपतिना समं दुःखं यस्मिन् (बहु०) तत्।

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

विशेष—शिखरिणी वृत्तम्। क्षाम = क्षै + क्त। इस पद्य से रुमण्वान् के बुद्धि-वैभव का पर्याप्त परिचय मिलता है। [१४]

(१५) सविश्रम इति। अन्वयः—हि अयं भारः सविश्रमः, तस्य तु श्रमः प्रसक्तः। हि यत्र नराधिपः अधीनः तस्मिन् सर्वम् अधीनम्।

शब्दार्थ—सविश्रम = सान्त, जिसका अन्त अथवा विराम हो सके। प्रसक्त = निरन्तर, जिसका विराम न हो।

समास—सविश्रमः = विश्रमेण सह वर्त्तते इति (बहु०) सः। नराधिपः = नराणाम् अधिपः (ष० तत्पु०)।

विशेष—अनुष्टुब् वृत्तम्। इस पद्य में यौगन्धरायण ने अपनी अपेक्षा रुमण्वान् की अधिक प्रशंसा की है। [१५

(१६) खगा इति। अन्वयः—खगाः वासोपेताः, मुनिजनः सलिलम् अवगाढः। प्रदीप्तः अग्निः भाति। धूमः मुनिवनं प्रविचरति। अपि च असौ दूरात् परिभ्रष्टः रविः सङ्क्षिप्तकिरणः रथं व्यावर्त्य शनैः अस्तशिखरं प्रविशति।

शब्दार्थ—खग = पक्षी। अवगाढ = स्नात। भाति = मालूम देती है। प्रदीप्त = प्रज्वलित। प्रविचरति = व्याप रहा है। परिभ्रष्ट = गिरा हुआ। सङ्क्षिप्तकिरणः = किरणों को समेटे हुए। व्यावर्त्य = लौटाकर।

समास—वासोपेताः = वासम् उपेताः (द्वि० तत्पु०)। मुनिवनम् = मुनीनां वनम् (ष० तत्पु०) सङ्क्षिप्तकिरणः = संक्षिप्ताः किरणाः येन (बहु०) सः। अस्तशिखरम् = अस्तस्य (अस्ताचलस्य) शिखरम् (ष० तत्पु०)।

विशेष—शिखरिणी वृत्तम्। इस पद्य में सूर्यास्त होने की वेला का बहुत सुन्दर, स्वाभाविक चित्र खींचा गया है।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

द्वितीय अंक

शब्दार्थ—माधवीलता = वासन्तीलता। मण्डप = कुंज। उत्कृत = ऊपर किये हुए। कर्णचूलिक = कर्णकुण्डल। स्वेद = पसीना। राग = ललाई। निर्वर्त्यताम् = व्यतीत करो। अपहसितुम् = हँसी उड़ाने को। निध्यायसि = सोच रही हो। तूष्णीका = चुप। निर्वृत्त = सम्पन्न। सानुक्रोश = दयालु। समुदाचार = शिष्टाचार। प्रतीष्ट = स्वीकृत। पर्यवस्थान = धीरता। कौतुक = विवाह।

तृतीय अंक

शब्दार्थ—संकुल = परिपूर्ण। चतुश्शाल = चौसाल। नीहार = कुहरा। प्रतिहत = अभिभूत। अमण्डितभद्रक = बिना अलंकृत किये भी सुन्दर। सङ्कीर्त्तन = प्रशंसा।

चतुर्थ अंक

शब्दार्थ—आवर्त्त = भँवर। अनप्सरस्संवास = अप्सराओं के सहवास से रहित। उत्तरकुरु = देवभूमि, स्वर्ग। प्रच्छदन = गद्दा। वातशोणित = वातरक्त का रोग। आमय = रोग। परिभूत = ग्रस्त। कल्यवर्त्त = प्रातःभोजन।

अक्षिपरिवर्त्त—आँखों का उलट-पुलट होना। कुक्षिपरिवर्त्त—पेट का उलट-पुलट होना। प्रवाल—मूँगा। लम्बक—माला। आचित = व्याप्त। दक्षिणता = शिष्टाचरण, अनुकूलता। प्रचित = अवचित, जिसे चुन लिया हो। बन्धुजीव—पुष्प का नाम।

(१) **कामेनेति**। **अन्वयः**—तदा उज्जयिनीं गते अवन्तिराजतनयां स्वैरं दृष्ट्वा कामपि अवस्थां गते मयि कामेन पञ्च इषवः पातिताः। तैः अद्यापि हृदयं सशल्यम् एव। भूयः च वयं विद्धाः। यदा मदनः पञ्चेषुः, अयं षष्ठः शरः कथं पातितः?

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

शब्दार्थ—अवन्तिराजतनया = मालवराजकुमारी वासवदत्ता। स्वैरं = स्वेच्छापूर्वक। काम् = अनिर्वचनीय। इषु = बाण। सशल्य = घाव से जनित, पीड़ा से युक्त।

समास—अवन्तिराजतनयाम् = अवन्तीनां राजा = अवन्तिराजः (ष० तत्पु०), अवन्तिराजस्य तनया (ष० तत्पु०) ताम्। सशल्यम्—शल्येन सह वर्त्तते इति तत् (बहु०)। पञ्चेषुः—पञ्च इषवो यस्य (बहु०) सः।

विशेष—शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम्।

पञ्चेषुः—कामदेव के पाँच पुष्प-बाण हैं। जैसे—

अरविन्दमशोकं च चूतं च नवमल्लिका।
नीलोत्पलं च पञ्चैते पञ्चबाणस्य सायकाः॥

अथवा

उन्मादनस्तापनश्च शोषणः स्तम्भनस्तथा।
सम्मोहनश्च कामस्य पञ्चबाणाः प्रकीर्तिताः॥ [१]

शब्दार्थ—असन = वृक्षविशेष। सञ्चित = व्याप्त। अवगुण्ठित = आच्छादित। सप्तच्छद = विशेष प्रकार का वृक्ष, जिसकी प्रत्येक शाखा पर सात ही पुष्प होते हैं। आलिखित = चित्रित।

प्रसारित = फैलाई हुई। समाहितम् = व्यवस्थित रूप से।

(२) ऋज्वायतामिति। अन्वयः—ऋज्वायतां च विरलां च नतोन्नतां च निवर्त्तनेषु सप्तर्षिवंशकुटिलां च निर्मुच्यमानभुजगोदरनिर्मलस्य अम्बरतलस्य विभज्यमानां सीमाम् इव एनां पश्यामि॥

शब्दार्थ—ऋजु = सीधी। आयत = दीर्घ। नत = नीची। उन्नत = ऊँची। निवर्त्तन = मोड़। निर्मुच्यमान = कंचुक से रहित। भुजगोदर = साँप का पेट। विभज्यमानाम् = विभाजित की जा रही।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

समास—ऋज्वायताम्– ऋजुः च आयता चेति ऋज्वायता (कर्म०) ताम्। नतोन्नताम्– नता च उन्नता चेति (कर्म०) ताम्। सप्तर्षिवंश कुटिलाम्—सप्त ऋषयः सप्तर्षयः, सप्तर्षीणां वंश इव कुटिला (उपमित-कर्म०) ताम्। निर्मुच्यमानभुजगोदरनिर्मलस्य—भुजगस्य उदरम् = भुजगोदरम् (ष० तत्पु०), निर्मुच्यमानं भुजगोदरम् (कर्म०) निर्मुच्यमान-भुजगोदरम्। निर्मुच्यमानभुजगोदरमिव निर्मलम् (उपमित कर्म०) तस्य।

विशेष—वसन्ततिलका वृत्तम्। केंचुली छोड़ते समय साँप के स्वच्छ उदर से गगन-तल की तुलना अति सुन्दर है। [२]

अवलम्बलता = आश्रयलता। अवधूय = हिलाकर।

(३) मधुमदेति। अन्वयः— मधुमदकलाः मदनार्त्ताभिः प्रियाभिः उपगूढाः मधुकराः पादन्यासविषण्णाः वयम् इव कान्तावियुक्ताः स्युः॥

शब्दार्थ—मधुमद—पुष्परसपान से जनित मस्ती। कल = अव्यक्त मधुर कूजन। आर्त्त—पीड़ित। उपगूढ़ = आलिङ्गित। मधुकर = भ्रमर। विषण्ण = शोकाकुल।

समास—मधुमदकलाः = मधुनः मदः (ष० तत्पु०) मधुमदः; मधु-मदेन कलाः (तृ० तत्पु०)। मदनार्त्ताभिः = मदनेन आर्त्ता (तृ० तत्पु०) मदनार्त्ता ताभिः। पादन्यासविषण्णाः—पादयोः न्यासः = पादन्यासः (ष० तत्पु०) पादन्यासेन विषण्णाः (तृ० तत्पु०)।

विशेष—आर्या वृत्तम्। विरह की दुस्सह दशा का वर्णन प्रस्तुत किया गया है। [३]

यहाँ 'उभौ उपविशतः' के बाद स्वप्नवासवदत्तम् के कुछ संस्करणों में कुछ अधिक पाठ मिलता है; जैसे—

राजा—(अवलोक्य)

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

पादाक्रान्तानि पुष्पाणि सोष्म चेदं शिलातलम् ।
नूनं काचिदिहासीना मां दृष्ट्वा सहसा गता ॥

इस अंश का हिन्दी-अनुवाद इस प्रकार होगा—"राजा—(देखकर) पुष्प पाँवों तले दब गये हैं। यह शिलातल भी गर्म है। निश्चित ही कोई यहाँ बैठी हुई मुझे देखकर सहसा चली गई।"

(४) पद्मावतीति । अन्वयः—यद्यपि पद्मावती रूपशील-माधुर्यैः मम बहुमता, वासवदत्ताबद्धं मे मनः तु तावत् न हरति ।

शब्दार्थ—बहुमता = आदरणीय । बद्ध = आकृष्ट ।

समास—रूपं च शीलं च माधुर्यं च इति रूपशीलमाधुर्याणि (द्वन्द्व) तैः । वासवदत्ताबद्धम् = वासवदत्तायांबद्धम् (स० तत्पु०) ।

विशेष—आर्या वृत्तम् । [४]

(५) अनेनेति । अन्वयः—अनेन परिहासेन मे मनः त्वया व्याक्षिप्तम् । ततः इयं वाणी पूर्वाभ्यासेन तथा एवं निस्सृता ।

शब्दार्थ—परिहास = नर्मभाषित । व्याक्षिप्त—अस्थिर । पूर्वाभ्यास—पूर्वकालिक अभ्यास ।

समास—पूर्वाभ्यासेन—पूर्वः अभ्यासः = पूर्वाभ्यासः (कर्म०) तेन ।

विशेष—अनुष्टुब् वृत्तम् । [५]

(६) दुःखं त्यक्तुम् इति । अन्वयः—बद्धमूलः अनुरागः त्यक्तुं दुःखम् । स्मृत्वा स्मृत्वा दुःखं नवत्वं याति । एषा तु यात्रा यद् इह बाष्पं विमुच्य प्राप्तानृण्या बुद्धिः प्रसादं याति ॥

शब्दार्थ—बद्धमूलः—चिरपरिचित होने से दृढ । अनुराग—प्रेम । बाष्पं विमुच्य = आँसू बहाकर । प्राप्तानृण्या—उऋण होकर । प्रसाद—स्वच्छता, निर्मलता ।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

समास—बद्धमूलः=बद्धं मूलं येन (बहु०) सः। प्राप्तानृण्या—प्राप्तम् आनृण्यं यया (बहु०) सा।

विशेष—शालिनी वृत्तम्। [६]

(७) **शरच्छशाङ्केति**। **अन्वयः**—भामिनि ! शरच्छशाङ्कगौरेण वाताविद्धेन काशपुष्पलवेन इदं मम मुखं साश्रुपातम्॥

शब्दार्थ—भामिनी=सुन्दरी। आविद्ध=प्रेरित। लव=कण।

समास—शरच्छशाङ्कगौरेण—शरत्कालीनः शशाङ्कः (मध्यमपदलोपी कर्म०) शरच्छशाङ्कः, शरच्छशाङ्कवत् गौरः (उपमित कर्म०) तेन। वाताविद्धेन—वातेन आविद्धः (तृ० तत्पु०) वाताविद्धः, तेन। काशपुष्पलवेन—काशा एव पुष्पाणि काशपुष्पाणि (कर्म०), काशपुष्पाणां लवः (ष० तत्पु०) तेन। साश्रुपातम्—अश्रूणां पातः (ष० तत्पु०) अश्रुपातः, अश्रुपातेन सह वर्त्तते इति (बहु०) तत्।

विशेष—अनुष्टुब् वृत्तम्। [७]

(८) **इयमिति**। **अन्वयः**—इयं बाला नवोद्वाहा, सत्यं श्रुत्वा व्यथां व्रजेत्। इयं कामं धीरस्वभावा। स्त्रीस्वभावः तु कातरः।

शब्दार्थ—उद्वाह=विवाह।

समास—नवोद्वाहा=नवः उद्वाहः यस्याः (बहु०), सा। धीरस्वभावा=धीरः स्वभावो यस्याः (बहु०) सा। स्त्रीस्वभावः=स्त्रीणां स्वभावः (ष० तत्पु०) स्त्रीस्वभावः।

विशेष—अनुष्टुब् वृत्तम्। [८]

(९) **गुणानामिति**। **अन्वयः**—विशालानां गुणानां वा सत्काराणां च लोके नित्यशः कर्त्तारः सुलभाः, विज्ञातारः तु दुर्लभाः।

शब्दार्थ—विज्ञातारः—जानकार।

विशेष—अनुष्टुब् वृत्तम्। [९]

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

पञ्चम अङ्क

(१) श्लाघ्यामिति। अन्वयः—कालक्रमेण पुनरागतदारभारः लावाणके हुतवहेन हृताङ्गयष्टिं श्लाघ्याम् अवन्तिनृपतेः सदृशीं तनूजां तां हिमहतां पद्मिनीम् इव चिन्तयामि।

शब्दार्थ—कालक्रम = समयगति। हुतवह = अग्नि। अङ्गयष्टि = सुन्दर अंग। हत = खण्डित।

समास—कालक्रमेण = कालस्य क्रमः (ष० तत्पु०) तेन। पुनरागतदारभारः = पुनः आगतः दाराणां भारः यस्य (बहु०) सः। हृताङ्गयष्टिः = हृता यङ्गयष्टिः (अङ्गानि अष्टिरिव) यस्याः (बहु०) सा। हिमहताम् = हिमेन हता (तृ० तत्पु०) ताम्।

विशेष—वसन्ततिलका वृत्तम्। [१]

(२) रूपश्रियेति। अन्वयः—रूपश्रिया समुदितां च गुणतः युक्तां प्रियां लब्ध्वा पूर्वाभिघातसरुजः अपि मम शोकः अद्यतु मन्दः इव। अनुभूतदुःखः पद्मावतीम् अपि तथैव समर्थयामि।

शब्दार्थ—समुदित = युक्त। अभिघात = चोट। सरुज = पीडित। समर्थयामि = समझता हूँ।

समास—रूपश्रिया = रूपस्य श्रीः (ष० तत्पु०) रूपश्रीः, तया। पूर्वाभिघातसरुजः—पूर्वः अभिघातः (कर्म०) = पूर्वाभिघातः, पूर्वाभिघातेन सरुक् (तृ० तत्पु०) तस्य। अनुभूत दुःखः—अनुभूतं दुःखं येन (तृ० तत्पु०) सः।

विशेष—वसन्ततिलका वृत्तम्।

'पूर्वाभिघात' से वासवदत्ता के विनाश का तात्पर्य है [२]

काकोदर = साँप; क = ईषत्; अकति = गच्छति; अक कुटिलायां गतौ। क + अकः = काकः। काकस्य उदरमिव उदरं यस्य (बहु०) सः। वैधेय = मूर्ख।

gannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

(३) ऋज्वायतामिति । अन्वयः—मूर्ख ! ऋज्वायतां क्षितौ भ्रष्टां मुखतोरणलोलमालां त्वं सर्पम् अवगच्छसि । या निशि मन्दानिलेन परिवर्त्तमाना भुजगस्य विचेष्टितानि किञ्चित् करोति ।

शब्दार्थ—ऋजु=सरल । आयत=दीर्घ । भ्रष्ट=पतित । मुखतोरण=गृह का बहिर्द्वार । लोल=चञ्चल । अवगच्छसि=समझ रहे हो । परिवर्त्तमाना=उलट-पुलट होती हुई । चेष्टित=गति ।

समास—ऋज्वायताम्=ऋजुः च असौ आयता चेति (कर्म०) ऋज्वायता, ताम् । मुखतोरणलोलमालाम्=मुखं तोरणम् (कर्म०) मुखतोरणम् । लोला माला (कर्म०), मुखतोरणे लोलमाला (स० तत्पु०) मुखतोरणलोलमाला, ताम् । मन्दानिलेन=मन्दः अनिलः (कर्म०) मन्दानिलः, तेन ।

विशेष—वसन्ततिलका वृत्तम् । [३]

(४) शय्येति । अन्वयः—शय्या न अवनता, तथाऽऽस्तृतसमा, न व्याकुलप्रच्छदा । अमलं शिरोपधानं शीर्षाभिघातौषधैः नहि क्लिष्टम् । रोगे दृष्टिविलोभनं जनयितुं काचित् शोभा न कृता । प्राणी रुजा शयनं प्राप्य पुनः स्वयं शीघ्रं न मुञ्चति ।

शब्दार्थ—अवनत=दबी हुई । प्रच्छद=चद्दर । व्याकुल=सिकुड़ी हुई । उपधान=तकिया । उपघात=पीड़ा । दृष्टिविलोभन=नेत्रविनोद । रुज्=रोग ।

समास—आस्तृतसमा=आस्तृता चासौ समा च (कर्म०) । व्याकुलप्रच्छदा=व्याकुलः प्रच्छदः यस्यां (बहु०) सा । शिरोपधानम्=शिरसः उपधानम् (ष० तत्पु०) । शीर्षाभिघातौषधैः=शीर्षस्य अभिघातः (ष० तत्पु०) शीर्षाभिघातः, शीर्षाभिघातस्य औषधानि (ष० तत्पु०), तैः । दृष्टिविलोभनम्=दृष्टेः विलोभनम् (ष० तत्पु०) ।

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nepa

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

विशेष—शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम् ।

[४]

(५) स्मरामीति । अन्वयः—प्रस्थानकाले स्वजनं स्मरन्त्याः नयनान्तलग्नं प्रवृत्तं बाष्पं स्नेहात् मम एव उरसि पातयन्त्याः अवन्त्याधिपतेः सुतायाः स्मरामि ।

शब्दार्थ—स्वजन = आत्मीय बन्धुजन । नयनान्त = नेत्रकोण । उरस् = वक्षःस्थल ।

समास—प्रस्थानकाले = प्रस्थानस्य कालः (ष० तत्पु०) तस्मिन् स्वजनम् = स्वः जनः (कर्म०) तम् । नयनान्तलग्नम्—नयनयोः अन्तौ = नयनान्तौ (ष० तत्पु०), नयनान्तयोः लग्नम् (स० तत्पु०) । अवन्त्याधिपतेः—अवन्त्याः आ (समन्तात्) अधिपतिः = अवन्त्याधिपतिः (ष० तत्पु०), तस्य ।

विशेष—उपजातिवृत्तम् । 'अवन्त्याधिपतेः'—इस वाक्यांश में कुछ विद्वानों ने समास नहीं माना है । इनके मत में 'अवन्त्या' तृतीया एकवचन है । 'हेतौ तृतीया' मानकर 'अवन्त्याधिपतेः' का अर्थ होगा—'अवन्ति का शासक होने के कारण स्वामी ।'

किन्तु 'अवन्त्याधिपतेः' को समस्त पद अथवा 'अवन्त्या को तृतीयान्त पद मानने की कल्पना क्लिष्ट है । अतः 'अवन्त्याः' को षष्ठ्यन्त प्रयोग मानकर 'अधिपतेः' के साथ दीर्घसन्धि को आर्ष मानना ही युक्त होगा ।

[५]

बहुशः इति । अन्वयः—बहुशः अपि उपदेशेषु माम् इक्षमाणया यया स्रस्तकोणेन हस्तेन आकाशवादितं कृतम् ।

शब्दार्थ—कोण—वीणा बजाने का साधन, अर्थात् वह यन्त्र, जिसे हाथ में लेकर वीणा बजाई जाती है । आकाशवादित—शून्य में वीणा बजाना ।

gannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

समास—स्रस्तकोणेन—स्रस्तः कोणः यस्मात् (बहु०), तेन। आकाशवादितम्—आकाशे वादितम् (सप्तमी तत्पु०)।

विशेष—अनुष्टुब् वृत्तम्। [६]

(७) निष्क्रामन्निति। अन्वयः—सम्भ्रमेण निष्क्रामन् अहं द्वारपक्षेण ताडितः। ततः अयं मनोरथः भूतार्थः इति व्यक्तं न जानामि।

शब्दार्थ—सम्भ्रम=सहसा। द्वारपक्ष=द्वार का पार्श्व भाग। भूतार्थ=सत्यार्थ।

समास—द्वारपक्षेण=द्वारस्य पक्षः (ष० तत्पु०), तेन। भूतार्थः= भूतः अर्थः (कर्म०)।

विशेष—अनुष्टुब् वृत्तम्। [७]

(८) शय्यायामिति। अन्वयः—सखे! शय्यायाम् अवसुप्त मां बोधयित्वा गता। 'दग्धा' इति पूर्वं ब्रुवता रुमण्वता वञ्चितः अस्मि।

शब्दार्थ—अवसुप्त=सुप्त। रुमण्वत्=उदयन के अमात्य रुमण्वान् का नाम।

विशेष—अनुष्टुब् वृत्तम्। [८]

(९) यदीति। अन्वयः—यदि तावत् अयं स्वप्नः अप्रतिबोधनं धन्यम्। अथ अयं विभ्रमः वा स्यात्, विभ्रमः मे चिरं हि अस्तु।

शब्दार्थ—अप्रतिबोधन=अजागरण। विभ्रम—भ्रान्ति।

समास—अप्रतिबोधनम्=न प्रतिबोधनम् (नञ् तत्पु०)

विशेष—अनुष्टुब् वृत्तम्। [९]

Jagannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

(१०) स्वप्नस्येति । अन्वयः—स्वप्नस्य अन्ते विबुद्धेन मया चारित्रम् अपि रक्षन्त्याः नेत्रविप्रोषिताञ्जनं दीर्घालकं मुखं दृष्टम् ।

शब्दार्थ—विबुद्ध—जागृत । चारित्र=चरित्र । विप्रोषित=निर्गत । अलक=केश ।

समास—नेत्रविप्रोषिताञ्जनम्=नेत्राभ्यां विप्रोषितम् अञ्जनं यस्मिन् (बहु०) तत् । दीर्घालकम्—दीर्घाः अलकाः यस्मिन् (बहु०) तत् ।

विशेष—अनुष्टुब् वृत्तम् । [१०]

(११) योऽयमिति । अन्वयः—सन्त्रस्तया तया देव्या योऽयं बाहुः निपीडितः स्वप्ने अपि उत्पन्नसंस्पर्शः रोमहर्षं न मुञ्चति ।

शब्दार्थ—निपीडितः=धीरे से पकड़ा । रोमहर्ष=रोमाञ्च ।

समास—उत्पन्नसंस्पर्शः=उत्पन्नः संस्पर्शः यस्य (बहु०) सः । रोमहर्षम्=रोम्णां हर्षम् (ष० तत्पु०) ।

विशेष—अनुष्टुब् वृत्तम् । [११]

(१२) भिन्ना इति । अन्वयः—ते रिपवः भिन्नाः, भवद्गुणरताः पौराः समाश्वासिताः । भवत्प्रयाणसमये या अपि पार्ष्णी तस्याः विधानं कृतम् । यद् यद् अरिप्रमाथजननं साध्यं तत् तत् मया अनुष्ठितम् । अपि च बलैः त्रिपथगा नदी तीर्णा । वत्साः च तव हस्ते ।

शब्दार्थ—भिन्नाः=भेदनीति से अलग-अलग कर दिये गये । समाश्वासिताः=धीरज बँधाये गये । प्रयाण=युद्धयात्रा । पार्ष्णी=सेना का पृष्ठभाग । विधान=रक्षा की व्यवस्था । अरिप्रमाथ=शत्रु-संहार । जनन=साधक । साध्य=उपाय । बल=सेना । त्रिपथगा=गंगा ।

समास—भवद्गुणरताः=भवतः गुणेषु रताः (स० तत्पु०) । भवत्प्रयाणसमये—भवतः प्रयाणम् (ष० तत्पु०); भवत्प्रयाणस्य

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

समयः (ष० तत्पु०) तस्मिन्। अरिप्रमाथजननम्—अरेः प्रमाथः (ष० तत्पु०) अरिप्रमाथः, अरिप्रमाथस्य जननम् (ष० तत्पु०)। त्रिपथगा—त्रयाणां पथां समाहारः (द्विगु) त्रिपथम्। त्रिपथेन गच्छतीति (उपपदसमासः); अथवा त्र्यवयवः पन्थाः त्रिपथः (मध्यमपदलोपी कर्मधारय); त्रिपथेन गच्छती ति सा।

विशेष—शार्दूलविक्रीडितम्। [१२]

(१३) उपेत्येति। अन्वयः—नागेन्द्रतुरङ्गतीर्णे विकीर्णबाणोग्रतरङ्गभङ्गे महार्णवाभे युधि दारुणकर्मदक्षम् आरुणिम् उपेत्य नाशयामि।

शब्दार्थ दारुण कर्म = भयानक कर्म अर्थात् युद्ध में नरसंहाररूपी कर्म। आरुणि = उदयन के शत्रु का नाम। नागेन्द्र = गजराज। विकीर्ण = फेंके गये। भङ्ग = खंड। आभ = सदृश।

समास—दारुणकर्मदक्षम् = दारुणानि कर्माणि (कर्म०) तेषु दक्षः (स० तत्पु०), तम्। नागेन्द्रतुरङ्गतीर्णे—नागेषु इन्द्राः = नागेन्द्राः (स० तत्पु०), अथवा नागानाम् इन्द्राः (ष० तत्पु०); नागेन्द्राश्च तुरङ्गाश्चेति नागेन्द्रतुरङ्गाः (इतरेतरद्वन्द्व) अथवा नागेन्द्राणां तुरङ्गाणां च समाहारः नागेन्द्रतुरङ्गम्; (समाहारद्वन्द्व) नागेन्द्रतुरङ्गैः अथवा नागेन्द्रतुरङ्गेण तीर्णः (तृ० तत्पु०) तस्मिन्। यद्वा—नागेन्द्रतुरङ्गाः तीर्णाः यस्मिन् तस्मिन्।

विकीर्णबाणोग्रतरङ्गभङ्गे—उग्राः तरङ्गाः (कर्म०); उग्रतरङ्गाणां भङ्गाः (ष० तत्पु०); बाणाः उग्रतरङ्गभङ्गाः इव (उपमितकर्मधारय)। विकीर्णाः बाणोग्रतरङ्गभङ्गाः यस्मिन् (बहु०)।

महार्णवाभे—महान् अर्णवः = महार्णवः (कर्म०); महार्णवस्य आभा इव आभा यस्य (बहु०) सः, तस्मिन्।

विशेष—उपेन्द्रवज्रावृत्तम्। रणभूमि की समुद्र से तुलना अतीव सुन्दर है। [१३]

gannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Ne

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

षष्ठ अङ्क

विष्कम्भक—भूत और भविष्य की छोटी-छोटी घटनाओं को सूचित करने का यह एक प्रकार है। यदि एक अथवा दो मध्यम पात्र इन घटनाओं को सूचित करते हैं तो यह शुद्ध विष्कम्भक होता है। किन्तु जब नीच और मध्यम पात्रों द्वारा ये घटनाएँ सूचित होती हैं तब यह मिश्रविष्कम्भक होता है। प्रस्तुत विष्कम्भक में कांचुकीय मध्यम पात्र है और प्रतीहारी नीच पात्र है। संस्कृत और प्राकृत भाषाओं का भी मिश्रण हुआ है, अतः यह मिश्रविष्कम्भक है। लक्षण इस प्रकार है—

वृत्तवर्तिष्यमाणानां कथांशानां निदर्शकः।
संक्षिप्तास्तु विष्कम्भो मध्यपात्रप्रयोजितः॥
एकानेककृतः शुद्धः संकीर्णो नीचमध्यमैः॥

(१) श्रुतीति। अन्वयः—श्रुतिसुखनिनदे! देव्याः स्तनयुगले जघनस्थले च सुप्ता त्वं विहगगणरजोविकीर्णदण्डा कथं नु प्रतिभयम् अरण्यवासम् अध्युषिता असि।

शब्दार्थ—श्रुति = कान। जघनस्थल = सुन्दर जाँघें; स्थल शब्द प्रशंसावाचक है। विहग = पक्षी। रजस् = धूल। विकीर्ण = व्याप्त। प्रतिभय = भयङ्कर। अध्युषिता = रही हो।

समास—श्रुतिसुखनिनदे = श्रुतिभ्यां सुखः (चतु० तत्पु०), श्रुतिसुखः निनदो यस्याः (बहु०) सा तत्सम्बुद्धौ। स्तनयुगले = स्तनयोः युगलम् (ष० तत्पु०) स्तनयुगलम्, तस्मिन्। विहगगणरजोविकीर्णदण्डा—विहगानां गणः (ष० तत्पु०) विहगगणः; विहगगणस्य रजः (ष० तत्पु०) विहगगणरजः, विहगगणरजसा विकीर्णः दण्डः यस्याः (बहु०) सा। प्रतिभयम्—प्रतिगतं भयम्, (प्रादितत्पु०)। अरण्यवासम्—अरण्ये वासः (स० तत्पु०) अरण्यवासः तम्।

विशेष—पुष्पिताग्रा वृत्तम्। [१]

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

(२) श्रोणीति । अन्वयः—श्रोणीसमुद्वहनपार्श्वनिपीडितान, खेदस्तनान्तर सुखानि उपगूहितानि विरहे मां च उद्दिश्य परिदेवितानि वाद्यान्तरेषु सस्मितानि कथितानि च (न स्मरसि)।

शब्दार्थ—श्रोणी=गोद, जाँघें । समुद्वहन=उठाना । अन्तर = बीच । परिदेवित=विलाप ।

समास—श्रोणी०—श्रोण्यां समुद्वहनानि (स० तत्पु०), पार्श्वेन निपीडितानि (तृ० तत्पु०); श्रोणीसमुद्वहनानि च पार्श्वपीडितानि च (द्वन्द्व)। खेदस्तनान्तरसुखानि—खेदे स्तनान्तरे सुखानि (स० तत्पु०) । वाद्यान्तरेषु—अन्यत् वाद्यं वाद्यान्तरम् (नित्यसमास) तेषु ।

विशेष—वसन्ततिलका वृत्तम् । [२]

(३) चिरप्रसुप्त इति । अन्वयः—चरप्रसुप्तः ने कामः वीणय प्रतिबोधितः । यस्याः घोषवती प्रिया तां देवीं तु न पश्यामि ।

शब्दार्थ—प्रतिबोधितः = जगा दिया ।

समास—चिरप्रसुप्तः = चिरं प्रसुप्तः (द्वि० तत्पु०) ।

विशेष—अनुष्टुब् वृत्तम् । [३]

(४) किं वक्ष्यतीति । अन्वयः—किं वक्ष्यति इति मे हृदयं परिशङ्कितम्, सा कन्या मया अपहृता, अपि च न रक्षिता । चलैः भाग्यैः महदवाप्तगुणोपघातः पितुः जनितरोषः पुत्रः इव भीतः अस्मि ।

शब्दार्थ—अवाप्त = प्राप्त । गुणोपघात=दोष, अपराध ।

समास—महदवाप्तगुणोपघातः=गुणानाम् उपघातः (ष० तत्पु०); महत् अवाप्तः (सुप्सुपासमास) महदवाप्तः महदवाप्तः गुणोपघातः येन (बहु०) सः । जनितरोषः—जनितः रोषः येन (बहु०) सः ।

विशेष – वसन्ततिलका वृत्तम् । [४]

gannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Ne

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

(५) सम्बन्धीति । अन्वयः—इदं सम्बन्धिराज्यम् एत्य महान् प्रहर्षः । नृपसुतानिधनं श्रुत्वा विषादः । दैव ! यदि परैः अपहृतं राज्यं (प्राप्तं भवेत्) देव्याः कुशलं च (भवेत्), भवतां किं नाम कृतं न स्यात् ।

समास—सम्बन्धिराज्यम्=सम्बन्धिनः राज्यम् (ष० तत्पु०), नृपसुतानिधनम्—नृपस्य सुता (ष० तत्पु०) नृपसुता, नृपसुतायाः निधनम् (ष० तत्पु०) ।

विशेष—वसन्ततिलका वृत्तम् । [५]

(६) पृथिव्यामिति । अन्वयः—पृथिव्यां राजवंश्यानाम् उदयास्तमयप्रभुः मया काङ्क्षितबान्धवः स राजा अपि कुशली ?

समास—राजवंश्यानाम्—राज्ञः वंश्याः=राजवंश्याः तेषाम् । उदयास्तमयप्रभुः=उदयश्च अस्तमयश्च तौ उदयास्तमयौ (द्वन्द्व) तयोः प्रभुः (ष० तत्पु०) । काङ्क्षितबान्धवः=काङ्क्षितं बान्धवं येन (बहु०) सः ।

विशेष—अनुष्टुब् वृत्तम् । [६]

(७) कातरा इति । अन्वयः—ये कातराः अपि वा अशक्ताः तेषु उत्साहः न जायते । प्रायेण हि सोत्साहैः एव नरेन्द्रश्रीः भुज्यते ।

समास—अशक्ताः =न शक्ताः (नञ् तत्पु०) । सोत्साहैः—उत्साहेन सह वर्त्तन्ते इति सोत्साहाः (बहु०) तैः । नरेन्द्रश्रीः=नराणाम् इन्द्रः (ष० तत्पु०), नरेन्द्रस्य श्रीः (ष० तत्पु०) ।

विशेष—अनुष्टुब् वृत्तम् । 'साहसे श्रीः प्रतिवसति ।' [७]

(८) अहमिति । अन्वयः —पूर्वं तावत् अहम् अवजितः, सुतैः सह लालितः, मया कन्या दृढम् अपहृता, भूयः च न रक्षिता । तस्याः निधनम् अपि च श्रुत्वा मयि तथैव स्वता ननु यद् उचितान् वत्सान् प्राप्तुम् अत्र नृपः हि कारणम् ।

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

शब्दार्थ —उचितान् = अर्थात् वत्सदेश का वह भू-भाग, जो शत्रु ने छीन लिया था ।

विशेष – हरिणी वृत्तम् । [८]

(९) षोडशेति । अन्वयः — ननु षोडशान्तःपुरज्येष्ठा पुण्या नगरदेवता, मम प्रवासदुःखार्त्ता माता कुशलिनी ?

समास—षोडशा० – षोडशानाम् अन्तःपुराणां ज्येष्ठा (ष० तत्पु०), नगरदेवता नगरस्य देवता (ष० तत्पु०) । प्रवासदुःखार्त्ता = प्रवासस्य दुःखं प्रवासदुःखम् (ष० तत्पु०), प्रवासदुःखेन आर्त्ता (तृ० तत्पु०) ।

विशेष—अनुष्टुब वृत्तम् । [९]

(१०) क इति । अन्वयः —मृत्युकाले कः कं रक्षितुं शक्तः ? रज्जुच्छेदे के घटं धारयन्ति ? एवं वनानां तुल्यधर्मः लोकः काले काले छिद्यते रुह्यते च ।

समास—मृत्युकाले = मृत्योः कालः (ष० तत्पु०) तस्मिन् । रज्जुच्छेदे = रज्ज्वाः छेदः (ष० तत्पु०) तस्मिन् । तुल्यधर्मः = तुल्यः धर्मः यस्य (बहु०) सः ।

विशेष—शालिनी वृत्तम् । [१०]

(११) महासेनस्येति । अन्वयः—महासेनस्य दुहिता मे प्रिया शिष्या देवी च । कथं देहान्तरेषु अपि सा मया स्मर्तुं न शक्या ?

विशेष—अनुष्टुब् वृत्तम् । [११]

(१२) वाक्यमिति । अन्वयः—राज्यलाभशतात् अपि एतत् वाक्यं प्रियतरम् यत् अपराद्धेषु अपि अस्मासु स्नेहः न विस्मृतः ।

समास—राज्य०—राज्यस्य लाभः (ष० तत्पु०) राज्यलाभः, राज्यलाभस्य शतम् (ष० तत्पु०) तस्मात् ।

विशेष—अनुष्टुब् वृत्तम् । [१२

gannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Ne

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

(१३) अस्येति । अन्वयः—अस्य स्निग्धस्य वर्णस्य दारुणा विपत्तिः कथम् । इदं च मुखमाधुर्यम् अग्निना कथं दूषितम् ?

समास—मुखमाधुर्यम् —मुखस्य माधुर्यम् (ष० तत्पु०) ।

विशेष—अनुष्टुब् वृत्तम् । [१३]

(१४) यदीति । अन्वयः—यदि विप्रस्य भगिनी व्यक्तम् अन्या भविष्यति । लोके परस्परगता रूपतुल्यता दृश्यते ।

समास—परस्परगता = परस्परं गता (द्वि० तत्पु०) । रूपतुल्यता—रूपाणां, रूपयोर्वा तुल्यता (ष० तत्पु०) ।

विशेष—अनुष्टुब् वृत्तम् । [१४]

(१५) प्रच्छाद्येति अन्वयः—नृपतेः हितार्थं राजमहिषीं प्रच्छाद्य मया इदं हितम् इति अवेक्ष्य कामं कृतम् । मम कर्मणि सिद्धे अपि मम मम हृदयम् "असौ पार्थिवः किं वक्ष्यति' इति परिशङ्कितम् ।

समास—हितार्थम् = हिताय इदम् (नित्यसमास), राजमहिषीम् — राज्ञः महिषी (ष० तत्पु०) ताम् ।

विशेष—वसन्ततिलका वृत्तम् । [१५]

(१६) भरतानामिति । अन्वयः— भरतानां कुले जातः, विनीतः, ज्ञानवान्, शुचिः, राजधर्मस्य देशिकः (असि) । तत् बलात् हन्तुं न अर्हसि ।

समास—राजधर्मस्य—राज्ञः धर्मः (ष० तत्पु०), तस्य ।

विशेष—अनुष्टुब वृत्तम् । [१६]

(१७) किन्निवति । अन्वयः—किन्नु इदं सत्यम्, स्वप्नः, सा मया भूयः दृश्यते । अनया दृष्टया अपि तदा अहम् एवम् एव वञ्चितः ।

विशेष—अनुष्टुब् वृत्तम् । [१७]

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

(१८) मिथ्योन्मादैरिति । अन्वयः—मिथ्योन्मादैः च युद्धैः च, शास्त्रदृष्टैः मन्त्रितैः च भवद्यत्नैः वय खलु मज्जमानाः समुद्धृताः ।

शब्दार्थ— उन्माद = पागलपन । मज्जमानाः = डूबते हुए ।

समास—मिथ्योन्मादैः = मिथ्या उन्मादः (सुप्सुपा समासः) मिथ्योन्मादः तैः । शास्त्रदृष्टैः = शास्त्रेषु दृष्टानि शास्त्रदृष्टानि (स० तत्पु०) तैः । भवद्यत्नः = भवतः यत्नैः (ष० तत्पु०) ।

विशेष— अनुष्टुब् वृत्तम् । [१८]

(१९) इमामिति । अन्वयः—सागरपर्यन्तां हिमवद्विन्ध्यकुण्डलाम् एकातपत्राङ्काम् इमां महीं नः राजसिंहः प्रशास्तु ।

समास—सागरपर्यन्ताम् = सागराः पर्यन्ताः यस्याः (बहु०) सा, ताम् । हिमवद्विन्ध्यकुण्डलाम् = हिमवद्विन्ध्यौ कुण्डले यस्याः (बहु०) ताम् । एकातपत्राङ्काम = एकम् आतपत्रम् एकातपत्रम् (कर्म०) एकातपत्रम् अङ्को यस्याः (बहु०) ताम् । राजसिंहः = राजा सिंह इव (उपमितकर्मधारय) ।

विशेष—अनुष्टुब् वृत्तम् । [१९]

———

gannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Ne

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Ne

CC-0. Digitized by eGangotri and MIDF- Delhi

मुद्रक—तरुण भारत प्रेस, पटना—४

agannath Bhattarai Collection. Nagarjun-7, Kathmandu, Nep

This PDF you are browsing is in a series of several scanned documents containing the personal colleciton of Jagannath Bhattarai ji from Kathmandu, Nepal.

CV:

Jagannath Bhattarai
Date of Birth: 31 December 1960
Place of Birth: Kathmandu, Nepal
Address: Nagarjun (Ramkot), Kathmandu

Educational Qualifications
Bachelor of Science (B.Sc.) – Major in Biology
Master's Degree – Sociology & Anthropology
Shastri (Ongoing) – Balmiki Vidyapeeth

Professional Experience
Government School Teacher (Madhyamik Pratham Shreni)
Taught at Secondary Level (Madhyamik)
Taught at Higher Secondary Level (Uchcha Madhyamik)
Served as Head Teacher
Led academic and administrative development
Strengthened institutional performance and student outcomes

Areas of Interest
Sanskrit Vyakaran
Spiritual & Philosophical Studies
Educational Leadership

Digitization by eGangotri Trust
Funding by MIDF, New Delhi